''लौंजाइनस के उदात्त तत्व सिद्धान्त के आधार पर निराला काव्य का अध्ययन''

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी0 फिल्0 उपाधि हेतु

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध
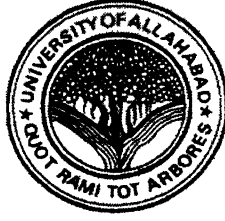
निर्देशक–

डॉ० किशोरी लाल
(पूर्व प्राध्यापक)
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध कर्ता–

प्रवेश कुमार सिंह

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

2002

घोषणा–पत्र

मैं घोषणा करता हूँ कि मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध 'लौंजाइनस के उदात्त–तत्व सिद्धान्त के आधार पर निराला काव्य का अध्ययन' विषय पर किया गया है। यह शोध मेरे स्वयं के प्रयासों का प्रतिफल है।

इस शोध–कार्य को मैंने डॉ0 किशोरीलाल जी के निर्देशन में पूर्ण किया है।

प्रवेश कुमार सिंह

(प्रवेश कुमार सिंह)

डॉ0 किशोरी लाल
(पूर्व–प्राध्यापक)
हिन्दी–विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
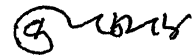
प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रवेश कुमार सिंह ने 'लौंजाइनस के उदात्त–तत्व सिद्धान्त के आधार पर निराला काव्य का अध्ययन' विषय पर यह शोध–प्रबन्ध मेरे निर्देशन में डी0 फिल्0 उपाधि हेतु प्रस्तुत किया है।

इस शोध–प्रबन्ध की विषय वस्तु पूर्णतः मौलिक एवं शोध–परक है। अतः मैं संस्तुति करता हूँ कि इस शोध–प्रबन्ध को परीक्षाणार्थ प्रेषित किया जाय।

दि0:........................

निर्देशक

(डॉ0 किशोरी लाल)

भूमिका

आधुनिक हिन्दी कविता में सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला जीवन–संस्कृति और रचना–कर्म की व्यापक और गहन समझ के साथ तुलसी के रूप में एक बार पुनः 'मैं ही बसन्त का अग्रदूत' कहते हुए जब सामने आते हैं तब वर्जन के सभी वज्र–द्वार तोड़ते दिखाई देते हैं। काव्य–क्षेत्र में जो पहल छायावाद में प्रसाद और पन्त ने की थी उसकी सर्वाधिक समर्थ सर्जनात्मक निष्पत्ति निराला के रचनाकर्म में हुई। कविता के पूरे रीतिवाद को इस कवि ने चुनौती देकर ध्वस्त किया और काव्य–वस्तु से लेकर काव्यालयों तक हिन्दी कविता को एक नवीन सृजन–भूमि प्रदान की ।

निराला के काव्य–सृजन को लेकर जो सबसे बड़ा सवाल शोधकर्ता को बार–बार मथता रहा है, वह 'मातृभूमि', 'जूही की कली' से लेकर 'सान्ध्यकाकली' तक की उनकी सृजन–यात्रा में उतार न आना रहा है। किस शक्ति से वे निन्तर उत्कर्ष, विवेक व्यस्कता, काव्य के हर तरह के रीतिवाद से विद्रोह, और विचार धाराओं की पराधीनता से मुक्ति को सम्हालकर योगी की तरह उर्ध्व–साधना करते रहे। ''राम की शक्ति पूजा' के राम वे स्वयं कैसे बन गयें, 'शक्ति की करो मौलिक कल्पना' का अर्थ उनके राम से ज्यादा उन पर कैसे लागू को गया। यही वे कुछ मूल प्रश्न हैं। जिन्होने शोधकर्ता को निराला की ओर आकर्षित किया। प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में निराला की काव्य–सर्जना को पाश्चात्य काव्यशास्त्री लौंजाइनस के उदात्त–सिद्धान्त के आधार पर साधने का प्रयास किया गया है, जो सर्वथा मौलिक है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध को उपसंहार सहित कुल चार अध्यायों में बॉटा गया है। प्रथम अध्याय में उदात्त–प्रकृति और पाश्चात्य विद्वानों के मतों विशेषकर लौंजाइनस का आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। लौंजाइनस के पूर्व कवि

का मुख्य कर्म पाठक या श्रोता को आनन्द तथा शिक्षा प्रदान करना, तथा गद्यलेखक या वक्ता का मुख्य–कर्म अनुनयन समझा जाता था। लौंजाइनस ने इस सूत्र में कुछ कमी महसूस करते हुए निर्णायक रूप से यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि काव्य और साहित्य का परम् उद्देश्य चर्मोल्लास प्रदान करना है, पाठक या श्रोता को वेद्यान्तर शून्य बनाना है। दूसरे अध्याय में कवि निराला की काव्य–सर्जना का सर्जनात्मक विकास उनके प्रकाशन वर्ष के क्रम के अनुसार दिखाया गया है। अगले अध्याय में निराला काव्य को लौंजाइनस के उदात्त सिद्धान्त के पॉचों आयामों पर साधने का प्रयास किया गया है। यह आवश्यक नहीं है कि शोध–कर्त्ता ने पूरे–के–पूरे निराला काव्य को लौंजाइनस के उदात्त सिंद्धान्त के पॉचों आयामों पर साथ ही लिया हो, यद्यपि कोशिश यही रही है। इस शोध–प्रबन्ध के चौथे अध्याय को उपसंहार शीर्षक दिया गया है जिसमें पूरे शोध प्रबन्ध का निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के विषय चयन से लेकर इसके पूरा होने तक, इस शोध–प्रबन्घ के निर्देशक और मेरे गुरू डॉ0 किशोरी लाल जी का अनवरत सहयोग मुझे मिलता रहा है। इसके लिए उनके प्रति कृतज्ञता और आभार व्यक्त करना औपचारिक सा लग रहा है, क्योंकि बिना उनके सहयोग पूर्ण व्यवहार के इस शोध–प्रबन्ध का पूरा होना सम्भव ही नहीं था। साथ ही मैं अपने विभाग के उन प्राध्यापकों का भी आभारी हूँ जिनका जाने–अनजाने सहयोग मुझे समय–समय पर मिलता रहा है विशेष रूप से प्रो0 सत्यप्रकाश मिश्र एवं प्रो0 राजेन्द्र कुमार का। अपने मित्रों तीर्थराज एवं उनकी पत्नी श्रीमती शालिनी, मनोज, राजेश, राजीव, आनन्द, अशोक, घनश्याम, सुबोध, उपेन्द्र एवं सुश्री हेमलता के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करना चाहूँगा जिन लोगों का प्रोत्साहन इस शोधप्रबन्ध के पूरा होने तक बराबर मिलता रहा है। साथ ही साथ अपने

पड़ोसन डॉ0 निशा श्रीवास्तव का भी आभारी हूँ जिनके रोज–रोज के तकाजे ने इस शोध–प्रबन्ध के जल्दी पूरा होने में कहीं न कहीं सहयोगी जरूर रहा है।

अपनी ममतामयी माँ श्री मती मोहरमनि सिंह का वात्सल्य युक्त स्नेहिल प्यार हमारे शोध–कार्य में प्रेरणा–स्रोत का कार्य किया है। अपने अग्रज सर्व श्री शिवपूजन सिंह, शत्रुघ्न सिंह एवं प्रमोद सिंह एवं तीनों भाभियों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना महज औपाचारिकता होगी, जिसके लिए मेरा अंर्तमन् गवाही नहीं दे रहा है। मेरे पिता स्व0 श्री रामधारी सिंह के असामयिक निधन के बाद मेरे अग्रज भाइयों ने न सिर्फ मुझे पिता–तुल्यसंरक्षण दिया अपितु उनके द्वारा दिया गया प्रोत्साहन और प्रयाग के इस लम्बें प्रवास के दौरान अनवरत दी गयी आर्थिक सुरक्षा ने मुझे मानसिक रूप से तनाव मुक्त रखा, जिसके कारण ही यह शोध–प्रबन्ध पूरा हो सका। परिवार के अन्य सदस्यों के साथ–साथ आभारी हूँ अपने अग्रज श्री शत्रुघ्न सिंह के समस्त सहकर्मियों का भी जिनका प्रोत्साहन मुझे बराबर मिलता रहा। मैं अपनी जीवन–संगिनी श्री मती अरूणिमा सिंह एवं उनके पितृ–गृह के सभी जनों के प्रति विशेष आभार व्यक्त करना चाहूँगा, जिन्होनें न केवल इस शोध–प्रबन्ध को पूरा करने के लिए निरन्तर प्रोत्साहित किया अपितु मुझे कई पारिवारिक जिम्मेदारियों से भी मुक्त रखा।

मैं राजेन्द्रा कम्प्युटर सेन्टर के 'समीर' का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग–पूर्ण व्यवहार ने इस शोध–प्रबन्ध को तैयार करने में काफी मदद की है।

इस शोध–प्रबन्ध के लिए अध्ययन सामग्री मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय और हिन्दी साहित्य सम्मेलन एवं इलाहाबाद संग्रहालय से भी प्राप्त की है। इसलिए मैं इन संस्थाओं के कर्मचारियों को धन्यवाद देना चाहूँगा। बस इतना ही।

दिनांक 15.8.2002 प्रवेश कुमार सिंह

विषय–वस्तु

अध्याय - 1

''उदात्त प्रकृति और पाश्चात्य विद्वानों के मतों - विशेषकर लौंजाइनस का आलोचनात्मक परीक्षण''

'उदात्त का स्वरूप'

उदात्त शब्द 'दा' धातु से 'उत्' एवं 'आ' उपसर्ग तथा 'त्त' प्रत्यय के योग से बना है। 'दा' दाने अर्थात 'दा' धातु दान अथवा देने के अर्थ में प्रयुक्त होती हैं। 'उत्' उपसर्ग का अर्थ ऊपर की ओर जाना या ऊपर की ओर उठना है 'आ' उपसर्ग 'चारो ओर से' या समुच्चय रूप से के अर्थ में प्रयुक्त होती है। 'त्त' प्रत्यय 'भाव' या 'होने' अर्थ में है। अर्थात् उदात्त का व्युत्पत्ति जनित अर्थ हुआ–ऐसा दान (देने वाला) जो समुच्चय रूप से ऊपर की ओर उठाता है। या सभी ओर से उत्कर्षण करता है।[1]

कोष ग्रन्थों के अनुसार 'उदात्त' का सामान्य अर्थ दयालु, त्यागी, दाता हृदय को स्पर्श करने वाला, उदार उत्तम, श्रेष्ठ, सशक्त एवं समर्थ आदि है। करुना, निधान एवं अनुग्रही आदि भी इसके पर्याय है।[2] उदात्त का अंग्रेजी पर्याय 'सब्लाइम' है जिसका अर्थ है–

(क)[क] मानवीय क्रिया–कलाप एवं चिन्तन आदि के श्रेण्ठतम् क्षेत्रों से सम्बद्ध विचार सत्य एवं विषय ।

(ख)[ख] व्यक्ति ऐसा हो जो अपने स्वभाव, चरित्र, उच्च कुल, प्रजा एवं आध्यात्मिक वैशिष्ट्य के दूसरों से बहुत ऊँचे स्थित हों।

(ग)[ग] प्रकृति एवं कला के क्षेत्र की ऐसी वस्तुएं जो अपनी महत्ता अबाध शक्ति एवं व्यापक आदि के कारण मन को अविभूत करती हो एवं संभ्रम करती

---

1. डॉ0 प्रेम सागर के मतानुसार, 'उदात्त भावना' एक विश्लेषण पृष्ठ–(1)

2. वृहत् पर्यायवाची कोष, पृष्ठ ज– (22)।

क. मानक हिन्दी कोश, पहला खण्ड – पृष्ठ – 345
ख. वाचस्प्त्यम् द्वितीय भाग – पृष्ठ – 1151–62
ग. शब्द–कत्यद्रुम, प्रथम भाग पृष्ट 237।

हों[1]

वास्तव में उदात्त का संबंध अखिल मानवीय किया–कलाप आचरण चिन्तन भाव तथा प्रकृति के ऐसे रूपों से है जो अपनी लोकोत्तरता में मन को अभिभूत करती हो और उत्कर्षित करती हों।

उदात्त के संबंध में जिस पाश्चात्य विद्वान का नाम सहज ही विद्वानों को अपनी तरफ आकर्षित करता है वह नाम है ''लौंजाइनस''। और उसके नाम से जो ग्रन्थ सम्बद्ध और प्रसिद्ध है वह है 'पेरिहुप्सुस'। शताब्दियों की उपेक्षा और विस्मृति के बाद 'पेरिहुप्सुस' 1954 ई0 में प्रकाशित हुआ जिसका श्रेय 'रोबेरतेल्लो' नामक एक इतावली विद्वान को है। 'पेरिहुप्सुस' मूल रूप से यूनानी मे लिखी गयी है जिसका अंग्रेजी अनुवाद 'सब्लाइम' के नाम से जाना जाता हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ 'उदात्त' है।

'पेरिहुप्सुस' काव्य निरूपक ग्रन्थ नहीं है, यह पत्र के रूप में' 'कोस्तुमिउस तेरेन्तियानुस' नामक एक रोमी युवक को सम्बोधित है जो लौंजाइनस का मित्र या शिष्य रहा होगा। पत्र की भाषा यूनानी (ग्रीक) है।

लौंजाइनस के पहले जिस व्यक्ति ने 'उदात्त' का निरूपण किया था उस व्यक्ति का नाम 'केकिलियुस' था, किन्तु इसमें लौंजाइनस को अनेक त्रुटियॉ दिखायी पड़ी ।

(1) विषय की परिभाषा का अभाव।

(2) उन पद्धतियों के विवेचन का अभाव जिनकी सहायता से कोई अपनी शक्ति विकसित कर उदात्त सी ऊँचाई तक पहुँच सकता है।

(3) भाव जैसे प्रमुख तत्व के निरूपण का अभाव।

(4) उदाहरणों का अनापेक्षित बाहुल्य।

---

1. दि आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्सनरी, वा दस पृष्ठ 31–32।

केकिलिउस की इस कृति पर लौंजाइनस ने पहले भी कभी तेरेन्तियानुस के साथ विचार–विमर्श किया था, उसी को विशद् रूप देते हुए, लिपिबद्ध करते हुए और केकेलिउस की त्रुटियों का यथासंभव निराकरण करते हुए लौंजाइनस ने यह रचना की।

'पेरिहुप्सुस' लगभग 60 पृष्ठों की लघुकाय कृति है, जिसमे छोटे बड़े (44) अध्याय हैं। अध्यायों का आकार बहुत ही असमान है। कुल अध्याय दो–तीन पृष्ठों के हैं तो कुछ केवल सात–आठ पंक्तियों के । इसका कारण यह भी है कि कई अध्यायों के अंश खण्डित हैं। पूरी पुस्तक का प्रायः एक तिहाई भाग लुप्त है। मनुष्यों की तरह कृतियों के भी भाग्य सोते–जागते रहते हैं। इसके अगणित उदाहरणों में 'पेरिहुप्सुस' भी है। काव्य–शास्त्रीय इतिहास का निश्चय ही यह बहुत बडा सौभाग्य है कि 'पेरिहुप्सुस' जैसी महत्वपूर्ण कृति खण्डित रूप में ही सही प्रकाश में आयी। विद्वानों ने एक स्वर में इस कृति और कृतिकार की प्रशंसा की है।

अध्यायानुसार 'पेरिहुप्सुस' की विषय–सूची इस–प्रकार हैः–

(1) अध्याय (1) से 7 : भूमिका–ग्रन्थ का प्रयोजन, उदात्त की परिभाषा, कतिपय दोषों का विवेचन आदि।

(2) अध्याय 8 से 15ः उदात्त के पॉच स्रोतों का निर्देशः उनके विचार की गरिमा तथा भाव की प्रबलता का निरूपण।

(3) अध्याय 16 से 29ः अलंकारों का निरूपण।

(4) अध्याय 30 से 38ः शब्द, रूपक, बिम्ब आदि का निरूपण।

(5) अध्याय 39 से 40ः रचना की भव्यता का निरूपण ।

(6) अध्याय 41 से 43ः दृष्टिभेद में उदात्त विरोधी कुछ अन्य दोषों की चर्चा।

(7) अध्याय 44ः उपसंहार–यूनान के नैतिक– साहित्यिक ह्रास के कारणों का संधान ।

लौंजाइनस से पूर्व कवि का मुख्य कर्म पाठक, स्रोता को आनन्द तथा शिक्षा प्रदान करना, गद्य लेखक या वक्ता का मुख्य–कर्म अनुनयन समझा जाता था। यदि होमर काव्य की सफलता श्रोताओं को मुग्ध करने में मानता था, तो एरिस्टोफेनिस कवि का कर्तव्य पाठकों को सुधारना मानता था। इसी प्रकार वक्ता या RHETOICIAN का गुण समझा जाता था– संतुलित भाषा, सुव्यवस्थित तर्क द्वारा श्रोता के मस्तिष्क पर इस तरह छा जाना कि वह वक्ता की बात मान ले। इस प्रकार लौंजाइनस से पूर्व साहित्यकार का कर्तव्य –कर्म समझा जाता था–"To instruet to delight to persuadi" अर्थात शिक्षा देना आह्लाद प्रदान करना और प्रयत्न उत्पन्न करना। लौंजाइनस ने अनुभव किया कि इस सूत्र में कुछ कमी है, क्योंकि काव्य में इन तीनों बातों से कुछ अधिक होता है। ऐसा अनुभव करते समय कदाचित् उनके मन में 'I on ' की निम्न पंक्तियों की प्रतिच्छाया रही हो। "The muse firest of all inspires men ---for all good poets -----compose there beautiful poems not by art but because they are inspired and possessed ----- when he has not attained to this state, he has power less and is unable to utter his oraels"

लौंजाइनस काव्य के लिए भावोत्कर्ष को मूलतत्व, अति आवश्यक तत्व मानता था। उसने निर्णायक रूप से यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि काव्य या साहित्य का परम् उद्देश्य चरर्मोल्लास प्रदान करना है, पाठक या श्रोता को वेद्यान्तर शून्य बनाना है।

इसी बात को बाद में चलकर जोबार्ट ने इन शब्दों में कहा" Nothing is poetry unless it transports" और डिक्विन्सी ने इसके आधार पर साहित्य के दो भेदः–(1) ज्ञान का साहित्य (2) शक्ति का साहित्य किए, तथा कहा कि पहले का कार्य शिक्षा देना तथा दूसरे का कार्य आनन्द प्रदान करना है। यद्यपि लौंजाइनस ने 'कल्पना' शब्द का प्रयोग नहीं किया तथा उसका स्पष्ट मत था

कि साहित्य का संबध तर्क से नहीं है, वह कल्पना द्वारा पाठक को अभिभूत करता है, यदि उसने 'इलियट' को 'ओडैसी' से डिमोस्थनीज को सिसरो से श्रेष्ठ माना तो इसका कारण यही था कि 'इलियट' में जीवन–आवेग प्रगाढ अनुभूति, गति शक्ति और वेग तथा यथार्थ बिम्ब– विधान 'ओडैसी' से कही अधिक थे। इसी प्रकार सिसरो की शैली शिथिल और सामान्य से भाराक्रान्त थी, तो डिमोस्थनीज की शैली में जीवन, आवेग, गति, तत्परता, प्रचुरता आदि गुण थे, जिनके कारण पाठक की चेतना पूर्णतः अविभूत हो जाती थी।

लौंजाइनस ने 'उदात्त' की कोई परिभाषा नहीं दी है, उसे एक स्वतः स्पष्ट तथ्य मानकर छोड़ दिया है। उनका मत है कि उदात्ता साहित्य के हर गुणों में महान है, यह वह गुण है जो अन्य क्षुद्र त्रुटियों के बावजूद साहित्य को सच्चे अर्थो में प्रभावपूर्ण बना देता है। उनकी यह दृष्टि व्यावहारिक तथा मनौवैज्ञानिक दोनों प्रकार की थी, अतः उसने एक ओर उदात्त के बहिरंग तत्वों की चर्चा की, दूसरी ओर उसके अंतरंग तत्वों की ओर भी संकेत किया। उदात्त के इस विवेचन में उन्होनें पाँच बातों को आवश्यक ठहराया:–

(1) महान धारणाओं या विचारों की क्षमता।

(2) भावावेग की तीब्रता।

(3) समुचित अलंकार–योजना।

(4) उत्कृष्ट–भाषा।

(5) गरिमामय रचना–विधान।

इसमें से प्रथम दो जन्मजात हैं, अतः उदात्त के अन्तरंग पक्ष के अन्तर्गत आते हैं। तो शेष तीन कलागत् है और बहिरंग के अन्तर्गत आते हैं। उन्होंने अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए उन तत्वों का भी उल्लेख किया है जो औदात्य के विरोधी हैं। इस प्रकार उनके उदात्त के स्वरूप विवेचन के तीन पक्ष हो जाते हैं।

(1) अंतरंग तत्व।

(2) बहिरंग तत्व।

(3) विरोधी तत्व।

(1) अन्तरंग तत्वः– लौंजाइनस ने अपनी पुस्तक 'आन दि सब्लाइम' में औदात्य के पॉच उद्गम स्रोतों का निर्देश किया है, जिनमें दो जन्मजात या अंतरंग हैं और शेष तीन कलागत। इन पॉचों में प्रथम और सर्वप्रमुख है, महान धारणाओं की क्षमता..... दूसरा है उद्दाम और प्रेरणा–प्रसूत आवेग। औदात्य के ये दो अतएव लगभग जन्मजात होते हैं अर्थात् इन दोनों तत्वों का संबंध आत्मा की गरिमा से है: ''इसलिए इस विषय में भी..........यथा सम्भव हमें अपनी आत्मा में उदात्त विचारों का पोषण करना चाहिए और उसे भव्य प्रेरणाओं से परिपूरित रखना चाहिए। इसको इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि ''औदात्य महान् आत्मा की प्रतिध्वनि है।''

इस प्रकार उदात्त के दो अंतरंग तत्व हैं : उदात्त–विचार और प्रेरणा–प्रसूत आवेग इन दोनों में भी मुख्य है– आवेग। ''मैं यह बात पूर्ण विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि जो आवेग उन्माद उत्साह के उद्दाम वेग से फूट पड़ता है और इस प्रकार से वक्ता के शब्दों को विक्षेप से परिपूर्ण कर देता है, उसके यथा–स्थान व्यक्त होंने से स्वर में जैसा औदात्य आता है, वह अत्यन्त दुर्लभ है।[1]

लौंजाइनस ने केवल प्रेरणा–प्रसूत भव्य–आवेग को ही औदात्य का उद्गम माना है। आवेग के सभी रूप उदात्त नहीं होते और स्वभावतः वे उदात्त– कला की सृष्टि नहीं कर सकते। अतः औदात्य और आवेग को पर्याय मानना भूल होगी। भव्य आवेग से अभिप्राय ऐसे आवेग का है जिससे ''हमारी आत्मा जैसे अपने आप ही ऊपर उठकर गर्व से उच्चाकाश में विचरण करने

---

1. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–53–55

लगती है तथा हर्ष और उल्लास से परिपूर्ण हो उठती है।[1] इसी प्रकार का आवेग उदात्त की सृष्टि करता है। इसके विपरीत कुछ "ऐसे भी आवेग होते हैं जो औदात्य से बहुत दूर हैं, और जो निम्नतर कोटि के हैं, जैसे दया, शोक भय आदि।[2] कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार के भाव उदात्त की सृष्टि में सर्वथा असमर्थ ही नहीं वरन् बाधक भी होते हैं।

लौंजाइनस का दृढ़ विश्वास है कि" सच्चे बाग्मी (कलाकार) को निश्चय ही क्षुद्र और हीनतर भावों से मुक्त होना चाहिए क्योंकि यह संभव नहीं है कि जीवन–भर क्षुद्र उद्देश्यों और विचारों में ग्रस्त व्यक्ति कोई स्तुत्य एवं अमर रचना कर सके।" "महान शब्द उन्हीं के मुख से निःसृत होते हैं, जिनके विचार गम्भीर और गहन हों।[3]

एक दूसरे प्रकार से भी डॉ0 नगेन्द्र ने उदात्त के आन्तरिक स्वरूप की व्याख्या की है और वह है प्रभाव वर्णन। प्रभाव वर्णन द्वाराः उदात्त का प्रभाव अत्यन्त प्रबल और दुर्निवार होता है।[4]

वास्तव में महान रचना वही है जिससे प्रभावित होना कठिन ही नहीं लगभग असम्भव हो जाय और जिसकी स्मृति इतनी गहरी हो कि मिटाए न मिटे।[5] साधारण औदात्य के उन उदाहरणों को ही श्रेष्ठ और सच्चा मानना चाहिए जो सब व्यक्तियों को सर्वदा आनन्द दे सके। "बज्रपात का बिना पलक झपकाए सामना करना तो आसान है, किन्तु एक के बाद एक तीव्र गति से होने वाले उस भाव विस्फोट को अविचल दृष्टि से देखना सम्भव नहीं।"

---

1. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–52
2. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–54
3. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेंन्द्र) पृष्ठ–99–100
4. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–52
5. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–52

यही कारण है कि सम्पूर्ण विश्व भी मानव मस्तिष्क के विचार और चिन्तन के लिए पर्याप्त नहीं लगता और प्रायः हमारी कल्पना दिगन्त को पार कर जाती है।[1]

"कारण यही है कि हम स्वभाव से ही छोटी–छोटी धाराओं की प्रंशसा नहीं करते, चाहे वे कितनी ही उपयोगी और निर्मल क्यों न हो, बल्कि नील नदी, डेन्यूब, अथवा राइन और इन सबसे अधिक महासागर से प्रभावित होते हैं। इन सब विषयों में हम कह सकते हैं कि जो कुछ उपयोगी तथा आवश्यक है उसे मनुष्य साधारण मानता है, अपने सम्भ्रम का भाव तो वह उन पदार्थों के लिए ही सुरक्षित रखता है जो विस्मय–विमूढ कर देने वाले हैं?

"और सभी गुण जहाँ यह सिद्ध करते हैं कि उसको धारण करने वाले मुनष्य हैं वहाँ औदात्य लेखक को ईश्वर के समीप ले जाता है, जहॉ दोष–मुक्त होने पर आलोचनाओं से छुटकारा मिलता है, वहाँ गरिमा आदर और विस्मय को जन्म देती है।"[2]

विवेचन :– भारतीय काव्य–शास्त्र की शब्दावली में उपर्युक्त उद्धरणों में उदात्त के विभाव एवं भाव दोनों पक्षों का वर्णन है।

विभाव से अभिप्राय भाव के कारण का है, और भाव का अर्थ है अनुभूति। इन वाक्यों में उदात्त भावना को जन्म देने वाले कारणों अर्थात्, उसके आलम्बन पक्ष का और उदात्त भावना के अनुभूति पक्ष का विवेचन मिलता है।

विभाव पक्षः– (क) विभाव आलम्बन रूप में उदात्त के तत्व हैं:–

(i) अनन्त विस्तारः– (क) सम्पूर्ण विश्व भी पर्याप्त नहीं लगता और प्रायः हमारी कल्पना दिगन्त को पार कर जाती है।"

---

1. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र) पृष्ठ–99–100
2. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र)पृ0 –100–101

(ख) बल्कि नील नदी, डेन्यूब और इन सबसे अधिक महासागर से प्रभावित होते हैं।

<u>(ii) असाधारण शक्ति और वेग :–</u> न हम उसे एबना के ज्वालामुखियों की अपेक्षा अधिक विस्मयकारी मानते हैं, जो अपने विस्फोट में अतल–गर्भ से बड़े–बड़े पत्थर और बृहद्कार शिलाखण्ड बाहर फेंकते रहते हैं और कभी–कभी जिनके गर्भ से विशुद्ध और आर्न्तभौंम ज्वाला का नद प्रवाह उमड़ता चला जाता है।

<u>(iii) अलौकिक ऐश्वर्यः–</u> सभी गुण जहॉ यह सिद्ध करते हैं कि उनको धारण करने वाले मनुष्य हैं वहाँ औदात्य लेखक को ईश्वर के (ऐश्वर्य के) समीप ले आता है।

<u>(iv) उत्कट एवं स्थायी प्रभाव–क्षमताः–</u>

(क) बज्रपात का बिना पलक झपकाए सामना करना तो आसान है, किन्तु एक के बाद एक तीव्रगति से होने वाले उस भाव विस्फोट को अविकल न होना कठिन ही नहीं लगभग असम्भव हो जाए और जिसकी स्मृति इतनी प्रबल और गहरी हो कि मिटाए न मिटें।"

<u>बहिरंग तत्वः–</u>लौंजाइनस के निबन्ध का मुख्य प्रतिपाद्य उदात्त–शैली ही है–अर्थात् उनका ध्यान मूलतः उन तत्वों पर ही केन्द्रित रहा है जिनके द्वारा काव्य की शैली उदात्त बनती है। स्पष्टतः ये उदात्त के बहिरंग–तत्व हैं, स्वयं लेखक के शब्दों में ये "कला की उपज" हैं।[1]

<u>(I) अलंकारों की समुचित योजनाः–</u> जिसके अन्तर्गत् भाव और अभिव्यक्ति दोनों ही से संबंधित अलंकार आ जाते है।

<u>(ii) उत्कृष्ट–भाषा :–</u> जिसके अन्तर्गत् शब्द चयन, रूपकादि का प्रयोग और भाषा की सज्जा समृद्धि आदि गुण आ जाते है।

---

1. काव्य में उदात्त तत्व – डॉ0 नरेन्द्र–पृष्ठ–53

(iii) गरिमामय रचना–विधान :– लौंजाइनस ने विस्तार से इन तीनों तत्वों को लेकर अपने विचार प्रगट किए है।

समुचित अलंकार–योजना :–

इस प्रसंग में लेखक ने दो तथ्यों को ग्रहण किया है।

(I) अलंकार–विधान का औचित्य।

(ii) उदात्त के पोषक अलंकारों का निर्देश।

अपनी मूल धारणा के अनुरूप ही लौंजाइनस अलंकार–विधान में औचित्य को प्राथमिकता देते हैं, उदात्त–शैली के निर्माण मे अलंकारों का प्रयोग तो आवश्यक होता ही है, किन्तु उससे भी अधिक आवश्यक प्रयोग का औचित्य जो स्थान ढंग परिस्थिति और उद्देश्य के ऊपर निर्भर रहता, अर्थात भव्य से भव्य अलंकार भी उसी स्थिति में उदात्त का पोषक हो सकता है जब उसका प्रयोग स्थान परिस्थिति रीति और उद्देश्य के अनुकूल हो। वास्तव में अलंकार प्रयोग की सार्थकता तो तब है जब वह प्रसंग का सहज अंग बनकर आए और इस बात पर भी किसी का ध्यान न जाए कि यह अलंकार है। संक्षेप में लौंजाइनस की "आन दी सब्लाइम" नामक पुस्तक में उदात्त आलम्बन के गुण हैं, जीवन्त आवेग, प्रचुरता, तत्परता जहाँ उपयुक्त हो वहाँ गति तथा ऐसी शक्ति और वेग जिसकी समता करना संभव नहीं।"

भाव–पक्षः– उदात्त की अनुभूति के अंतर्तत्व इस प्रकार हैः–

(I) मन की ऊर्जाः– अर्थात् आत्मा का उत्कर्ष करने वाली प्रबल अनुभूति; लौंजाइनस ने दो प्रकार के आवेगों की ओर संकेत किया है एक उत्साह आदि जिनसे आत्मा का उत्कर्ष होता है और दो भय–शोक आदि हीनतर आवेग जो आत्मा काअपकर्ष करते हैं। उदात्त की अनुभूति पहली कोटि मे आती है।" जिससे हमारी आत्मा जैसे अपने आप ही ऊपर उठकर गर्व से उच्चाकाश में

विचरण करने लगती हैं। भारतीय काव्यशास्त्र में जिसे चित्त की 'दीप्ति' या 'स्फीति' कहा है।

<u>(ii) उल्लासः–</u> (क) जिससे हमारी आत्मा हर्ष व उल्लास से परिपूर्ण हो जाती है।

(ख) साधारणतः औदात्य के उन उदाहरणों को श्रेष्ठ सच्चा मानना चाहिए जो सब व्यक्तियों को सर्वदा आनन्द दे सकें।

<u>(iii) संभ्रम अर्थात् आदर और विस्मयः–</u> जो कुछ भी उपयोगी तथा आवश्यक है उसे मनुष्य साधारण मानता है, अपने संभ्रम का भाव तो वह उन पदार्थो के लिए ही सुरक्षित रखता है जो विस्मय– विमूढ कर देने वाले हैं।

<u>(iv) अविभूति अर्थात् सम्पूर्ण चेतना के अभिभूत हो जाने की अनुभूतिः–</u>उदात्त की अनुभूति का अन्तिम रूप यही हैः ऊर्जा उल्लास सम्भ्रम आदि के सम्मिलित–प्रभाव रूप अंततः हमारी सम्पूर्ण–चेतना अभिभूत हो जाती है लौंजाइनस ने "विस्मय –विमूढ" शब्द के द्वारा इसी भाव को व्यक्त किया है। ताकि ध्यान न जाए कि यह अलंकार है।[1]

स्पष्टतः कला की यही सबसे बड़ी सिद्धि है कि उसके प्रयोग के विषय में प्रमाता को सन्देह तक न हो, परवर्ती आलोचना शास्त्र में इसे ही कला का आत्मगोपन कहा गया है जब अलंकारों का प्रकोप स्वतन्त्र रूप में होने लगता है, अर्थात जब वे साध्य बन जाते हैं तो उनका उद्देश्य ही विफल हो जाता है इसलिए लौंजाइनस अलंकार प्रयोग के लिए यह आवश्यक मानते हैं कि वह साधन–रूप हो, प्रसंगानुकूल हो, अतिचार से मुक्त हो और अथलज हो, कम से कम अत्यनज प्रतीत हो क्यों कि कला–प्रकृति के समान प्रतीत होने पर ही सम्पूर्ण होती है।[2]

---

1. काव्य में उदात्त तत्व – डॉ0 नगेन्द्र – पृष्ठ–77
2. काव्य में उदात्त तत्व – डॉ0 नगेन्द्र – पृष्ठ–74

उदात्त के पोषक अलंकारों में रूपक के अतिरिक्त लौंजाइनस ने विस्तारणा, शपथोक्ति (संबोधन) प्रश्नालंकार विपर्यय, व्यतिक्रम, पुनरावृत्ति, छिन्न –वाक्य, प्रत्यक्षीकरण, संचयन, सार रूप परिवर्तन, पर्यायोक्ति आदि का मनौवैज्ञानिक पद्धति से विवेचन किया है।

(I) विस्तारणः– किसी विषय के सम्पूर्ण अंगों और अंगभूत प्रसंगों के समुदाय का नाम विस्तारण है जिससे विषय के विस्तार द्वारा युक्ति में बल आ जाता है। इसके तत्व हैं– विवरण और प्राचूर्य।

(ii) शपथोक्तिः– इसमें आन्तरिक शपथ के द्वारा ओज और विश्वास के अंकुर उत्पन्न किए जाते हैं।

(iii) प्रश्नालंकारः– परम्परा के अनुसार वक्ता स्वंय प्रश्न करके शीघ्र ही समाधान करने मे यदि सफल हो जाता है तो उसका यह वक्तव्य अत्यन्त उदात्त और विश्वासोत्पादक बन जाता है।

(iv) विपर्यय और व्यतिक्रमः– इसमें शब्दों अथवा विचारों के सहज व्यक्तीकरण में उलटफेर किया जाना स्वाभाविक है जिस प्रकार मनुष्य वास्तव में क्रोध, भय, मन्यु, ईष्या अथवा किसी अन्य भावना से, क्योंकि आवेग अनेक और असंख्य हैं और उनकी गणना संभव नहीं, उत्तेजित होकर कभी–कभी दूसरी ओर मुँह फेर लेते हैं, अपने मुख्य विषय को छोड़कर दूसरे पर लपक उठते हैं और बीच में ही कोई सर्वथा असंबद्ध बात ले आते हैं और फिर उसी प्रकार अचानक ही तेजी से घूमकर अपने मुख्य विषय पर लौट आते हैं और बात–चक्र की भाँति अपने वेग परिचालित होकर जल्दी –जल्दी इधर–उधर बहकते वे अपनी शब्दावली को विचारों को, और उनके सहज क्रम को, नाना प्रकार के असंख्य रूपों में बदलते रहते हैं, उसी प्रकार श्रेष्ठ लेखक विपर्यय के द्वारा इस सहज प्रभाव को यथा सम्भव अभिव्यक्त करते हैं।

(v) पुनरावृत्ति और छिन्न–वाक्यः– इन अलंकारों में जंब तक आत्मिक उदात्तता की सामग्री नहीं आएगी तब तक आत्मा में आवेग और संक्षोभ की अभिव्यक्ति से मनोदशा में अनेक मनोवेगों का उठना स्वाभाविक है। इसलिए बाध्य होकर प्रयोक्ता को छिन्न वाक्यों और पुनरावृत्तियों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है।

(vi) प्रत्यक्षीकरणः– प्रत्यक्षीकरण में साक्षात् वर्णन की क्षमता रहती है। समस्त वर्ण्य–विषय जीवन्त–सा हो उठता है। इस अलंकार का प्रयोग प्रायः पुनरावृत्ति और छिन्न वाक्य आदि के सहयोग में ही होता है।

(vii) सारः– इसमें वर्ण्य–वस्तु को उदात्त–तत्व की दृष्टि में असाधारण की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। तथा वर्ण्य–वस्तु में लगातार उदात्त का अभिव्यक्तिकरण रहता है।

(viii) रूप–परिर्वतनः– यह अलंकार वचन, काल, पुरूष, कारक और लिंग के परिवर्तन द्वारा विषय के प्रतिपादन में विविधता और सजीवता उत्पन्न करता है।

(vx) पुरूष– परिवर्तनः– पुरूष–परिवर्तन में अन्य पुरूष के लिए प्रायः मध्यम पुरूष के प्रयोग द्वारा (अथवा अन्य प्रकार के विपर्यय द्वारा) प्रत्यक्ष प्रभाव उत्पन्न किया जाता है।" कभी–कभी ऐसा होता है कि लेखक किसी अन्य व्यक्ति के बारे मे बात करते–करते एकाएक बात को काटकर स्वयं अपने आपको उस व्यक्ति का रूप दे देता है।

(x) पर्यायोक्तिः– इसमें बात को बहुत तरह से सजाकर चमत्कार के साथ कहा जाता है। जैसे मृत्यु के लिए 'नियत–मार्ग' का प्रयोग।

उपर्युक्त अलंकारों के अतिरिक्त रूपक और अतिशयोक्ति का भी उदात्त शैली के निर्माण में योगदान है।

उत्कृष्ट–भाषाः– उदात्त–शैली का मुख्य तत्व है उत्कृष्ट–भाषा, लौंजाइनस ने 'आन दि सब्लाइम' नामक पुस्तक में विचार और पद्–विन्यास को एक दूसरे

के आश्रित माना है। अतएव स्वभावतः उदात्त की अभिव्यक्ति का माध्यम उत्कृष्ट या गरिमामयी भाषा हो सकती है। भाषा की गरिमा का मूल आधार है शब्द–सौन्दर्य, जिसका अर्थ है 'उपर्युक्त और प्रभावक' शब्द प्रयोग। सुन्दर शब्द ही वास्तव में विचार को विशेष प्रकार का आलोक प्रदान करते हैं। उन्हीं के द्वारा प्रत्यक्ष रूप में किसी रचना में सुन्दरतम् मूर्तियों की भाँति भव्यता सौन्दर्य, गरिमा, ओज और शक्ति तथा अन्य श्रेष्ठ गुणों का आविर्भाव होता है और मृत–प्राय वस्तुएं जीवन्त हो उठती है।" किन्तु 'गरिमामयी भाषा' का उपयोग सर्वत्र नहीं करना चाहिए क्योंकि छोटी–छोटी बातों को बड़ी और भारी–भरकम संज्ञा देना किसी से छोटे बालक के मुँह पर पूरे आकार वाला त्रासद अभिनय का मुखौटा लगा देने के समान है।[1] अर्थात्, गरिमामयी पदावली का उपयोग प्रसंग के अनुरूप ही होना चाहिए क्योंकि वस्तु और शब्द के बीच पूर्ण सामंजस्य बिना उदात्त की योजना के सम्भव नहीं हैं।

<u>गरिमा–मय एवं अर्जित रचना–विधानः–</u> यह उदात्त–शैली का तीसरा तत्व है।," रचना का अर्थ है भाषा का सामंजस्य, यह गुण स्वभाव जात होता है और हमारी श्रवणेन्द्रिय को ही नहीं वरन् हमारी आत्मा तक को प्रभावित करता है रचना–विधान के अर्न्तगत् शब्दों–विचारों, कार्यों, सुन्दरता तथा राग के अनेक रूपों का संगुम्फन होता है अर्थात् रचना का प्राण तत्व है सामंजस्य जो उदात्त–शैली के निर्माण के लिए अनिवार्य है।[2] यह सामंजस्य वक्ता और हमारे बीच समभाव की स्थापना करता है।" हमें भव्यता, गरिमा ऊर्जा तथा अपने भीतर निहित प्रत्येक भाव की ओर प्रवृत्त करता है, और इस प्रकार हमारे मन के ऊपर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेता है।"

---

1. काव्य में उदात्त तत्व– डॉ0 नगेन्द्र–पृष्ठ–91
2. काव्य में सौन्दर्य और उदात्त तत्व–शिव बालक राय – पृष्ठ–107

कल्पना तत्वः— लौंजाइनस ने "आन दि सब्लाइम" नामक पुस्तक में उदात्त पर विचार करते समय प्रासंगिक रूप से बिम्ब और कल्पना चित्र प्रवक्ता की गरिमा ऊर्जा और शक्ति के सम्पादन में बहुत कुछ सहायता करते हैं। 'कल्पना', लेखक के मतानुसार उस शक्ति का नाम है जो पहले कवि वर्ण्य—विषय का मनसा साक्षात्कार कराती है और फिर भाषा में चित्रात्मकता का समावेश कर श्रोता के मनश्चक्षु के सामने उसे प्रत्यक्ष कर देती है। लौंजाइनस की कल्पना—विषयक उक्त धारणा आज भी समीचीन प्रतीत होती है।

विरोधी तत्वः— औदात्य के विरोधी तत्व पर विचार करते हुए लौंजाइनस ने वालेयता का उल्लेख किया है। वालेय शब्द का अर्थ है बचकाना—जिसमें बच्चों के दुर्गुणों का ही प्राधान्य रहता है— जैसे चापल्य गरिमा का एकान्त अभाव, संयम का अभाव एक प्रकार की हीनता कायरता आदि। स्पष्टतया ये ही औदात्य के विरोधी तत्व है— और चंचल पद—गुम्फ, असंयत, रूचिहीन, वाक्स्फीति हीन और क्षुद्र भावाडम्बर व शब्दाडम्बर ये सभी दोष उदात्त को निकृष्ट बना देते हैं। वाक्स्फीति से अभिप्राय है अर्थ या भाव की गरिमा के अभाव में अनावश्यक वागाडम्बर का प्रयोग। उदाहरणार्थ— वृद्ध जैसे क्षुद्र पदार्थ के लिए 'जीवित समाधि' शब्द का प्रयोग। भावाडम्बर का अर्थ हैं 'जहॉ किसी आवेग की आवश्यकता नहीं है वहाँ अवसर के अनुपयुक्त और खोखले आवेग का प्रदर्शन किया जाए अथवा जहाँ संयम की आवश्यकता है, वहाँ असंमय दिखाई दे। शब्दाडम्बर से लौंजाइनस का आशय वास्तव में अतियुक्त शब्दावली का है जिसके लिए हिन्दी में 'उहा' शब्द का प्रयोग होता है। जैसे—स्त्री के लिए 'वक्षुदंश', पुतली के लिए 'आँख की कुमारी' आदि का प्रयोग। इनके अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार का विवेकहीन चमत्कार प्रयोग उदात्त का विरोधी है। आगे

चलकर इन्हीं के आधार पर उदात्त के विपरीत रूप 'उपहास्य' का विवेचन किया गया।[1]

<u>अभिव्यक्ति में क्षुद्रता</u>:– इसी प्रकार अभिव्यक्ति की क्षुद्रता अत्यधिक संक्षिप्तता जडाव संगीत तथा लय का आधिक्य भी उदात्त–शैली के लिए घातक सिद्ध होते हैं। अभिव्यक्ति की क्षुद्रता का अर्थ है, क्षुद्र अर्थ के वाचक शब्दों का प्रयोग। उदात्त–विषय के अनुरूप उदात्त–शैली में निकृष्ट और कुत्सित अर्थ के वाचक शब्द 'भाषा पर कलंक' से प्रतीत होते हैं। साथ ही उक्ति की अत्यधिक संक्षिप्तता से भी उदात्तता का ह्रास होता है क्योंकि बहुत ही संकीर्ण घेरे मे विचार को ठूँसने से भी गरिमा नष्ट हो जाती है। "यह आरोप समास–शैली के विषय में नहीं है जो कि शैली का गुण है," "वरन् ऐसी उक्ति के विषय में है जो सर्वथा क्षुद्र और छोटे–छोटे भागों में खण्डित हों, क्योंकि शब्दों की अल्पता अर्थ को संकुचित कर देती है।" यही बात जड़ाव के विषय हैं। ऐसे शब्द जो एक –दूसरे से बहुत सटे हुए हों, छोटे–छोटे अक्षरों में विभक्त हों और नितान्त विषमता और कर्कशता के द्वारा मानों लकड़ी की कीलों से एक दूसरे के साथ जड़े हों, उदात्त शैली के दूषण होते हैं और अन्त में लय एवं संगीत का आधिक्य भी उदात्त के प्रभाव को नष्ट कर देता है, इसके कारण उक्ति में एक प्रकार की अतिशय सुकुमारता कृत्रिमता और एक–रसता उत्पन्न हो जाती है। और श्रोता का ध्यान विषय–वस्तु से हटकर लय एवं संगीत पर केन्द्रित हो जाता है।

जैसा कि पीछे संकेत किया जा चुका है ग्रीक–साहित्य चिन्तन परम्परा में लौंजाइनस पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने काव्य–वस्तु एवं काव्य–गरिमा का संबन्ध रचयिता के व्यक्तित्व से स्थापित करते हुए उसे महत्व प्रदान किया। उनसे पूर्व अरस्तू ने अनुकृति सिद्धान्त द्वारा प्रकृति को ही काव्य का आधार–स्रोत मानते

---

1. काव्य में उदात्त तत्व (डॉ0 नगेन्द्र)–पृष्ठ–109

हुए कवि के निजी व्यक्तित्व को सर्वथा उपेक्षित एवं तिरोहित कर दिया था अनुकृति सिद्धान्त के अनुसार कला प्रकृति की अनुकृति है इसका तात्पर्य है कि कला का सौन्दर्य प्रकृति के सौन्दर्य की ही अनुकृति मात्र है ऐसी स्थिति में कलाकार का क्या योगदान है। केवल अनुकृति प्रस्तुत कर देना तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं हैं। लौंजाइनस ने अनुकृति सिद्धान्त की सर्वथा उपेक्षा करते हुए कवि के व्यक्तित्व की विशिष्टिता एवं रचना की मौलिकता का प्रतिपादन किया जो उसकी नूतन दृष्टि का प्रमाण है। वस्तुतः जहाँ प्लेटो घोर 'आदर्शवादी था अरस्तू वस्तुवादी या यर्थाथवादी वहॉ लौंजाइनस स्वछन्दतावादी(रोमांटिक) था। पाश्चात्य परम्परा में कवि व्यक्तित्व को महत्व प्रदान करने के कारण ही लौंजाइनस को पहला रोमांटिक आलोचक माना जाता है जो ठीक ही है।

दूसरे औदात्य सिद्धान्त की प्रतिष्ठा भी सर्वप्रथम लौंजाइनस द्वारा हुई। आगे चलकर विभिन्न पाश्चात्य आलोचकों एवं कला–मीमांसको ने कला के दो प्रमुख तत्वों के अन्तर्गत् सौन्दर्य एवं औदात्य को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है तथा कान्ट, हीगल, कैरिट सैतायन प्रभृति– सौन्दर्य–शास्त्रियों ने इनकी विस्तार से मीमांसा की है वस्तुतः आधुनिक कला–समीक्षा में अरस्तू के अनुकृति–सिद्धान्त की अपेक्षा औदात्य को ही अधिक महत्व प्राप्त है।

तीसरे लौंजाइनस का दृष्टिकोण जितना गम्भीर है उनका विवेचन–विश्लेषण भी उतना ही सूक्ष्म एवं व्यापक है, वे औदात्य को एक व्यापक रूप प्रदान करते हैं, कि उसके अन्तर्गत् कवि का व्यक्तित्व विचार–तत्व, भाव–तत्व, शैली का अलंकरण, शब्द चयन रचना के गुण–दोष आदि सभी प्रमुख तत्व समाविष्ट हो जाते हैं। वे रचना की सर्जना–प्रकिया से लेकर उसकी आस्वादन–प्रकिया तक की स्थितियों को ध्यान में रखते हुए उसके सभी महत्वपूर्ण पक्षों की व्याख्या सर्वथा–नूतन, मौलिक एवं प्रौढ़ रूप में प्रस्तुत करते हैं।

भाव–मीमांसाः– भारतीय दृष्टि से लौंजाइनस का भावावेगों को महत्व देते हुए अलंकार गुण–दोष आदि की मीमांसा करना विशेष महत्वपूर्ण है। यद्यपि लौंजाइनस ने मूलतः औदात्य को लक्ष्य माना है, पर भावावेगों के उद्वेलन एवं तज्जन्य आनन्द की बात भी उन्होंने स्थान–स्थान पर की है जो भारतीय रस–सिद्धान्त के अनुकूल है।

जहाँ औदात्य की व्यापक रूप से प्रतिष्ठा करते हुए लौंजाइनस ने उसका संबंध व विचार, भाव शैली आदि सभी पक्षों से स्थापित करने का महत्व–पूर्ण कार्य किया है, वहाँ उनकी यह सीमा भी है कि ऐसा करते समय उन्होने औदात्य के मूल क्षेत्र को भूला दिया है। औदात्य का मूल अर्थ है उच्च–विचार या ऐसी भावनाएँ जो त्याग आत्म–बलिदान या परोपकार की प्रेरक हों, इस दृष्टि से औदात्य एक चारित्रिक या नैतिक तत्व है। उसका कला से सीधा संबंध नहीं हैं महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचारों में या महात्मा–गाँधी के जीवन–चरित में पर्याप्त मात्रा में औदात्य के होते हुए भी यह आवश्यक नहीं है कि कलात्मक सौन्दर्य से युक्त हो, कला का प्राथमिक गुण सौन्दर्य है, औदात्य उसका अतिरिक्त गुण है। फिर कला या काव्य में औदात्य को स्थान औदात्य के कारण नहीं अपितु उसके काव्य सौन्दर्य के कारण ही मिलता है, अन्यथा नहीं, उदाहरण के लिए कबीर की निम्नांकित उक्ति को लीजिए–

"माली आवत देखि कै कलियाँ करैं पुकार।
फूले–फूले चुनि लिए कालि हमारी बार।।"

यहाँ जिस उदात्त विचार की अभिव्यक्ति की गयी है वह अपने कलात्मक सौन्दर्य के कारण ही स्वीकार्य है, अन्यथा नहीं। यदि कोई अभिधा लिख दे–हम सबको मरना है अतः संसार का मोह छोडो– तो यह वाक्य काव्य की कोटि में नहीं आएगा। यद्यपि इनमें औदात्य है।

विवेचनः— उदात्त के विषय में लौंजाइनस के मत का सारांश इस प्रकार हैः—

विभाव रूप में उदात्त से अभिप्राय ऐसे विषय का है जो अनन्त विस्तार असाधारण शक्ति एवं वेग, अलौकिक ऐश्वर्य तथा उत्कृष्ट—प्रभाव क्षमता आदि गुणों से सम्पन्न हो।

भाव रूप में उदात्त से तात्पर्य उल्लास, विस्मय सम्भ्रण आदि संचारियों से पुष्ट, आत्मा का उत्कर्ष करने वाली ऐसी प्रबल अनुभूति का है जो सम्पूर्ण चेतना को अभिभूत कर ले।

शैली के रूप में उदात्त में आधार तत्व हैं— उपर्युक्त एवं प्रभावक शब्दों से युक्त उत्कृष्ट—भाषा, गरिमामय रचना—विधान, भव्य—योजना और प्रायः अतिशय—मूलक अलंकारों की योजना जिन पर औचित्य का अनुशासन अनिवार्यतः रहना चाहिए।

यद्यपि निराला छायावाद के प्रवर्तकों में परिगणित होते हैं, किन्तु निराला जैसे अनेक क्षितिजों और दिगंत भूमिकाओं के कवि को किसी वाद की सीमा में बॉधना कठिन है। निराला का युग प्रमुखतः प्रगीत युग रहा है और इस युग का काव्योत्कर्ष वस्तुतः प्रगीत काव्य का ही उत्कर्ष कहा जाएगा। निराला वस्तुमुखी और चित्रात्मक विशेषताओं के प्रगीत कवि हैं। प्रगीत पद्धति में नाद सौन्दर्य की ओर अधिक ध्यान रहने से संगीत तत्व का अधिक समावेश देखा गया है। संगीत को काव्य के और काव्य को संगीत के अधिक निकट लाने का सबसे अधिक प्रयास निराला जी ने किया है।

निराला ने अपने साहित्य की रचना करते समय शायद यह सोचकर कि उनका साहित्य स्वयं निराला बनकर युवा पीढ़ी की परम्परा से, रूढियों से, सामाजिक विषमताओं से, संघर्ष करने के लिए प्रोत्साहित करता रहे, अपने पात्रों को भी अपने विद्रोही, अक्खड़ मस्तमौला और तेजस्वी स्वरूप में प्रस्तुत किया है। आज भी महामानव व विद्रोही निराला अपने पात्रों के माध्यम से कह उठता है:–

"तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर से निकले फिर
गंगा जल धारा।।"

सचमुच यह निराला का आत्म–विश्वास बोल रहा है, पत्थर से गंगा–धारा निकालने का उनका यही आत्म–विश्वास व अक्खडपन ही तो उन्हें इस सीढ़ी पर लाकर खड़ा कर देता है, जहाँ उनका दीन–हीन किसान भी क्रान्ति का आह्वान करता है–

"जग के महामय आँगन में
बरसो विप्लव के नवजलधर"।[1]

---

1. बादल–राग : निराला रचनावली (1) : पृष्ठ–129

महाकवि निराला के पात्र पूरे परिवेश व उनकी सामाजिकता को उजागिर करते हैं। चाहे वह कथा साहित्य हो, उपन्यास हो, कहानी हो, रेखाचित्र हो या कविता, अपने पात्रों को गढ़ते समय वे न केवल पात्रों के चरित्र का उदात्तीकरण करते हैं, वरन् वे अन्याय, शोषण व रूढियों के खिलाफ मानवीय मूल्यों के उस धरातल पर चारित्रिक गरिमा के साथ उनके पूरे व्यक्तित्व को उभारकर प्रस्तुत करते हैं।

निराला काव्य की रचना भाव मनोवैज्ञानिक चित्रण है। मन के आवेग, मन की निराशा, मन की खिन्नता अनेकानेक भाव जो तिरोहित होते हैं, उन भावों से प्रतीत होता है कि कवि ने मनोवैज्ञानिक शैली में राम के मानसिक धरातल का विश्लेषण किया हैं। निराला ने कभी बन्धन स्वीकार नहीं किया चाहे वह मर्यादापुरूषोत्म राम के मर्यादित चरित्र का हो, वे जीवन के किसी भी क्षेत्र में निरर्थक बन्धन की बात नहीं करते, राम का मर्यादित स्वरूप, शान्त व गम्भीर व्यक्तित्व साहित्यकारों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना रहा, परन्तु 'राम की शक्ति–पूजा' में राम को सहज मानव के रूप में प्रतिष्ठित करने का क्रान्तिकारी चरण निराला ने अपने व्यक्तित्व के अनुरूप उठाया था, निराला के राम का अन्तर्द्वन्द और आवेश देखने योग्य है:–

"धिक् जीवन जो पाता ही आया विरोध
धिक् साधना जिसके लिए सदा ही किया शोध
जानकी हाय उद्धार प्रिया का हो न सका
वह एक और मन रहा राम का जो न थका
जो नहीं जानता दैन्य जो नहीं जानता विनय"।[1]

अपने सम्पूर्ण साहित्य में निराला एक छाया की भॉति छाए रहते हैं। उनके साहित्य को पढ़कर ऐसा लगता है मानों निराला स्वयं इन विभिन्न पात्रों के माध्यम से कभी दीन–हीन दलित–वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं, कभी समाज मे

1. 'राम की शक्ति पूजा' – अनामिका–निराला रचनावली भाग–2–पृष्ठ–239

आमूल परिर्वतन के लिए क्रान्ति का आह्वान करते हैं, तो कभी प्रिया के प्रति प्रणय निवेदनः—

> "मैं! न कभी कुछ कहता,
> बस तुम्हें देखता रहता।
> चकित थकी चितवन मेरी रह जाती,
> दग्ध हृदय के अगणित व्याकुल—भाव!
> मौन दृष्टि की ही भाषा कहलाती ।"

<u>सर्जना का प्रथम सोपानः—</u> निराला की काव्य—सर्जना का प्रथम—सोपान 'अनामिका' के रूप में दिखाई देता है, जो बालकृष्ण—प्रेस कलकला से '1923' के उत्तरार्द्ध में श्री 'नवजादिकलाल श्रीवास्तव' ने प्रकाशित किया था। साहित्य—साधना की दृष्टि से यह संकलन निराला का प्रस्थान—बिन्दु है। यह अनुभव व अभिव्यक्ति की अनेकमुखी प्रकृति के कारण उनकी आगामी व्यापक काव्य—चेतना की ओर स्पष्ट संकेत कर रहा है। विशेषतः अन्य समान—धर्मा कवियों प्रसाद, पन्त, महादेवी की आरम्भिक कविताओं के कच्चेपन की तुलना में 'अनामिका' के कवि की भाषिक सर्जनात्मकता स्पृहणीय है।

<u>'परिमल' में निराला की काव्य—साधना का स्वरूपः—</u> कवि की सर्जना का दूसरा सोपान 'परिमल' में दिखाई देता है जो सितम्बर '1929' में प्रकाशित हुई थी, 'परिमल' में कवि मिथिकीय अंश को नए परिपेक्ष्य में विश्लेषित किया। ग्वाल कवि परम्परा से बँधे निराला ने परम्परा अमुक्त चिन्तन का प्रसार और नयी दृष्टि का विनियोग किया है। यों तो 'परिमल' में प्रायः भाषा के तत्सम् रूप का प्रयोग हुआ है। किन्तु "जमुना के प्रति" जैसी लक्षणा प्रधान अलंकारिक कविता के अपवाद के साथ लगभग सभी श्रेष्ठ कविताएं समास, शिल्प—योजना की आग्रही नहीं हैं। 'जमुना के प्रति' कविता उक्ति—वैचित्र्य और विशेषण बहुलता के वावजूद वास्तविक जीवन

संवेदना से परिपूर्ण है, जिसमें स्मृति चित्रों के माध्यम से भव्य अतीत को पूरी सुकुमारता के साथ भाषा मे उतारा गया है।

"यमुने तेरी इन लहरों में
किन अधरों की आकुलतान
पथिक प्रिया सी जाग रही है
उस अतीत के नीरव गान।।"[1]

छायावादी काव्य के साथ कविता का शाब्दिक अर्थ लेने की परम्परा अनुपयोगी सिद्ध होती है, इस रूप में कविता काव्य भाषा की उत्तरोत्तर, घुलनशीलता, सूक्ष्मता और अनिर्दिष्ट प्रकृति से अधिक आत्मीयता और आत्म–विश्वास के साथ जुड़ती है। कविता का शाब्दिक अर्थ न हो सकने की स्थिति में पाठक और कभी–कभी समीक्षक खीझता है। पर श्रेष्ठ कविता की सघन अर्थ–प्रकिया शाब्दिक अर्थ न हो सकने की सीधी और सरलीकृत पद्धति से परे होती है। इस दृष्टि से 'परिमल' की 'मौन' कविता पहले आती है:–

" बैठ लें कुछ देर
आओ एक पथ के पथिक
प्रिय अन्त और अनन्त के
x x x
सरल अति स्वछन्द
जीवन प्राप्त के लघुपात से
उत्थान पतनाधात से
रह जाए चुप निर्द्धनद।।"[2]

---

1. यमुना के प्रतिः निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ 115 (सम्पादक नंद किशोर नवल)
2. मौनः परिमलः निराला ग्रन्थावली भाग(1)–पृष्ठ 170 (सम्पादक– नन्द किशोर नवल)

इसी संग्रह की विषम मातृक्त छन्द में 'प्रणीत', 'बादल राग' कविता खड़ी बोली पर आधारित काव्य-भाषा के अनुपम स्वर-विस्तार एवं नाद योजना की संभावना को उद्घाटित करती हैं, इस कविता में सब्य-साची अर्जुन के रूप में परिकल्पित बादल का सेवारत कर्मठ-जीवन विशेष प्रवणता के साथ मुखरित हुआ है। यद्यपि मुक्त छन्द की शुरूआत करने वाली 'जूही की कली', 'जागृति में', 'सुप्ति थी', 'शेफालिका' आदि कविताएँ सौन्दर्य-प्रणय के विविध रूपों को हिन्दी काव्य के सन्दर्भ में नया आयाम देती हैं। किन्तु इनमें वस्तु संवेदना के प्रति वैयक्तिक प्रतिक्रिया व्यक्त करने की प्रवृत्ति है। किसी बँधी-बँधायी लीक पर चलने का आग्रह नहीं –

"विजय-वन-बल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी-स्नेह-स्वप्न-मग्न
अमल-कोमल-तनु तरूणी-जुही की कली,
दृग बन्द किये, शिथिल-पत्रांक में
बासन्ती निशा थी;
विरह-विधुर-प्रिया-संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते है मलयानिल।"[1]

कविता के औदात्य और संगीत की माधुरी का समन्वय :-

'परिमल' के बाद 'गीतिका' (1936) के रूप में कवि का तीसरा काव्य संकलन प्रकाशित हुआ । जो छायावादी काव्य भाषा के और निखरने का संकेत देता है। 'गीतिका' में कवि ने संगीत व कविता को एक धरातल पर मिलाने की चेष्टा की है। कविता को संगीत से जोड़ने का एक सफल प्रयास निराला जी ने किया है। संगीत

1. 'जूही की कली' परिमलः निराला रचनावली भाव(1) सम्पादक-नन्द किशोर नवलः

माधुरी और कविता का औदात्य मिलकर एक अपूर्व रागात्मक अनुभूति का सृजन करती हैं। ''गवैया मात्र संगीत की शब्दावली का इस्तेमाल करते हैं कविता के तत्व से मेल नहीं हो पाता, निराला ने संगीत की माधुरी को भी पैदा किया है, साथ ही साथ कविता के अस्तित्व की रक्षा भी की है। संस्कृतनिष्ठ शब्दों का भरपूर और सर्जनात्मक उपयोग करते हुए कवि ने 'गीतिका' के गीतों में गंभीर चिन्तन, सांस्कृतिक सन्दर्भों, विविध प्रणय–स्थितियों को अनुस्यूत करने की सफल चेष्टा की है। संगीतात्मकता को केन्द्र में रखकर रचे गये इन गीतों में कविता के अनुभव को और कविता की रचना–प्रकिया को अक्षत रखने की सजगता है। 'गीतिका' की भूमिका में निराला ने लिखा है– ''प्राचीन गवैयों की शब्दावली संगीत की रक्षा के लिए, किसी तरह जोड़ दी जाती थी।, इसीलिए उनके काव्य का एकान्त अभाव रहता था। आज तक उसका यह दोष प्रदर्शित होता है। मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर से भी मुखर करने की कोशिश की है।''[1]

कवि का शिल्पी रूप 'परिमल' की अपेक्षा 'गीतिका' में अधिक उभरा है, उसमें एक तो संस्कृत के नाद तत्व को, उसकी संगीतात्मका को, उसकी समास परकता को हिन्दी के ग्रहणशील रूप में घुलाने–पचाने की कोशिश है। 'गीतिका' की दुर्बोधिता के कारण (छोटे–छोटे शीर्षक) निराला जी की कविताओं में 'विनयपत्रिका' का प्रभाव पड़ा, दीर्घ–समास–बहुला पदावली का प्रभाव निराला जी की 'गीतिका' में पर्याप्त मात्रा में देखा जा सकता है।

'अनामिका' में कवि की परिवर्तित मनः स्थितियाँः–

कवि का चौथा संकलन 'अनामिका'(1937) के रूप में प्रकाशित हुआ, जो कवि के प्रथम काव्य–संकलन 'अनामिका' के अतिरिक्त था इसे 'द्वितीय अनामिका' भी कहा जाता है। इस संकलन में तत्सम् शब्दावली पर आत्मविश्वास अधिक मुखरित हुआ है। 'प्रेयसी', 'रेखा' जैसी लम्बी प्रणय कविताओं में कवि ने धारा प्रवाह रीति से

---

1. 'गीतिका'–'भूमिका'–पृष्ठ–12

संस्कृत शब्दों का प्रयोग किया है। इन कविताओं की रचना के माध्यम से कवि जैसे इस धारणा का उन्मूलन करता है कि खड़ी बोली में संस्कार के परिष्कार की न्यूनता है। 'अनामिका' में ही 'राम की शक्ति–पूजा' है, जिसके लम्बे, सुगठित, रचना–विधान में खडी–बोली पर आधारित काव्य–भाषा की अभूतपूर्व व्यंजना–क्षमता उद्घाटित हुई है। रचानात्मक काव्य–व्यक्तित्व भाषा के कितने स्रोतों को उन्मुक्त कर सकता हैं। यह 'राम की शक्ति पूजा' में देखा जा सकता हैः–

> ''रवि हुआ अस्तः ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
> रह गया राम–रावण का अपराजेय समर
> आज का, तीक्ष्ण–शर–विधृत–क्षिप्र–कर वेग–प्रखर,
> शतःशेल सम्बरणशील, नील नभ–गर्ज्जित–स्वर
> प्रतिपल–परिवर्तित–व्यूह–भेद–कौशल–समूह–
>
> x x x
>
> वारित–सौमित्र–भल्लपति–अगणित–मल्ल–रोध,
> गर्ज्जित–प्रलयाब्धि–क्षुब्ध–हनुमत्–केवल–प्रबोध,
> उद्गीरित–बह्नि–भीम–पर्वत–कवि–चतुःप्रहर–
> जानकी–भीरू–उर–आशाभर,–रावण–सम्वर''[1]

'अनामिका' की कुछ कविताओं की रचना के साथ निराला दोहरे शिल्प के प्रणेता के रूप में सामने आते हैं। 'दान' 'बनबेला' और 'सरोज–स्मृति' में क्लैसिकल और यथार्थ–परक शिल्प की सह–विन्यस्ति हुई है– खासतौर से 'सरोज–स्मृति' जैसी शोक–गीति का दोहरा रचना–विधान, तत्सम एवं तद्भव पर आधारित भाषिक संरचना स्पृहणीय हैः–

> ''धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण,

---

1. 'द्वितीय अनामिका': राम की शक्ति पूजाः सम्पादक नन्द किशोर नवलःपृष्ठ–329: निराला रचनावली भाग एक ।

बाल्य की केलियों का प्राङ्गण
कर पार, कुंज—तारूण्य सुघर
आयी, लावण्य—भार थर—थर
कॉपा कोमलता पर सस्वर
ज्यों मालकौश नव—वीणा पर ।।"[1]

'अनामिका' में जहॉ एक ओर 'मरण—दृश्य' जैसी सूक्ष्म गंभीर गीति रचना है, वहीं 'खुला आसमान', 'ठूॅठ' व 'किसान की नई बहू की ऑखें', जैसी यर्थाथ— परक कविताएॅ हैं, जिसमें महत्वहीन समझे जाने वाले जन—सामान्य में प्रचलित शब्दों का रचनात्मक उपयोग किया गया है। 'ठूँठ' कविता अपने रचना—विधान में बेजोड है, कवि ने 'ठूॅठ' जैसे मामूली वस्तु को प्रतीक के रूप में ग्रहण किया है और उसके माध्यम से जीवन की उदासी और श्रीहीनता की गहरी व्यंजनाएँ विकसित हुई हैं:—

"ठूँठ यह है आज!
गयी इसकी कला,
गया है सकल साज!

x x x

केवल वृद्ध विहग एक बैठता कुछ कर याद"।[2]

यहाँ कवि 'ठूँठ' रूपी प्रतीक के माध्यम से यौवन के ढ़ल जाने की शोभाहीनता और अनुपयोगिता के बेवस एहसास की मार्मिक स्थिति का संश्लिष्ट अंकन 'ठूॅठ' के बिम्ब में हुआ है।

<u>निराला की प्रबन्धात्मक दृष्टि:—</u> '1938' में निराला के 'तुलसीदास' काव्य का प्रकाशन हुआ। यहॉ कवि का झुकाव मुक्तक की तरफ बढ़ रहा है। जिस समय तुलसी का आविर्भाव हुआ, मुगल साम्राज्य का चरमोत्कर्ष था। यथार्थवादी दृष्टिकोण

---

1. ठूॅठ: अनामिका: निराला रचनावली भाग (1) पृष्ट—352
2. ठूॅठ: अनामिका: निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ—352

का संकेत और भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि का पराभव को कवि ने देखा, लोग अधर्मी होते जा रहे थे। इस काव्य के माध्यम से तात्कालिक शासन व्यवस्था पर कवि ने करारी चोट की है। 'निराला' के 'तुलसी' में संस्कृति की सर्जनात्मकता के प्रश्न को उठाने वाली 'मानसिकता' संस्कारशील शब्दों में मैत्री करती है। छन्द की मौलिक प्रकृति और उसका कसाव, शब्दों के जटिल रूप, सूक्ष्म–गम्भीर कल्पनाएं इस काव्य को सामान्य की चिन्ता में विशिष्ट बना देती हैं। कवि के शाब्दिक स्वेच्छाचार या दूसरी तरह से कहना चाहें तो भाषागत् अभिजात्य का 'राम की शक्तिपूजा' से भी अच्छा उदाहरण 'तुलसीदास' में देखा जा सकता है। क्योंकि यहाँ कवि संस्कृत के कोशवाची शब्दों का भरपूर उपयोग करता है, इतना ही नहीं, उनमें यथोच्छित अर्थ भी अनुस्यूत करता है।

"अब, धौत धरा, खिल गया गगन,
उर–उर को मधुर, तापप्रशमन
बहती समीर, चिर–आलिंगन ज्यों उन्मन।
झरते हैं शशधर से क्षण–क्षण
पृथ्वी के अधरों पर निःस्वन
ज्योतिर्मय प्राणों के चुंवन, संजीवन।।"[1]

'कुकुरमुत्ता' में भाषा का अति–यर्थाथवादी धरातलः–शब्दों के अभिजात संस्कार का इतना दूरगामी उपयोग के बाद 'कुमुरमुत्ता' (1942) की रचना अपने आप में एक सुखद आश्चर्य है। 'कुकुरमुत्ता' जन–सामान्य से रची–बसी भाषा में घोषणापूर्वक रचनात्मक उपयोग की शुरूआत करता है। सत्य बात तो ये है कि निराला ने भाषा के प्रयोग में अपना आदर्श–गुरू, पंडित "अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध" को बनाया। उपाध्याय जी ने जहाँ 'प्रिय–प्रवास' में रूपोद्यान प्रफुल्लपाय,

---

1. "तुलसीदास : निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–283

कलिका राकेन्द्र बिम्बानना लिखा, वहीं 'चोखे' 'चौपदे', 'चुभते–चौपदे' में उनकी भाषा सर्वथा बदल गयी है। इसी प्रकार निराला की भाषा वर्ण–विषयों के अनुसार अपने तेवर और व्यंजना शक्ति को बदलती चलती है। शब्दों के भरपूर और दक्ष उपयोग से कवि ने हिन्दी के अभिजात शब्द–कोश की सवंर्द्धना की है। 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से कवि ने एकदम साधारण ग्रामीण और कठोर शब्दों में भरा–पूरा आत्म–विश्वासी व्यक्तित्व सिरजा है और इस परंपरित धारणा को निर्मूल कर दिया है कि कविता की रचना के लिए संस्कारशील शब्द ही उपयुक्त होते हैं। यहॉ तो उर्दू शब्दों और एक दम ग्रामीण शब्दों मे ठेठ मुहाविरेदानी की सर्वथा नई क्षमता मुखरित हुई है:–

"चाहिए तुझको सदा मेहरून्निशा
जो निकाले इत्र, रू, ऐसी दिशा
बहाकर ले चले लोगों को, नहीं कोई किनारा
जहाँ अपना नहीं कोई भी सहारा"
ख्वाब में डूबा चमकता हो सितारा
पेट में डँड पेले हों चूहे, जबाँ पर लफ़्ज़ प्यारा।"[1]

'अणिमा'– कवि के जीवन का सन्धि स्थल:– 'कुकुरमुत्ता' के बाद कवि का जो काव्य–संग्रह प्रकाश में आया वो था 'अणिमा'। जो सन् 1943 ई0 में युग–मन्दिर उन्नाव से प्रकाशित हुई थी । 'अणिमा' में कवि अपने जीवन की पीड़ा, छल–छद्म, शोषण आदि की प्रवृत्तिों का निदर्शन (नमूना) प्रस्तुत किया है। कविता देखने में सरल हैं, लेकिन गंभीर–गूढ़ता को समेटे हुए हैं। कुछ–एक प्रशस्तियों, श्रद्धांजलियों को छोड़ दें तो 'अणिमा' में अभिव्यक्ति के विभिन्न रूप दृष्टिगोचर होते हैं। संवेदना एवं भाषा दोनों ही स्तरों पर यह–संकलन कवि–जीवन का सन्धि –स्थल है। जिसमें एक ओर 'गीतिका', 'अनामिका' के तत्सम् गीतों की सी मृदु–गीतात्मकता है, दूसरी

---

1. 'कुकुरमुत्ता'–निराला रचनावली–भाग–2, पृष्ठ–51

ओर किसी भी प्रकार की लयात्मक उद्भावना से युक्त गद्य–कल्प, शब्द–प्रधान कविताएँ हैं। लेकिन उल्लेखनीय बात यह है कि उत्तरोत्तर अभिव्यक्ति की ऋजुता और उस ऋजुता में कुशलता से छिपी गहनता की ओर कवि का झुकाव होता जाता है–

"उपन्यास लिखा है,
जरा देख दीजिए।
अगर कहीं छप जाए
तो प्रभाव पड़ जाय
तो प्रभाव पड़ जाय उल्लू के पट्ठों पर
मनमाना रूपया फिर ले लूँ इन लोगों से;
नए किसी बंगले में एक प्रेस खोल दूँ;
आप भी वहाँ चलें
चैन की बंसी बजे।"[1]

अपने पूर्ववर्ती काव्य के संस्कारनिष्ठ बिम्ब विन्यास की प्रवृत्ति घटती चलती है और बहुत परिचित साधारण वस्तुओं से कवि प्रतीक–बिम्ब का काम लेता है। 'मैं अकेला' का कुछ–कुछ तटस्थ सा अवसाद 'हट रहा मेला' और 'कोई नहीं भेला' के प्रतीकों में मुखरित हुआ है:–

"पके आधे बाल मेरे,
हुए निष्प्रभ गाल मेरे,
'चाल मेरी मन्द होती आ रही
हट रहा मेला।
जानता हूँ नदी झरने,

---

1. मास्को डायलाग्सः अणिमा संग्रहः निराला रचनावली भाग(2) पृष्ठ–42

जो मुझे थे पार करने,

कर चुका हूँ हँस रहा यह देख

कोई नहीं भेला।"[1]

'मेला' के हटते जाना जहाँ उत्सव–शून्य वृद्ध जीवन को सामने लाता है वहीं 'भेला' की अनुपस्थिति आत्म–निर्भर, रचना शील व्यक्तित्व को उजागिर करती है। और 'हट रहा मेला' के विषाद को पीछे कर देती है। विषाद और उपलब्धि की ऐसी ही सह–अवस्थिति की जटिलता को कवि ने कितनी सहजता से आम के सूखी डाल के बिम्ब में अनुस्यूत कर दिया है। यह 'स्नेह–निर्झर–बह गया' गीत में देखा जा सकता है। 'गीतिका' के क्लिष्ट शब्दावली में रचे सिद्धि, आत्म–साक्षात्कार के गीतों के सामने 'अणिमा' का यह गीत दृष्टव्य हैः– जिसमें सिद्धि का सारा उल्लास और आत्मीय अनुभव बहुत अनौपचारिक ढ़ग से अंकित किया गया है।

"मैं बैठा था पथ पर

तुम आए चढ़ रथ पर,

हँसे किरण फूट पड़ी

टूटी जुड़ गयी कड़ी

भूल गए पहर घड़ी

आयी इति अथ पर।

उतरे, बढ़ गयी बाँह,

पहले की पड़ी छाँह,

शीतल हो गयी देह,

बीती अविकथ पर।"[2]

---

1. 'मैं अकेला'– 'अणिमा' – निराला रचनावली (2)– पृष्ठ – 48
2. 'मैं बैठा था पथ पर' – 'अणिमा' – निराला रचनावली (2) – पृष्ठ – 48

'अणिमा' की कुछेक कविताएँ ठेंठ गद्यात्मक शब्दावली और संरचना की दृष्टि से सफल बन पड़ी हैं। 'यह है बाजार' कविता मे गॉव की रखैल प्रवृत्ति पर सूक्ष्म और सीधा व्यंग्य किया गया है। वर्णन की नितान्त रूखी समझे जाने वाली किन्तु प्रस्तुत प्रसंग में बेमिसाल लय–शून्य भाषा में। 'लगेगी न बार' 'बैठाली' व्याही जैसे गॅवार शब्दों का बेलाग प्रयोग देखने योग्य है–

"सुखिया बोली अपनी सास को सुनाकर यों,
मास के पैसे शायद अब तक भी बाकी हों,
अच्छा है अगर करें पूरी धेली ज्यों त्यों।
टूटा रूपया खर्च होते लगेगी न बार ।"
दुखिया बोला मन में, "ठहर अरी सास की,
मास खिलाता हूँ मैं तुझे अभी रास की
चोरी है याद मुझे, बात कौन घास की
बैठाली क्या जाने व्याही का प्यार।।"[1]

'अणिमा' में प्रयोगवादी ठर्रे की कविता "चूँकि यहाँ दाना है" अपनी अजीबो–गरीब संरचना के कारण उल्लेखनीय है। इसकी संवेदना कुछ–कुछ अस्पष्ट और पेंचीदी है। तोड़–मरोड़ करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि इस कविता में आज की पूँजीवादी व्यवस्था पर व्यंगात्मक रीति से तीखा आघात् किया गया है। जिसमें सारे संबंध, सारे किया कलाप, यहाँ तक की आत्मीय माँ–बाप का रिश्ता सब पैसे के आश्रित है। 'दाना' का एहसान हैः–

"चूँकि यहाँ दाना है
इसीलिए दीन है, दीवाना है।
लोग हैं महफिल है,
नग्में हैं, साज हैं, दिलदार है, और दिल है,

---

1. 'यह है बाजार' – अणिमा–निराला रचनावली–2, पृष्ठ–92

शम्मा है परवाना है

चूँकि यहाँ दाना है।।"[1]

<u>'बेला' में कवि का भाषिक–प्रयोग:–</u> विराट रचना के परिपेक्ष्य में ऐसी भी रचना कवि के भाषा अधिकार की द्योतक है। कवि का यह संग्रह मूलतः भाषिक प्रयोग है, जिसमें कवि ने उर्दू गजलों की ख़ानी और लोक–प्रियता से प्रभावित होकर उन्हें हिन्दी गीतों में ढालने की साहसिक कोशिश की हैं। लेकिन यह साहसिकता सर्जन के स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं। खासतौर से कवि की विराट–रचना–प्रकिया के परिपेक्ष्य में। हिन्दी शब्दों के अपनी विशिष्ट प्रकृति है और (यह बात हर भाषा के संबंध में सच है।) जिससे वे गजलों की संवेदना को उनके खास ढ़ग के लोच को बहन करने में फारसी –उर्दू शब्दावली की तरह सक्षम नहीं हो सकते । इतना जरूर है कि खडी बोली के खड़ेपन को संवारने में एक खास ढ़ग से ये कृतकाय हुए हैं, इनमें उच्चारण संगीत की प्रतिष्ठा हुई है जो इन गीतों के प्रणयन में कवि का एक विशिष्ट उद्देश्य रहा है। गजलों की परम्परा से अलग कुछ गीत अपनी प्रकृति में बहुत रचनात्मक बन पड़े हैं।

"मिट्टी की माया छोड–चुके

जो, वे अपना घट फोड़ चुके।

नभ की सुदूरता से ऊँचें

जीवन के क्षण अब हैं छूँछे,

आकर्षण के अभियानी के

गतिकम को जब वे तोड़ चुके।"[2]

---

1. 'चूँकि यहाँ दाना है' – अणिमा – निराला रचनावली भाग–2, पृष्ठ–114
2. 'मिट्टी माया छोड़ चुके' – बेला – निराला रचनावली (2)–पृष्ठ–137

काव्य भाषा के विकास–क्रम में कुछ गीत गजलों की परम्परा में बहुत ही अच्छे बन पड़े हैं, जिनमें हिन्दी और उर्दू के शब्दों का समन्वय कुछ इस प्रकार का हो गया है मानों कविता के प्रवाह में बह रहे हैं –

''गिराया है जमीं होकर, और छुटाया आसमाँ होकर।
निकाला, दुश्मनेजॉ; और बुलाया मेहरबाँ होकर।
चमकती धूप जैसे हाथवाला दबदबा आया,
जलाया गरमियाँ होकर, खिलाया गुलसितॉ होकर
उजाड़ा है कसर होकर, बसाया है असर होकर,
उखाड़ा है रवॉ होकर लगाया बागबाँ होकर।''[1]

'निराला के काव्य–भाषा के विकास–क्रम में उनके कुछ शब्द–प्रयोगों का उल्लेख करना आवश्यक होगा:– विशेषकर वहॉ जहॉ कवि ने हिन्दी–उर्दू शब्दों का समन्वय या समास से नई रचनात्मकता विकसित करना चाहा है, किन्तु वे प्रयोग सफल नहीं बन पड़े हैं, जैसे:–

''जड़ता तामस, संशय, भय, बाधा, अन्धकार,
दूर हुए दुर्दिन के दु:ख; खुले बन्द द्वार
जीवन के उतरे कर; ऑखों को दिखा सार;
छुई बीन नये तार कस–कस कर।''[2]

<u>'नए पत्ते' में सपाट–बयानी:–</u> 'नए पत्ते' 1946 भाषा और संवेदना दोनों सन्दर्भो में कवि का विशिष्ट संकलन है। कविता को तमाम वाह्य उपकरणों से मुक्ति दिलाकर उसे स्वायत्त बनाने की चेष्टा 'नए–पत्ते' की खास विशेषता है। इस संकलन में संग्रहीत कविताओं की सपाट–बयानी हिन्दी कविता की एक अप्रतिम

---

1. गिराया है जमीं होकर ....बेला: निराला रचनावली भाग (2)– पृष्ठ – 138
2. वही राह देखता हूँ: बेला: निराला रचनावली भाग (2) पृष्ठ–175

उपलब्धि है। बेहद ठंडक पड़ने से सारी फसल नष्ट प्राय हो गयी है, खेतिहर निराश हो चुके हैं, कवि इस कठोर ऋतु के वर्णन को प्रमाणिक बनाने के लिए उसी से 'सिरजी'[1] भाषा का उपयोग करता है और तभी उसकी अनौपचारिकता में भरा–पूरा व्यक्तित्व उभरता है–

"एक हफ्ते पहले पाला पड़ा था
अरहर कुल की कुल मर चुकी थी।
हवा हाड़ तक बेध जाती है
गेहूँ के पेड़ ऐंठे खड़े हैं,
खेतिहरों में जान नहीं
मन मारे दरवाजे कौड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गले बातें करते हुए
कुहरा छाया हुआ।।"

सुखद आश्चर्य इस एहसास से उपजता है कि ऐसी बेलौस भाषा 'स्वशब्द वाच्यत्व'[2] से एकदम अलग है। और यहीं पर कविता कविता बनती है। नारेबाजी प्रचार के विल्कुल विपरीत। 'अरहर' का कुल का कुल मरना, हवा का हाड़ तक बेधना, गेहूँ के पेड़ का ऐठें खड़ा होना, बेजान खेतिहरों का एक दूसरे से गिरे–गले बातें करना, यह है शब्दों की बनाबट, जिसमें पाले की स्थिति सजीव हो उठती है।

निराला की काव्यात्मक सर्जना का अन्तिम रूपः– निराला के काव्य विकास क्रम का अन्तिम सोपान 'अर्चना', आराधना', 'गीत–गुंज' और 'सान्ध्य काकली' के रूप में सामने आता है। इन सभी संग्रहों में कुछ पुरानी रचनाएँ और कुछ नयी

---

1. 'सिरजी' का शाब्दिक अर्थ–निर्मित पानी बनी हुई।
2. 'स्वशब्द वाच्यत्व'– एक पारिभाषिक शब्द है यथा जिस रस में कविता की जाए उसमें उस रस का नामोल्लेख न किया जाए, 'स्वशब्द वाचक' शब्द वाचक शब्द का दोष है कि हास्य रस की कविता में हास्य शब्द का प्रयोग नहीं होना चाहिए। कवि जिस विषय को वर्णित करना चाहता है उसका नामोल्लेख नहीं करता।

रचनाएँ संकलित हुई हैं। 'सान्ध्य–काकली' को छोड़कर शेष सभी रचनाएं उनके जीवन–काल में ही प्रकाशित हो गयी थी, 'सान्ध्य काकली' का प्रकाशन (1969) में उनके मरणोपरान्त हुआ। ये सारी रचनाऍ निराला के काव्य विकास–क्रम को कोई नया आयाम नहीं दे पाती हैं। प्रथम दृष्टया इनकों देखने से ऐसा लगता है कि निराला एक बार फिर पिछे लौट गए हैं। जहाँ तक निराला की धर्म–भावना का सवाल है वो अन्त तक उनमें बनी रही, उन पर 'वेदान्त' का भी गहरा असर है, लेकिन अनेक बार इसका अतिक्रमण भी किया है। एक जगह 'मार्क्स' ने लिखा है, "धार्मिक वेदना एक साथ ही वास्तविक वेदना की अभिव्यक्ति और वास्तविक वेदना के विरूद्ध विद्रोह भी है"। निराला के इस अन्तिम चरण के काव्य को इसी दृष्टि से देखना उचित होगा। उनकी एक अन्नयतम् विशेषता यह भी है कि वे ग्राम्य जीवन के बिल्कुल निकट स्थित हैं, जो उनके अन्तिम चरण की रचनाओं पर ग्राम्य–जीवन, ग्राम्य–संस्कृति के अद्भूत आत्मीय वर्णन के रूप में दिखाई देता है। यशस्वी कवि और समीक्षक डा0 केदारनाथ सिंह ने निराला की इस चरण की कविता को "परदेश से घर लौटे हुए कवि की कविता" जैसी संज्ञा से अभिहीत करते हैं।

पिछले दोनों अध्यायों में बताया जा चुका है कि लौंजाइनस के 'उदात्त तत्व' की विशेषता क्या है? और निराला के सर्जनात्मक आयाम को कमवार प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में लौंजाइनस के उदात्त–तत्व सिद्धान्त के पॉचों आयामों को कमवार निराला की कविताओं पर इसी के परिपेक्ष्य में मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है।

लौंजाइनस का पहला सिद्धान्त है–'महान अवधारणों की क्षमता'। लौंजानइस के अनुसार उस कवि की कृति महान नहीं हो सकती जिसमें धारणाओं की क्षमता का अभाव हो, उदात्तता महान–विचारों में आश्रय पाती है, क्षुद्र विचारों में नहीं। तात्पर्य यह है कि उसी कवि की कृति महान हो सकती है, अनुकरणीय हो सकती है, साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकती है, काव्य सिद्धान्तों की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकती है जिसमें महान विचारों की क्षमता हो। निराला के अन्दर वो सारे गुण मौजूद थे, जिसका प्रतिपादन लौंजाइनस ने उदात्ततत्व के सिद्धान्त के रूप में किया है। कवि को महान बनने के लिए अपनी आत्मा में उदात्त–विचारों का पोषण करना होता है, ताकि वह गंभीर विचारों वाले शब्दों का सर्जनात्मक प्रयोग कर सकें। महान कवियों की कृतियों के पारायण से जो संस्कार प्राप्त होते हैं, वे निश्चय ही श्रेष्ठ रचना के प्रणयन में सहायक होते हैं। विज्ञ पाठक निराला जी की महनीयता से अपरिचित नहीं हैं। वे जितने उदात्त थे उतने ही सहृदय और करूणापूर्ण भी। हिमालय के समान व्यक्तित्व की विशालता लिए हुए उनकी सहज द्रवण–शीलता, करूणा की गंगा बन जाती थी और उस समय के किसी के भी दुःख को दूर करने में अपना सब–कुछ त्याग सकते थे। किसी दीन–दलित के वेदना विह्वल क्षणों में उनका रक्षा कवच बन जाना तथा अपने हृदय रस के अमृत से सरावोर कर उसे निर्भय होने का आश्वासन देना निराला जैसे पर–दुख कातर का ही काम था। व्यक्ति

की भाँति ही सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन के दैन्य–दुरित–निवारण हेतु उनके अन्तस् का करूणा सागर विक्षुब्ध हो उठता था।

'निराला के जीवन' का बहुत कुछ भाग बंगाल में बीता था, जो 'स्वामी–विवेकानन्द' के प्रभाव क्षेत्र में आता था। रामकृष्ण–मिशन के दार्शनिक पत्र 'समन्वय' के सम्पादक भी कुछ दिनों तक वे (निराला) रहे। स्वामी विवेकानन्द की कुछ रचनाओं का उन्होंने अनुवाद भी किया था, कहने का तात्पर्य यह है कि निराला का जीवन–दर्शन रामकृण्ण–मिशन और 'स्वामी विवेकानन्द' से अवश्य प्रभावित रहा होगा।

"भूलकर जब राह, जब जब राह भटका मैं
तुम्हीं झलके हे महाकवि,
सघन तम की आँख बन मेरे लिए।।"

कवियों के कवि 'शमशेर' का महाप्राण निराला के संबध में यह कथन और केदारनाथ अग्रवाल के कि–

"तुम हमारे मूर्तिकार ,
हम तुम्हारी मूर्ति हैं।।"

से निराला के कवि व्यक्तित्व का या उनकी महान अवधारणाओं का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। यह स्वीकारोक्तियाँ केवल दो विशिष्ट कवियों की ही नहीं हैं बल्कि पूरे हिन्दी साहित्य की है। कहने का तात्पर्य यह है कि सर्वग्राह्य वही हो सकता है जो महान धारणाओं की अवधारणा करे, और एक बहुत बड़े जनमानस को प्रभावित करे, कवि की महान अवधारणाओं के संबंध में उपरोक्त पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं।

सामाजिक यथार्थ विषयक औदात्यः–

महाकवि के पात्र पूरे परिवेश और उसकी सामाजिकता को उजागर करते हैं। कथा साहित्य हो उपन्यास हो, कहानी हो, रेखाचित्र हो, या कविता। निराला

'विधवा' के लिए ''इष्टदेव के मन्दिर की पूजा–सी'' जैसा बिम्ब कोई महान अवधारणा वाला कवि ही दे सकता है। 'मन्दिर की पूजा सी' कहते ही भारतीय विधवा की वह पवित्र–मूर्ति पाठक के सामने उपस्थित हो जाती है, यह केवल मूर्ति ही नहीं होती है बल्कि उसका पूरा भारतीय संस्कार पूरी सादगी पवित्रता के साथ उपस्थित हो जाता है ऐसी कल्पना महाकवि निराला के यहॉ ही संभव है। निराला के परवर्ती काव्य की दूसरी शैली जो हास्य–व्यंग्य और विनोद प्रधान है, जिसमें उन्होने 'कुकुरमुत्ता' की रचना की है, इस तरल शैली भी कही जा सकती है, यह बोल–चाल का ही नहीं दैनिक जीवन में बरते जाने वाले कटाक्षों और अपशब्दों का भी प्रयोग करती है।

निराला की ये काव्य–शैलियॉ एक दूसरे से इतनी स्वतन्त्र है और अपने में इतनी सशक्त भी हैं कि उन्हें किसी वृहत्तर वृत्त में रखकर नहीं देखा जा सकता और न किसी लघुतर वृत्त में रखा जा सकता है। काव्यवस्तु और काव्यशैली का सामंजस्य प्रस्तुत करने वाले ये सुस्पष्ट एवं अनिर्वाय शैली प्रयोग है। इतना बड़ा महान अवधारणाओं की क्षमता वाला कवि हिन्दी काव्य में तो है ही नहीं, नवयुग के सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में भी मुश्किल से मिलेगा।

> ''अबे! सुन बे, गुलाब
> भूल मत गर पाई खूशबू रंगो आब
> खून चूसा खाद का तूने आशिष्ट
> डाल पर इतरा रहा कैपटलिस्ट!
> x x x
> कली जो चटकी अभी
> सुखकर काटॉ हुई होती कभी
> रोज पड़ता रा पानी

तू हरामी खानदानी।।"[1]

'कुकुरमुत्ता' निराला की उन गिनी– चुनी रचनाओं में है जिस पर अनगिनत आलोचकों ने टिप्पणियाँ की है। किसी ने इसे अभिजात्य से मुक्ति की संज्ञा दी है, तो किसी ने कुछ और। यहाँ निराला ने एक तरफ गुलाब को रखा है तो दूसरी तरफ कुकुरमुत्ता को। गुलाब जहाँ एक तरफ सभ्य समाज का प्रतीक है वहीं कुकुरतमुत्ता असभ्य समाज का, गुलाब का बड़प्पन इस बात में है कि वह 'कुकुरमुत्ता' द्वारा बार–बार की गयी टिप्पणियों का कोई जबाब नहीं देता। यही से कवि की भूमिका प्रारम्भ होती है, यही वह उदात्तता है जिससे समाज को महान अवधारणाओं की क्षमता का एहसास होता है। इस तरह का उदात्त अन्यत्र असंभव है।

प्रकृति के मानवीकरण में कवि का औदात्यः–

औदात्य की अवधारणा 'सन्ध्या–सुन्दरी' में सिर्फ मानवीकरण की दृष्टि से ही देखा गया हैः–

"दिवासान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है।
वह सन्ध्या–सुन्दरी परी –सी,
धीरे–धीरे–धीरे,
तिमिरांचल मे चंचलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर–मधुर है दोनों उसके अधर–
किन्तु गम्भीर–नहीं है उसमें हास विलास।।"[2]

---

1. कुकुरमुत्ता : निराला रचनावली (1) : हंस मासिक 3 अप्रैल 1941 – पृष्ठ – 50
2. संध्या–साप्ताहिक:परिमल में संकलित:निराला रचनावली(1)मतवाला साप्ताहिकः 24 नवम्बर 1923:पृ0–77

सन्ध्या का आगमन होता है तो स्तब्धता का एक वातावरण सा बन जाता है। स्तब्धता व्यापारों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति निराला जी के औदात्य में ही संभव है, इसमें ध्वनि–चित्र नहीं है, एक शान्ति का चित्र दिया गया है। चित्रों का ऐसा सूक्ष्म एवं सर्वांगपूर्ण चित्रण कुशल–चितेरा और निपुण कलाकार ही कर सकता है। सन्ध्या का इतना सजीव मानवीकरण का चित्र कवि की उदात्त–भावना को ही प्रस्तुत करता है। जैसा कि कविता का शीर्षक ही है सन्ध्या को एक सुन्दरी के रूप में कवि उपस्थित करता है जो दिन के अवसान के बाद आसमान से सजधजकर ऐसी उतर रही है जैसी कोई प्रौढ़ा नायिका नायक से मिलने के लिए सजधजकर आ रही हो। यहाँ पर कवि ने सन्ध्या–सुन्दरी के हास की कल्पना उसके उज्जवल कोमल एवं वेदाग चरित्र से की है ऐसा कल्पना महान अवधारणाओं की क्षमता वाला कवि ही कर सकता है।

सौन्दर्य के मॉसल चित्रण में कवि का औदात्य :–

रीति कालीन कवियों में स्थूलता, ऐन्द्रियता, स्थिरता आयी उसके उत्तर में छायावादी कवियों द्वारा श्रृंगारिकता का एक सफल प्रयोग किया गया है:–

"बन्द कंचुकी के सब खोल दिए प्यार से
यौवन–उभार ने,
पल्लव–पर्यनत पर सोती शेफालिके
मूक आह्वान–भरे लालसी कपोलों के
व्याकुल विकास पर
झरते हैं शिशिर से चुम्बन गगन के।"[1]

---
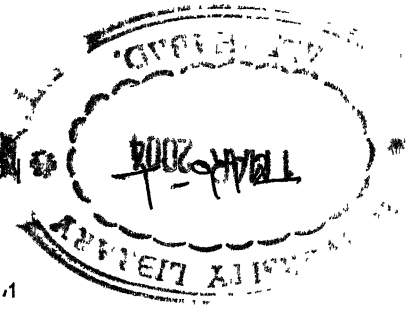
1. मतवाला साहित्य कलकत्ता : परिमल : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 144

सौन्दर्य का उदात्त–चित्रण 'निराला' जैसा पूर्ण–व्यक्तित्व वाला कवि ही कर सकता है। 'शेफालिका' अपने पूर्ण–यौवन पर है, शेफालिका रूपी पुष्प के पूर्णयौवन को कवि ने एक सद्यः यौवन युवती के रूप में देखा है। किसी को उनकी यह कविता यौवन का मॉसल चित्रण लग सकती है। लेकिन किसी महान अवधारणा वाले व्यक्ति के लिए एक दिव्य भव्य चित्र का उदाहरण हो सकती है।

वैयक्तिक दुःखानुभूति का औदात्यः–

कवि निराला अपनी दुःखानुभूति को, जो कि उनकी निजी थी, एक ऐसी उदात्त–स्थिति पर पहुँचा दिया जहॉ वे सारी भौगोलिक और दैहिक सीमाऐं पार कर सार्वजनीन और सार्वकालिक हो गए :–

"पुष्प–मंजरी के उर की प्रिय,
गन्ध–मन्द गति ले आओ।
नव जीवन का अमृत–मन्त्र–स्वर
भर जाओ फिर भर जाओ।
यदि आलस से विपथ नयन हों
निद्राकषर्ण से अति दीन,
मेरे वातायन के पथ से
प्रखर सुनाना अपनी वीन।
x x x
वीणा की नव चिरपरिचित तब
वाणी सुनकर उठूँ तुरन्त।
समझूँ जीवन के पतझड़ में

आया हँसता हुआ बसन्त।।"[1]

यह देखकर आश्चर्य होता है कि दुःखों से निरन्तर घिरा रहने वाला और संघर्षो से जुझते रहने वाला व्यक्ति जब कोई सर्जनात्मक अभिव्यक्ति देता है, तो वह उस पूरे परिवेश में पुष्प– मंजरी की सुगन्ध और नव–जीवन का अमृत मन्त्रसर भर देना चाहता है। ऐसी विरोधी रचना –धर्मिता निराला जैसे महान अवधारणाओं वाले कवि के यहाँ ही संभव है। पतझड के बीच हँसते हुए बसन्त की कल्पना कोई विराट ह्रदय वाला कवि ही कर सकता है।

'सरोज–स्मृति' निराला जी की एक प्रसिद्ध रचना है। कहने को तो आलोचकों ने इसे शोक–गीत की संज्ञा दी है। शोक– गीत का इससे अच्छा उदाहरण हिन्दी–साहित्य में फिलहाल बिरले ही हैं। इससे सरोज के बहाने कवि के कटु जीवनानुभव के विभिन्न–आयाम परत–दर–परत खुलते जाते हैं। लेकिन इस कविता में कवि ने अपने आर्थिक–संघर्षो का लेखा–जोखा प्रस्तुत नहीं किया है बल्कि अपने उत्कृष्ट विचारों को सर्जनात्मक जामा पहनाकर एक उच्च–कोटि की रचना की है।

"धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण,
बाल्य की केलियों का प्राद्रगण।
कर पार कुंज तारूण्य सुघर,
आयी लावण्य भार–थर–थर।
कॉपा कोमलता पर सस्वर,
ज्यों 'मालकौश' नववीणा पर "[2]

पिता के मुख से पुत्री के तारूण्य का वर्णन कोई सहज काम नहीं है। किन्तु निराला जी ने एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जो चित्र दिया है, उससे इस

---

1. बसन्त समीर : परिमल : निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–192
2. सरोज–स्मृति : निराला रचनावली(1) द्वितीय अनामिकाः सुधा 9 अक्टूबर 1935:पृ0–319

दोष का परिहार हो जाता है। यहाँ रचनाकार की सिर्फ कवि दृष्टि है। जब रचनाकार किसी का वर्णन करता है तो उसके सर्वांग़ चित्रण में उसकी दृष्टि उलझती है। तारूण्य का भाव सौन्दर्य के कारण आया है। कवि उसके सौन्दर्य को रूपायित करना चाहता था। सौन्दर्य को सर्वांगपूर्ण बनाने के लिए सतत् प्रयत्नशील है। कवि के रूप में निराला जी की कविता पूरी तरह दोष–मुक्त है। पुत्री का वर्णन करते समय निराला जी के मन में वात्सल्य रस आया वात्सल्य का चित्र खींचते–खींचते यौवन का चित्र आया तो वात्सल्य कट गया तो सम्पूर्ण चित्र एक सफल रचनाकार का हो गया। वात्सल्य और श्रृंगार का समवेत चित्रण अमनोवैज्ञानिक है यहाँ पर कवि पिता नहीं रचनाकार का रूप हो जाता है। क्योंकि वात्सल्य एवं श्रृंगार दुरभि सन्धि की प्रतीक है। वहॉ जाते–जाते कवि की दृष्टि सौन्दर्य पर जुड़ गयी। उस समय कवि के सामने सरोज नहीं थी बल्कि कवि एक नवयुवती का चित्र खींच रहा है। क्योंकि रस की दृष्टि में साधारणीकरण हो गया। रचनाकार पिता नहीं रह गया लड़की एक सामान्य युवती और निराला रूपी पिता कवि रूपी 'निराला' हो गया।

अपनी ही पुत्री के सौन्दर्य को काव्य में तिरोहित करना सहज बात नहीं हो सकती। सरोज के सौन्दर्य का रेखांकन जिसमें वात्सल्य की लहरिल धारा प्रवाहित हो रही हो और यौवन का सौन्दर्य भी झाँकता हो, ऐसा चित्र कवि निराला ही खींच सकते हैं। पुत्री की यौनोचित चंचलता को नववीणा पर 'मालकौश' राग के कोमल स्वरों के झंकृत जैसा बिम्ब देकर कवि ने जिस उदात्त भाव का परिचय दिया है वह अन्यत्र संभव नहीं है सरोज के सौन्दर्य में सम्पूर्ण आकाश और पृथ्वी तथा पृथ्वी के अनेक सर्जनात्मक आयाम मानों एक साथ समाहित हो गए हों। इनको पढ़ने पर कवि वर बिहारी की यह पंक्तियाँ बरबस खींचती हैं:–

"भूषन भार सम्हारिए,
क्यों यह तन सुकुमार,
सूखें पॉव न धरि परै,
शोभा ही के भार।।"

दार्शनिक दृष्टि:–

जिस प्रकार निराला जी प्रकृति में नारी का सौन्दर्य देखते थे उसी प्रकार उनकी रहस्यमयी कविताओं में दर्शन का पुट स्वयमेव झलकने लगता है:–

" होगा फिर से दुर्घर्ष समर;
जड़ से चेतन का निशिवासर।
कवि का प्रतिदिन से जीवन–भर;
भारती इधर है उधर सकल।
जड़ जीवन के संचित कौशल;
जय ईधर ,ईश है उधर सबल माया कर।।"[1]

व्यक्ति की भॉति ही सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के दैन्य–दुरित निवारण–हेतु उनके अन्तस् का करूणा–सागर विक्षुब्ध हो उठता था। तभी वे जड़ता की रावणीवृत्तियों से चेतना के रामत्व का शास्वत संघर्ष कराते हैं और जीवन की हरीतिमा को चर जाने वाली प्रत्येक शक्ति से यावज्जीवन लड़ने की चुनौती स्वीकार करते हैं। वह त्रेता का मिथक है, मध्य–युगीन संस्कृति की आकांक्षा है, और आधुनिक युग की आवश्यकता भी है। संचित कौशल की जड़ता उनकी सारस्वत–साधना के चरण–चूमती है। मायाबी कितना ही बलवान

1. तुलसीदास : निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–305 मासिक–पत्रिका 'सुधा' सन् 1934ई0

क्यों न हो अंततः उसे अध्यात्य एवं देवत्व के आगे विनत–विनम्र होना ही पड़ता है।

अभेद एवं अखण्ड़ता की दृष्टि–

कवि तात्कालिक वैमनस्यता एवं कटुता तथा जाति के नाम पर धर्म के नाम पर आपसी टकराव को समाप्त करके राष्ट्र के नव–निर्माण में जुट जाने का आह्वान करता है–

"हो रहे आज जो खिन्न–खिन्न।
छुट–छुटकर दल से भिन्न–भिन्न,
यह अकल–कला गह सकल छिन्न, जोड़ेगी,
रवि–कर ज्यों विन्दु–विन्दु जीवन
संचित कर करता है वर्षण
लहरा भव–पादव–मर्ष–मन मोड़ेगी।।"[1]

कवि का विश्वास है कि विभिन्न जातियों, धर्मों के बीच जो भेद की दीवारें खड़ी हैं वे टूट जाएँगी। तुलसी की ईश्वरीय कला सभी को परस्पर एकता के सूत्र में आवद्ध करेगी। जैसे सूर्य की किरणें एक–एक बूँद जल खींचकर बादल बनाती है उसकी वर्षा में मुर्झाए प्राणों की हरीतिमा लौट आती है। उसी प्रकार तुलसी का नाना–पुराण निगमागम–सम्मत ज्ञान ऐसे 'मानस' की पुष्टि करेगा जिसके प्रभाव से धरती पर मूल्य एवं नैतिकता का साम्राज्य पुनः स्थापित होगा। यहाँ निराला के इस रविकर ज्यों–ज्यों, विन्दु–विन्दु जीवन पर महाकवि कालिदास के रघुवंश की 'सहसगुण मुत्स्रष्टुम आदत्ते हि रसं रविः' जैसी पंक्तियों का स्पष्ट प्रभाव दिखायी पड़ता है इस धरती पर आसुरी

---

1. 'तुलसीदास': निराला रचनावली पृष्ठ–306 'सुधा मासिक : रचना 1943'

अत्याचार बढ़ता है किन्तु हमारे बीच कोई राम नहीं है जो यह प्रण कर सके कि "निसिचर हीन करऊँ महि" राम का यह शौर्य सुप्त हो गया है उसकी वीरता का आभूषण छिप गया है अतः यह चिन्ता किसी दयालु हृदय में ही जाग सकती है।

आत्म–विश्वास की दृढ़ताः–

कवि निराला का पूरा जीवन उतार चढ़ाव एवं दुख सुख के झंझावातों से परिपूर्ण था। कवि इसके बाद भी अपने आत्म–बल एवं दृढ़ता से पूरी तरह लवरेज दिखाई देता हैः–

करना होगा यह तिमिर पार
देखना सत्य का मिहिर द्वार
बहना जीवन के प्रखर ज्वार में निश्चय
लड़ना विरोध से द्वन्द–समर
रह सत्य–मार्ग पर स्थिर निर्भर
जाना–भिन्न भी देह, निज घर निःसंशय।।"[1]

जहाँ निराला इस तरह की प्रेरणा देते हुए दिखाई देते हैं वहाँ हमें उस वैदिक ऋषि की स्मृति हो आती है जो पूषन् से प्रार्थना करता है किः–

"हिरण्य मयेन पात्रेण
सत्य स्यापिहितम् मुखम्
तत्वं पूषन्नपावृणु!
सत्य धमाये द्रष्टये।।"[2]

1. 'तुलसीदास ' : निराला रचनावली(1) पृष्ठ289: सुधा–मासिक रचना–1934
2. ईशावास्येनिषद् – 15

निराला की महान अवधारणाओं की क्षमता के उदाहरण के रूप में और भी कई कविताएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं। उनकी तीन और प्रसिद्ध कविताएँ, 'सरोज–स्मृति', 'राम की शक्तिपूजा', और 'कुकुरमुत्ता' को यहाँ उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

आवेग–मूलक भयंकरताः–

'राम की शक्ति–पूजा' कवि की एक उत्कृष्ट रचना है, इस रचना में उदात्त–शैली के वे पाँचों तत्व दिखाई देते हैं, जिसका प्रतिपादन लौंजाइनस ने अपने उदात्त–सिद्धान्त में किया है। इसमें एक ओर आकाश, समुद्र, मेघमंडक, वायु–वेग, दिगन्तव्यापी अन्धकार दुर्गम् पर्वत ज्योतिः प्रपात आदि भौतिक परिवेश के विराट बिम्ब हैं। और दूसरी ओर योग–विद्या सहसार आदि चक्रों के अलौकिक बिम्ब हैं। इस कविता में ओज का प्राधान्य है। तत्सम् शब्दों का प्रभावी प्रयोग है, क्रिया पदों से मुक्त सघन शब्दावली का प्रयोग है तथा परिपुष्ट शब्द–योजना है।

"ये अश्रु राम के आते ही मन में विचार,
उद्वेल हो उठा शक्ति–खेल–सागर अपार,
हो श्वसित पवन–उनचास, पिता–पक्ष से तुमुल
एकत्र वक्ष पर बहा वाष्प को उड़ा अतुल,
शत घूर्णावर्त, तरंग–भंग उठते पहाड़
जल राशि–राशि जल पर चढ़ता खाता पहाड़
तोड़ता बन्ध–प्रतिसंघ धरा, हो स्फीत–वक्ष
दिग्विजय–अर्थ प्रतिपल समर्थ बढता समक्ष।"[1]

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : द्वितीय अनामिका : पृष्ठ–332

प्रस्तुत पंक्तियों में हनुमान के क्रोध का विशद्–चित्रण है। कथा कुछ इसप्रकार है:– राम की आँखों में आँसू देखकर उनके प्रिय हनुमान क्रोधित होकर आकाश की ओर दौड़ते हैं शक्ति को निगलने के लिए। हनुमान के उसी क्रोध की विशद्ता की तुलना समुद्र की विशद्ता से की गयी है। ऐसी तुलना कोई महान अवधारणाओं वाला कवि ही कर सकता है, यहा सागर के मर्यादाहीन रूप को चित्रित किया गया है। जल–राशि को मथता हुआ वायु भंयकर शब्द कर रहा है। यह शब्द की भयंकरता कुछ इस प्रकार है मानों बज्र के समान दृढ़ अंग वाले तथा एकादश रूद्र के अवतार हनुमान जी क्रूद्ध होकर अट्टाहास करते हुए आकाश की ओर बढ़ रहे हैं। लेकिन इस भंयकरता में भी जिस तरह की उदात्तता कवि ने दिखाई है, वह निराला के यहाँ ही संभव है।

"उद्दाम प्रेरणा प्रस्तुत आवेग अर्थात्, भावावेग की तीव्रता"

लौंजाइनस का विचार है कि जो आवेग, उन्माद, उत्साह के उद्दाम वेग से फूट पड़ता है और एक प्रकार से वक्ता के शब्दों को विस्मय से भर देता है उसके यथा–स्थान व्यक्त होने से स्वर्ण जैसा औदात्य आता है, वह अत्यन्त दुर्लभ है। भव्य आवेग के परिणाम–स्वरूप हमारी आत्मा स्वतः ऊपर उठकर मानों गर्व से उच्च–आकाश में विचरण करने लगती है, तथा हर्ष एवं उल्लास से भर जाती है। बज्रपात का पलक झपकाए बिना सामना संभव है पर भावावेग के प्रभाव से अविचल–अछूता बना रह पाना संभव नहीं। हमारा स्वभाव है कि हम छोटी–छोटी धाराओं की अपेक्षा महासागर से अधिक प्रभावित होते हैं। औदात्य मनुष्य को ईश्वर के ऐश्वर्य के समीप तक ले आता है। उल्लास–आनन्द, देश–काल–निरपेक्ष होता है जो सदा सबको आनन्दित करता है वही औदात्य आवेग है। विस्मय विमुग्ध करने वाला चमत्कारी–भाव परिवेश मानव में गरिमा को जन्म देता है। उदात्त उत्कृष्ट वही है जो पाठक या स्रोता को विमुग्ध या

अविभूत करे। आवेग दो प्रकार का बताया गया है भव्य और निम्न। एक से आत्मा का उत्कर्ष होता है, तो दूसरे से अपकर्ष। निम्न आवेग में दया, शोक, भय, आदि के भाव आते है। उदात्त सृजन में वस्तुतः भव्य आवेग सहायक होता है।

निराला काव्य का मुखर स्वर है 'उदात्त' उसका सजग गुण है 'ओज'। उसमें ऐसी शक्ति है जो सिद्ध संगीत की तरह मनुष्य की चेतना को ऊपर उठाती है, यह उदात्त–तत्व काव्य की विषय–वस्तु मूर्ति–विधान ध्वनि एवं छन्द की लय में एक साथ व्याप्त रहता है यद्यपि 'उदात्त' भावना के लिए विस्तृत कथा–वस्तु और सूक्ष्म–चरित्र सदा अपेक्षित नहीं होता है थोड़ी से सारगर्भित शब्दों में भी एक विशद् चित्र खींचा जा सकता है। निराला काव्य में प्रवाह है लेकिन फैलाव नहीं है भावना घनीभूत होकर कम से कम शब्दों में प्रकट होती है।

वीर रसात्मक रचना में विस्तार अधिक है कवि का वस्तु–विधान विषयानुसार छोटा और बड़ा होता रहता है। अर्थात् कभी वे लघु–चित्रों की उद्भावना करते हैं और कभी उनका चित्रफलन वस्तु के अनुसार विस्तृत और विषद् होता है। वीर रस की रचनाओं में निराला का काव्य–शिल्प अधिक प्रसरण–शील हो गया है, हम 'महाराज शिवाजी के पत्र' को देखें अथवा जागो फिर एक बार सर्वत्र दूर–दूर तक वीर–भाव को जगाती हुई निराला की पंक्तियॉ वहॉ विराम लेती हैं। जहॉ पाठक एक लम्बे चित्र का आकलन कर लेने के पश्चात् स्वयं विराम चाहता है। जहॉ जहॉ उदात्त की सृष्टि कवि ने करनी चाही है वहॉ वहॉ शिल्प में इसी प्रकार की सह–प्राणता और आकारगत् प्रसार आ गया है। 'राम की शक्ति–पूजा' हो या 'तुलसीदास' इन दोनों रचनाओं में महाकाव्योचित औदात्य लाने का कवि का प्रयत्न रहा है। कवि के छन्दों के वाचन में उतार–चढ़ाव की कला अद्भूत एवं विलक्षण थी। 'यमुना के तट पर'

और 'पंचवटी प्रसंग' तथा 'तुम और मैं' की कल्पना–शीलता देखते ही बनती है। 'बादलराग' और 'कुकुरमुत्ता' जैसी कविताएँ कवि के उदात्तीकरण की प्रवृत्ति को एक नया–आयाम देते हैं। निराला ने अपने काव्य में उदात्त चित्रों को काव्योचित उत्कर्ष दिया है यह उनकी पांडित्य–शैली भी कही जा सकती हैं। अपने काव्य में निराला ने विशाल–चित्र–फलक पर संशलिष्ट और सामासिक भाषा प्रयोगो द्वारा विराट चित्रों की अवतारणा की है।

उज्जवल–उदात्त सांस्कृतिक आवेगः–

'तुलसीदास' कविता के आरम्भ में प्रायः दस छन्दों तक देश की सांस्कृतिक विश्रृंखलता एवं नैतिक आत्मिक विपन्नता का वर्णन किया गया है। ऐसे वातावरण में तुलसी जैसे किसी भी स्वाधीन चेतना–सम्पन्न भारतीय के मन में घुटन–टुटन का अनुभव स्वाभाविक है। इन आरम्भिक छन्दों में आवेग का निम्न–स्वरूप दिखाई देता है।

"वीरों का गढ़, वह कालिंजर
सिंहों के लिए आज पिंजर;
नर हैं भीतर, बाहर किन्नर–गण गाते;
पीकर ज्यों प्राणों का आसव
देखा असुरों ने दैहिक दव,
बंधन में फॅस आत्मा–बॉधव दुःख पाते।
x x x
सोचता कहॉ रे, किधर कूल
बहता तरंग का प्रमुद फूल?
यों इस प्रवाह में देश मूल खो बहता;
'छल–छल–छल' कहता यद्यपि जल,

वह मंत्र मुग्ध सुनता कल–कल

निष्क्रिय; शोभा–प्रिय, कूलोपल ज्यों रहता।"[1]

दुःख के बाद सुख, निराशा के बाद आशा का आनन्ददायी संचार स्वाभाविक है। जैसे रात के बाद दिन आता है, असफलता से सफलता का प्रस्फुटन होता है। उसी प्रकार मध्यकाल की विषम परिस्थितियों के कुहासे को चीरकर तुलसीदास के रूप में नवीन सांस्कृतिक सूर्य, अनुकूलता का प्रभात लेकर प्रादुर्भूत हुआ। दिगन्त–व्यापी जड़ता में यही चेतना भरेगा। कण–कण को यही अपनी भास्वर दीप्ति से आलोकित करेगा। यही सम्पूर्ण देश की आशाओं का केन्द्र बिन्दु है, इसी से सबके स्वप्न साकार होंगे। अतः इसी सूर्योदय के साथ कविवर निराला देशवासियों को जगाते हैं और इस महिमा–मण्ड़ित ज्योतिष्मान विराट् नक्षत्र से प्रेरणा लेने की बात करते हैं। यहाँ उनका भव्य आवेग देखते ही बनता हैः–

"जागो, जागो आया प्रभात्

बीती यह बीती अन्ध रात!,

झरता भर ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वाचल,

बॉधों बॉधों किरणें चेतन।

तेजस्वी है तमजिज्जीवन,

आती भारत को ज्योतिर्धन महिमाबल।।"[2]

तुलसी के रूप में यहॉ उज्जवल उदात्त–संस्कृति का पुनरूदय हो रहा है, कवि भावावेग से किन्तु उदात्तता को समेटे हुए अपने भारत वासियों का आह्वान कर रहा है कि हे भारतवासियों जागों प्रभात हो गया है। अन्धकार समाप्त हो गया है, देखो! युदचायक से ज्ञान की किरणें का ज्योतित झरना झर

---

1. तुलसीदास : निराला रचनावली (1) : पृष्ठ – 282, 283
2. 'तुलसीदास' : निराला–रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 305

रहा है, यहाँ उदात्तता–युक्त भावावेग के समाज को नई, जागृति व नव–चेतना का संचार करता है। युग की कठोर आवश्यकताओं ने इस शक्तिधर शोभाशाली कवि को जन्म दिया है, इसकी ऊर्जस्वित् वाणी में मुमुषुओं को नवीन प्राणोण्या मिलेगी। धरती से छल–कपट द्वेष दंभ, दुगुर्ण, दूर, होंगे शुभ सात्विक भावों का उदय होगा असत् पर रात की प्रतिष्ठा होगी।

यहाँ काव्य के माध्यम से देवी सरस्वती का मुखरित आवेग जाग उठा। जीवन को जड़ता के भावों से भरने वाली तथा दूषित भावों रूपी पंकिल से युक्त जो सैकड़ों काव्य कृतियॉ रूपी नदियों के वेग के साथ बहती रहती हैः–

> "देश–काल के शर से विधंकर,
> यह जागा कवि अशेष छविधर।
> इनका स्वर भर भारती मुखर होएगी,
> निश्चेतन, निजतन मिला विकल।
> छलका शत् शत् कल्मष के छल
> बहती जो वे रागनी सकल सोएगी।"[1]

मानस की कथा में तुलसी के राम ऋषियों का अस्थि–समूह देखकर आँखों में आँसू भर लेते हैं, फिर यही राम ऋषिमुनियों एवं देवताओं को अपने आश्वस्ति वचनों से निर्भय निश्चिन्त बनाते हैंः–

> "अस्थि समूह देखि रघुराया,
> पूछेउ मुनिन्ह लागि अतिदाया।
> निसिचर निकर मुनिन्ह सब खाए,
> सुनि रघुवीर नयन जल छाये।
> x x x
> जानि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा

---

1. तुलसीदास : निराला रचनावली भाग(1) : पृष्ठ – 306

तुमहिं लागि धरिहौं मुनि बेसा।

हरिहऊँ सकल भूमि गरूवाई

निर्भय होउ देव समुदाई।।"[1]

जब यह प्रसंग हमारे ध्यान में रहेगा, तो निराला का आवेग औदात्य कुछ आसानी से समझ में आएगा, क्योंकि यहाँ भी कविराट् तुलसी के प्रयास से वे ऋषिगण–सज्जन बिगुण हर्षित है–

"सुना उर ऋषियों का ऊना,

सुनता स्वर, हो हर्षित दूना।

आसुर भावों से जो भुना, था निश्चल"[2]

लौंजाइनस काव्य के मूल्यांकन का अधिकारी उसे मानता है जिसमें अनुभव की परिपक्वता हो, उसके लिए जरूरी है कि वह शैली तथा संघटन की उन विशेषताओं की उद्घाटित कर सके, जो उदात्तता के आधार–भूत साधन हैं। निराला ने अपने काव्य के माध्यम से जो उदात्तता हम पाठक तक पहुँचायी है उसे इस महाकवि ने न सिर्फ अनुभव किया था, अपितु बहुत नहीं तो कुछ अंश जिया भी था। यह कवि के काव्य की विशेषता ही रही है कि उनका काव्य चाहे यर्थाथवादी हो चाहे व्यक्तिवादी, या सामाजिक यथार्थ हो या वैयक्तिक दुखाःनुभूति रही हो निराला जी अपने आत्म–विश्वास की दृढ़ता, आवेग–मूलक भयंकरता एवं अभेद अखण्डता की दृष्टि को औदात्य के रूप में पिरोने का एक सफल प्रयास किया है। लौंजाइनस के अनुभव की परिपक्वता का भाव स्पष्ट है जो उस परिस्थिति को जाँचा–परखा हो या यों कहें कि वास्तविक जीवन में भी अनुभव किया हो, कवि की जीवन–शैली भी कुछ उसके उदात्तरूपी काव्य से भी मेल खाती थी।

---

1. तुलसीदास : निराला रचनावली भाग(1)
2. सन्दर्भ : रामचरित मानस

नव–जागृति का आह्वानः–

निराला जी ने अपनी कविता 'जागो फिर एक बार' के माध्यम से भारत के गौरवपूर्ण अतीत का स्मरण दिलाकर एवं महापुरूषों को प्रेरणा–स्रोत बनाकर, जन–मानस में नव–जागृति का आवेग भरकर, नई ऊर्जा के साथ राष्ट्र–निर्माण में अपना योगदान देने का आह्वान करते है। एवं नव–जागरण का शंखनाद करते हैः–

"जागो फिर एक बार
समर में अमर का प्राण
गान गाए महासिन्धु–से
सिन्धु नद तीर–वासी!
सैन्धव तुरंगों पर
चतुरंग चमू संग
x x x
फाग का खेला रण
बारहों महीनों में?
शेरों की माँद में
आया है आज स्यार।"[1]

प्रस्तुत कविता के माध्यम से कवि नवजागरण का आह्वान करता हैं कि हे सिन्धुतट के निवासियों अर्थात् भारतीयों! एक बार पुनः नई ऊर्जा के साथ राष्ट्र–निर्माण में एक फिरंगियों को खदेड़ बाहर करने का आह्वान करता है, निराला जी कुछ अतीत के दृष्टान्तों के माध्यम से यहाँ के जन–मानस को यह स्मरण दिलाना चाहते हैं कि उस चतुरंगिणी सेना को स्मरण करो जो घोड़ो पर

1. जागो फिर एक बार भाग (2) : परिमल : मतवाला साप्ताहिक कलकत्ता : पृ0 – 152

सवार होकर महासागर के–से गंभीर गर्जन से युक्त स्वर में युद्ध–गीत गाते हैं। यह युद्धगीत कहने को एक गीत था लेकिन इसमें रसानुभूति के माध्यम से मन को छू लेने वाली गहराई भी थी, साथ ही साथ उसी गहराई में जन–मानस को राष्ट्रीयता रूपी आवेग में सराबोर करने की क्षमता भी। गुरू–गोविन्द सिंह की प्रतिज्ञा किसी भी व्यक्ति के अन्दर स्फूर्ति पैदा करने के लिए संजीवनी बूटी का काम कर सकती है। वे गुरू गोविन्द सिंह का वीरों के मन को मोहने वाला दुर्जय संग्राम का राग गाते हैं, वह राग ऐसा मानों उस राग से भारतीय जन–मानस में उत्साह–रूपी आवेग का संचार हो गया हो। किसी ने ठीक ही कहा था कि गुरू–गोविन्द बारहो महीने खूनों की होलियॉ खेलते थे ऐसे सिंह वीरों का निवास–भूमि में कायर डरपोक लोगों का कोई स्थान नहीं है।

पुरूषत्व का समावेशः–

निराला का स्पष्ट मत था कि वीर भोग्या बसुंधरा। इसका यह अभिप्राय कदापि नही था कि पौरूषवान व्यक्ति को ही जीने का अधिकार है बल्कि उनका इशारा अंग्रेजी शासन की तरह था, वे देशवासियों का आह्वान अपनी कविता के माध्यम से करना चाहते हैं। वे संदेश देते थे कि मेरे देशवासियों अगर आपको इन अंग्रेज फिरंगियों को देश से निकालना है तो पहले अपने पाँवों पर चलने की आदत डालो यानी आत्मनिर्भर बनो।

"सिहों की गोद से
छीनता रे शिशु कौन!
मौन भी क्या रहती वह
रहते प्राण? रे अंजान
एक मेषमाता ही
रहती है निर्निमेष।

दुर्बल वह,

छिनती संतान जब।

जन्म पर अपने अभिसप्त,

तप्त आँसू बहाती है।"[1]

निराला की काव्य शैली उनके काव्य–व्यक्तित्व के आधार पर कई रूपों में अभिव्यक्त हुई है, सबसे वह स्वछन्द विद्रोहिणी शैली है जो उनके विद्रोही व्यक्तित्व व तद्रुप काव्य–वस्तु का प्रतिनिधित्व करती है निराला की काव्य–शैली का यह कदाचित् यह सबसे अधिक सशक्त स्वरूप है, मानव जीवन की सारी विशेषताओं और रूढ़ियों का आपात विनाश करने वाली भाव–चेतना इसी शैली का आश्रय लेकर प्रस्फुटित हुई है, निराला ने अपने इस काव्य शैली के माध्यम से मानव के पौरूष अंशरूपी प्रतीक को उद्धृत किया है। यहाँ कवि अपने आवेगमय कविता के माध्यम से एक दृष्टान्त प्रस्तुत करते हुए जनमानस से यह प्रश्न करता है कि ऐसी शक्ति या साहस किसमें है जो सिंहनी की गोद से उसके बच्चे को बल–पूर्वक ले सके, क्या सिंहनी अपने जीते जी ऐसा होने देगी? फिर उन्होनें भेड़ का दृष्टान्त देते हुए कहा कि सिर्फ भेड़ ही ऐसा करने देगी और वह–पुत्र–वियोग में तड़प–तड़प कर मर जाती है। फिर पुनः प्रश्न करता है कि क्या शक्तिशाली मानव अत्याचार सहकर भी जीवित रह सकता है कदापि नहीं। अर्थात् कवि का स्पष्ट सन्देश अपने देशवासियों के प्रति है कि वीरभोग्या बसुन्धरा! इस प्रकार निराला जी अपने देशवासियों का आह्वान करते हैं कि अपनी मिट्टी, अपनी संस्कृति एवं अपने पौरूष पर भरोसा करें, उनका समस्त काव्यरूपी व्यंग्य वाण चाटुकार भारतीयों के ऊपर होता था। वे उनके जमीर को काव्यमयी व्यंग्य बाण से झकझोरते थे और राष्ट्र की मुख्य धारा में

---

1. जागो फिर एक बार (2) : परिमल : निराला रचनावली भाग (1) पृ0–153

शामिल हो जाने का आह्वान करते थे। इस प्रकार निराला जी का देश–प्रेम मुखर है, भेड़ और बकरी की तरह निरूपाय एवं दीन बनकर विदेशी दासता का अभिसप्त जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा मातृभूमि पर शीश चढ़ा देना कहीं अधिक अच्छा है।

क्रान्ति का मानवीकरणः–

निराला ने अपने 'बादलराग' कविता के माध्यम से प्रकृति के विप्लवकारी स्परूप का वर्णन कर रहे हैं। कवि आवेग से युक्त एवं मानवीकरण से परिपूर्ण बादल को पुचकारते हुए मानों उलाहना दे रहा हैः–

"बार–बार गर्जन,
वर्षण है–मूसलाधार!
हृदय थाम लेता है संसार
सुन सुन घोर बज्र हुकार!
अशनिपात से शायित उन्नत–शतशतवीर,
क्षत–विक्षत हत अचल शरीर
गगनस्पर्शी स्पर्द्धा धीर।।"[1]

यहाँ कवि अपने 'बादल–राग' कविता के माध्यम से यह दर्शाना चाहता है कि क्रान्ति के समय बड़े गर्वीले वीर धराशयी हो जाते हैं। अर्थात क्रान्ति के लहर के सम्मुख कोई भी शक्ति टिक नहीं पाता। निराला जी क्रान्ति का आह्वान करते हैं, सच्चाई भी यही है कि निराला का यह काल बंगाल में रहने का काल था उस समय बंगाल प्रदेश–क्रान्तिकारियों की कर्मभूमि बनी हुई थी, पूरे देश में मानों जुनून छाः गया था । सच्चाई तो ये है कि कवि एक

---

1. बादल–राग : निराला रचनावली भाग (1) पृ0 –

नवजागरण का आह्वान इस काव्य के माध्यम से करना चाहता है। कवि कहता है कि ये विप्लव के बादल! तुम बारबार गरजते हो अथवा मुसलाधार वर्षा करते हो, यानी सामन्ती समाज को चुनौती कवि अपने आवेग–पूर्ण काव्य के माध्यम से देना चाहता है। तुम्हारे घोर और भयंकर गर्जन को सुनकर और मुसलाधार वर्षा से त्रस्त्र होकर संसार के प्राणी अपना हृदय थाम लेते हैं अर्थात भय से सिहर उठते। तुम वीरों के समान अपना मस्तक ऊपर को उठाए हुए उन सैकड़ो पर्वत पर बिजलियॉ गिराकर अचल शरीरों को विदीर्ण कर देते हैं जो ऊँचाई और धैर्य में आसमान के बराबरी काव्य करने वाले होते हैं। संबंधित काव्य के माध्यम से कवि ने बादल की तुलना तत्कालीन अंग्रेजी शासक से किया है। कवि कहता है कि 'बादल' की तरह धीरे–धीरे कवि ने पूरे सामाजिक परिवेश व वातावरण को चूसा है।

छायावादी काव्य में यद्यपि प्रसाद, पन्त, निराला एवं महादेवी सभी ने आत्मानुभूति को वाणी दी तथा निराला का स्वर ओजस्वी रहा, 'बादलराग' लिखने वाले निराला के स्वर में बादल की गुरूगर्जना अवश्य हुई है कवि को वह गर्जना स्पष्ट रूप से सुनाई पड़ती है :–

"झूम–झूम मृदु गरज–गरज घनघोर!
राग–अमर! अम्बर में निज रोर!
झर–झर–झर निर्झर–गिरि–सर में,
घर, मरू, तरू–मर्मर, सागर में,
सरित्–तड़ित–गति–चिकत पवन में,
मन में विजय गहन–कानन में,
आनन–आनन में, रव–घोर–कठोर–

राग–अमर ! अम्बर में भर निज रोर!"[1]

अनुभूति और अभिव्यक्ति की ईमानदारी तथा सच्चाई निराला की सबसे बड़ी विशेषता है। इस खास अर्थ में निराला प्रगतिवाद से जुड़ते हैं, उनके काव्य में विशाल जनःमानस की पीडा तथा गुरू–गर्जना का विराट दृश्य परिलक्षित होता है। और कवि बादलरूपी गुरू का ज्ञान की वर्षा का आह्वान करता है, तथा जन–मानस में जन–जागृति तथा देश भक्ति का जज्बा भरने का कवि का अनथक प्रयास है। महाकवि ने उपर्युक्त कविता में स्पष्ट किया है कि बॉधाऍ अगर आवें भी तो उसे दूर करें या और नई ताकत से उसका सामना करें।

राम की शक्ति–पूजा में नाटकीय तत्वः–

निराला 'राम की शक्तिपूजा' में नाटकीय काव्य शैली का समावेश बड़े ही चातूर्यपूर्ण ढ़ग से किया है। और यह निराला का 'स्वगत् कथन' है। संवादों के माध्यम से निराला ने अपने आवेग–मूलक विचारों की सशक्त अभिव्यक्ति 'राम की शक्ति–पूजा' के प्रति की है। आवेग की अभिव्यक्ति ही नाटकीय तत्व का मूल गुण है। यह आवेग स्वयं ही अपने आप से प्रश्न करने लगता है, आवेग का उतार–चढ़ाव आद्योपान्त इस 'राम की शक्ति पूजा' में छल कर रहा है नाटक में जब वह व्यक्ति आत्महत्या करने के लिए तैयार हो रहा था कि तब तक शक्ति राम का हाथ पकड़ लेती है यही आवेग का उतार–चढ़ाव इस कविता में स्पष्ट झलकता हैः–

"है अमानिशाः उगलता गगन घन अन्धकार
खो रहा दिशा का ज्ञानः स्तब्ध है पवन चारः
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भू–धर ज्यों ध्यान मग्न केवल जलती मशाल।

---

1. बादल–राग : निराला रचनावली भाग – (1)

स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,
रह–रह उठता जन जीवन में रावण–जय–भय,
जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपु दम्य श्रान्त;
एक भी अयुत–लक्ष में रहा जो दुरा कान्त,
कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार–बार;
असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार–हार।"[1]

यहाँ निराला के राम जो कि एक सामान्य मानव हैं उनके विरूद्व महाशक्ति हैं। जो राम की सारी युक्तियों को अपनी माया से धराशायी कर देती है। महाशक्ति अन्याय का प्रतीक रावण का साथ देने लगती है, महाशक्ति को रावण का पक्ष लेना मानो, चाँद की शीतलता को ग्रहण लग गया हो ऐसे संघर्षरत् पात्रों के नाटकीय अंतर्द्वन्द लक्ष्मण, हनुमान, विभीषण आदि की पृष्ठभूमि के लिए प्रकृति का यह दृश्य कवि ने उकेरा है। निराला के राम युद्ध–भूमि से वापस आकर गहन मंत्रणा में लग जाते हैं, हर किसी के मन में युद्ध का आवेग तो है लेकिन अपने आराध्य एवं युद्ध के मुखिया राम के अगले ओदश की प्रतीक्षा में है, उस अवसर पर रात्रि के समय का चित्र खींचा है महाकवि ने । अमावस्या की रात है, आकाश निरन्तर अन्धकार का बमन कर रहा है। अर्थात् आकाश में निरन्तर अन्धकार बढ़ता जा रहा है परिणाम स्वरूप दिशाओं का ज्ञान, दिशाओं का सूचक संकेत चिन्ह लुप्त हो गए हैं और पवन का संचार अवरूद्ध हो गया है पर्वत के पीछे विशाल समुद्र निर्बाध वेग से गर्जन करता हुआ उमड़ रहा है उधर पर्वत मानों समाधिस्थ हो गया है। अन्धकार के आतंक से साँस रोककर खड़ा हुआ है, सच तो यह है कि 'राम की शक्ति पूजा' में प्रकृति का चित्रण पूरी तरह मनोवैज्ञानिक तथा शैली वैज्ञानिक दोनों दृष्टियों

---

1 राम की शक्ति पूजा : निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ – 330 द्वितीय अनामिका : 23 अक्टूबर 1936

से अत्यन्त मार्मिक है, चाहे वर्ण–योजना हो बिम्ब–रचना हो, या लय विधान, सभी मे विरोध शोध जटिलता आदि गुणों का अत्यन्त चमत्कृत प्रयोग किया गया है। अपने युग की विषम् परिस्थितियों के विरूद्ध कवि की प्रतिभा का संघर्ष अथवा विजय का विश्वास।

कथा–वस्तु का सूक्ष्म–चरित्र–चित्रण सदा अपेक्षित नहीं है महाकवि की ये विशेषता रही है कि थोड़े से सारगर्भित शब्दों में एक विशद् चित्र खींच देते है। उन्होने संसार को प्राण संघात का सिन्धु कहा इतने से ही शक्ति की लहरों का चित्र सामने आ गया। सदा उदात्त–युक्त एक ही रचना में निरन्तर उदात्त–स्वर ही सुनाई दे तो श्रोता भी विचलित हो उठेगा। इसीलिए तो कहा जाता है कि निराला का काव्य विरोधी तत्वों का सन्तुलन है। उदात्त एवं अनुदात्त का समन्वय। अन्धकार एवं प्रकाश (मशाल) का समन्वय। 'राम की शक्ति–पूजा' में एक ओर राम का पराजित मन है तो दूसरी ओर लक्ष्मण का अमोद्य तेज है एक ओर कवि मे आवेग से युक्त युद्ध की विभिषिका का वर्णन है तो दूसरी ओर माँ द्वारा राम को राजीव नयन कहा जाना विरोधी तत्वों की वह विषमता और उनका सन्तुलन, विषम–वस्तु, मूर्ति–विधान और छन्द प्रवाह सर्वत्र देखा जा सकता है। महाकवि के काव्य में प्रवाह है लेकिन फैलाव नहीं है भावना धनीभूत होकर कम से कम शब्दों में प्रकट होती है। निराला का काव्य सहज अथवा सुबोध नहीं है। इसका कारण कुछ लोग भाषा की क्लिष्टता मानते है, जबकि सच ये है कि भाव की गहराई व्यंजना का बॉकापन शब्दों की ध्वनि और छन्द की लय का अनूँठापन भी इसका कारण है थोड़ा परिश्रम करने पर जैसे मिल्टन के उदात्त काव्य का रस मिलने पर उसके आगे अन्य कवियों की रचनाऐ फीकी लगती हैं, वैसे ही निराला काव्य का एक बार रस मिलने पर दूसरे कवि कम अच्छे लगेंगें।

आचार्य 'रामचन्द्र शुक्ल' ने निराला जी के इस काव्य को संशलिष्ट कहा है। संबंधित पंक्ति में कवि ने शिविर के इर्द–गिर्द के परिवेश का वर्णन किया है आकाश अन्धकार उगल रहा है हवा का चलना रूका हुआ है पृष्ठभूमि में स्थित समुद्र गर्जनकर रहा है, पहाड़ ध्यानरथ है और मशाल जल रही है। तात्पर्य यह है कि ये सब के सब कियाशील है हवा का रूकना और पहाड़ का ध्यानास्थ होना भी अनायास नहीं है ये उनकी कियाऐं है। ये क्रियाशील ही इस बिम्ब को प्रभावशाली बनाते हैं। यहॉ कवि अपने मानस का प्रतिबिम्ब वाह्य–जगत् में देखता है कवि का मानस आवेग से पूर्ण है वह हृदय की भावानुभूति पहाड़ो में देख रहा है पहाड़ रूपी हृदय मानों अग्नि–वर्षा कर रहा है। यहॉ मानस का बिम्ब वाह्य जगत में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

कृतिवास की रामायण में इन्द्र की प्रार्थना पर ब्रम्हा अकालबोधन द्वारा राम को देवी की आराधना करने का परामर्श देते हैं। किन्तु 'राम की शक्ति–पूजा' में जामवन्त अत्यन्त प्रभावी रीति से राम के गौरव के अनुकूल इस प्रकार का परामर्श देते है :–

"हे पुरूष सिंह, तुम भी यह शक्ति करो धारण,
आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर,
तुम वरो विजय संयत प्राणों से प्राणों पर;
रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त,
तो निश्चय तुम हो सिद्ध, करोगे उसे ध्वस्त,
शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन,
छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो, रघुनन्दन!
तब तक लक्ष्मण हैं महावाहिनी के नायक,

मध्य भाग में, अंगद दक्षिण–श्वेत सहायक।"[1]

बंग्ला रामायण में एक सौ आठ कमल से दुर्गा–पूजा करने का प्रस्ताव है। विभीषण कहते है कि रावण के समान शक्ति उपासना करके आप भी महाशक्ति को अपने वश में कर लो जाम्बवान कहते हैं शक्ति का सिंह है, आप भी पुरूषों में सिंह है। आप भी अपने ऊपर शक्ति को धारण करें, फिर तो बुराई का सर्वनाश सुनिश्चित है यहाँ महाकवि का इशारा है कि आराधना का आराधना से ही उत्तर दिया जा सकता है। यानी महामायावी रावण को उसी के छल–रूपी ज्ञान से पराजित किया जा सकता है। यहाँ कवि यह स्पष्ट करना चाहता है कि जब पापी रावण उपासना के दम पर शक्ति का सहयोग प्राप्त कर सकता है तो आप उपासना के सिद्ध पुरूष हीं है । यहाँ महाकवि अपने इस काव्य के माध्यम से यह जन–मानस को संदेश देते हैं कि आराधना का दृढ़ आराधना से दो उत्तर, यदि फिर भी बुराई नष्ट न हो तो जैसे को तैसा के मार्ग पर चलना चाहिए। यानी 'सठे–साठ्यम् समाचरे'! की नीति पर चलकर बुराई पर विजय प्राप्त करो और जनता को मुक्ति दिलाओं, यहाँ कवि ने अपने राम से बुराई पर विजय दिलाने में सफलता भी प्राप्त की है। कवि ने एक अनुभवी एंव बुजुर्ग पात्र के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि तामसी शक्ति की अपेक्षा सात्विक शक्ति कहीं अधिक प्रभावकारी होती है। पाठक और श्रोता को इस काव्य को पढ़ने पर उनमें सिर्फ आवेग ही उत्पन्न नहीं होता बल्कि रोमांच भी उत्पन्न होता है। निराला द्वारा बुजुर्ग जाम्बवान द्वारा व्यूह रचना करके एवं युद्व वर्णन को सजीवता प्रदान करके मानों समूचे काव्य को ही नया आयाम दिया है, महाकवि ने अपने काव्य में मानों बुराई पर अच्छाई की विजय के लिए समूचे देशवासियों का आह्वान किया है।

---

1. 'राम की शक्ति–पूजा' : द्वितीय अनामिका : निरालाा रचनावली भाग (1) पृ0–335, रचना 23 अक्टूबर 1936

कवि का विद्रोही स्वरः–

महाकवि ने अपने आवेगमय काव्य के माध्यम से बादल से प्रार्थना की है कि हे गम्भीर स्वर वाले बादल तुम इतनी कठोरता से बरसो कि सम्पूर्ण प्रकृति में एक नव–जीवन का संचार हो जाएः–

"घन–गर्जन से भर दो वन।
तरू तरू पादप–पादप तन।
अब तक गुंजन–गुंजन पर
नाचीं कलियॉ छवि निर्भर;।
भौरों ने मधु पी–पीकर,
माना, स्थिर–मधु–ऋतु कानन।
गरजो हे मन्द, बज्र स्वर,
थर्रारे भूधर–भूधर,
झरझर झरझर धारा झर,
पल्लव–पल्लव पर जीवन।।"[1]

नव–जीवन निर्माण के लिए राग–रंग का वातावरण हितकर नहीं है इसी कारण कवि मेघ से गर्जन को प्रार्थना करता है वह उनके प्रलयंकारी रूप में नवीन सृष्टि के निर्माण का दर्शन करता है, यह कवि प्रकृति–रूपी बादल से प्रार्थना करता है कि हे बादल! तुम अपने गर्जन–रूपी आवेगमय वर्षा से वन के प्रत्येक वृक्ष और पौधे को भर दो, अब तक अपने सौन्दर्य पर जीवित रहने वाली अर्थात् सौन्दर्य से भरी हुई कलियाँ भौरों के गुंजन को सुन–सुनकर नाचती है। भौरों ने उनका मधु पी–पीकर वन में बसन्त–ऋतु की शोभा को स्थायी माना है। प्रकृति का मानवीकरण करते हुए निराला ने पूँजीवादी वर्ग को भौंरा एवं

---

1. 'घन गज्रन से भर': दो मन : गीत : द्वितीय अनामिका : पृष्ठ–35

सर्वहारा वर्ग को मधु की उपमा से संबोधित किया है, कवि कहता है हे गम्भीर स्वर वाले बादल! तुम इतनी गम्भीरता कठोरता से गरजो कि तुम्हारा स्वर सुनकर प्रत्येक पर्वत भय से काँप जाय और उनसे झर–झर पानी के झरने फूट पड़े तथा पत्ते–पत्ते में नव–जीवन का संचार हो उठे। यहाँ कवि ने प्रकृति का मानवीकरण किया है, भाषा में ध्वन्यात्मकता द्रष्टव्य है।

विद्रोह का आह्वान :–

निराला क्रांतिकारी कवि हैं। शक्ति का उपासक कवि चुपचाप तत्कालीन व्यवस्था का अन्याय कैसे सह–सकता है? 'महाराज शिवाजी' का पत्र में ऐतिहासिक प्रसंग द्वारा पराधीन राष्ट्र के सुप्त संस्कारों को जगाते हैं :–

"आ रही है याद अपनी मरजाद की ,
चाहते हो यदि कुछ प्रतिकार।
तुम रहते तलवार के म्यान में,
आओ वीर स्वागत् है।
सादर बुलाता हूँ,
है जो बहादुर समर के।
वे मर के भी,
माता को बचायेगे।
शत्रुओं के खून से,
धो सके यदि एक भी तुम माँ का दाग।
कितना अनुराग देशवासियों का पाओगे।
निर्जर हो जाओगे–

अमर कहलाओगे।।"[1]

निराला की आस्था का आधार भारतीय जनता की अजेय शूरता है। पारम्परिक भेद–भाव को भुलाकर संगठित रूप से विदेशी शासकों के विरूद्ध मोर्चा जमाने की प्रेरणा है। उपर्युक्त काव्य में देश–प्रेम के प्रति कवि की अर्न्तरात्मा की आवाज बाहर निकल पड़ती है। इसलिए वह अपने प्रबल–प्रतिद्वन्दी जयसिंह से अपने सभी भेद–भाव भुलाकर उसी के माध्यम से जन–जागरण का आह्वान की। आज का समय आपस में लड़ने का नहीं अपितु संगठित होकर फिरंगियों का विरोध करने का है। कवि का कहना है कि हे वीर! मेरे पास आओ मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ और तुमको अपने पास आने के लिए सादर आमंत्रित करता हूँ जो बहादुर होते हैं वे प्राण त्याग–कर भी मातृ–भूमि की रक्षा करेंगे। यानी कवि जन–सहयोग का आह्वान करता है कि आओ हम सभी मिलकर अपनी मातृ–भूमि की रक्षा करने का वचन लें। कवि अपने काव्य–रूपी आवेग को नई दिशा देते हुए कहता है कि हे देशवासियों! यदि तुम शत्रुओं के खून से भारत–माता का एक भी दाग धो सकोगे तो अपने देशवाशियों का अटूट स्नेह अपने आप प्राप्त हो जाएगा ऐसा करके तुम तो देवता कहलाओगे और इतिहास में अमर बन जाओगे। अंग्रेजियत में रंगे हुए, अंगरेज भक्तों पर कवि ने तीखी टिप्पणी की है निराला ने ऐसे चापलूसों को राष्ट्र–द्रोही की उपमा से संबोधित करने का प्रयास किया है।वे इन चापलूसों को अपने राष्ट्र का दुर्भाग्य तक की संज्ञा दी है। इस तरह की जन–चेतना वह भी एक काव्य के माध्यम से निराला जैसा उच्च–कोटि का कवि ही कर सकता है।

निराला की इस कविता में मुहावरेदार लोक–व्यवहार की भाषा भी द्रष्टव्य है। महाकवि अपने देश के उन गद्दारों को अपने काव्य–मयी व्यंग वाणों से ऐसे भेदते थे मानों जंगल में जिस तरह हिरण या अन्य जंगली जानवरों को देखकर

---

1. महाराज–शिवाजी का पत्र : उपरा : पृष्ठ – 82

शेर उनके शिकार के लिए दौड़ता हो, यहाँ कवि जयसिंह! के माध्यम से इनको एक अवसर दे रहा है कि देश–सेवा से बढ़कर और कोई कार्य नहीं, फिर कवि देश के सभी नागरिको को विशेषकर जो उदासीन है, चापलूस है, उनमे राष्ट्रीयता का संचार कर रहा है और जयसिंह के मध्यम से कहता है:–

"धीमान् कहते हैं तुम्हें लोग
जय सिंह! सिंह हो तुम
खेलो शिकार खूब हिरनों का
याद रहे–
शेर कभी मारता नहीं है शेर,
केसरी,
अन्य वन्य पशुओं का शिकार करता हैं।"[1]

निराला लौह–पुरूष थे। आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक किसी प्रकार की वाधाएं उनके मजबूत कन्धों को झुका नहीं पायी। वो आजीवन एकाकी समस्त समाज से जूझते रहे, उनका यह अद्म्य साहस 'छत्रपति शिवाजी' कविता में शिवाजी के क्षत्रियत्व के साथ प्रकट हुई, स्वाभाविक है कि कवि का जन्म परतन्त्र भारत में हुआ था। देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, इस गुलामी के लिए कवि फिरंगियों से अधिक जिम्मेदार स्वयं अपने देशवासियों को मानता है, कवि यहाँ के बुद्धजीवियों विशेषकर पढ़े–लिखे पूँजीपति वर्ग को कोसते हुए कहता है कि तुम सभी को लोग विद्वान कहते हैं तुम कैसे विद्वान हो मैं माना कि तुम विद्वान हो तुम्हें राष्ट्र की सुविधाओं के दोहन का हक है परन्तु जरा सोचो! जिस प्रकार शेर कभी शेर का शिकार नहीं करता उसी प्रकार तुम

---

1. 'महाराज शिवाजी का पत्र' : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ–162

सभी शेर सिर्फ हिरन रूपी फिरंगियों का शिकार करो और राष्ट्र को गुलामी एवं दासता से मुक्ति दिलाओ।

कवि यहॉं देशवासियों को आगाह करते हुए कहता है कि हमारी पारम्परिक फूट सबसे बड़ी कमजोरी है और फिरंगियों की ताकत! वे राष्ट्र के समस्त नागरिकों का आह्वान करते हैं कि जिस दिन हम सभी एक हो जाएं फिर कोई भी विदेशी हमारी भारत–माता को हथियाने का विचार भी मन में नहीं ला सकता। कवि के अनुसार एकता ऐसी ढ़ाल है जिसे विखण्डित करने का माद्दा किसी विदेशी में नहीं है। इसी एकता का आह्वान कवि इस आवेगमय कविता के माध्यम से करता है:–

> "वीर!– सर्दारों के सर्दार!–महाराज!
> बहु–जाति, क्यारियों के पुण्य–पत्र–दल–भरे।
> आन–बान शान वाले भारत–उद्यान के,
> नायक हो, रक्षक हो,
> बासंती सुरभि को हृदय से हरकर,
> दिगन्त भरने वाला पवन ज्यों।
> वंशज हो–चेतन अमल अंश,
> हृदयाधिकारी रविकुल–मणि रघुनाथ के ।"[1]

महाकवि ने यहाँ जयसिंह के व्यक्तित्व व कृतित्व का चित्रण किया है रघुकुल गौरव श्रीराम के माध्यम से भारत के गौरवमयी अतीत का वर्णन है। देशभक्ति की व्यंजना कूट–कूट भरी गयी है कवि जयसिंह! के माध्यम से देश के पूँजीपतियों बुद्धिजीवियों का आह्वान करता है कि आप राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़े जाओ, जुड़ो ही मत बल्कि हम गरीब एवं अनपढ़ जनता को नेतृत्व

---

1. महाराज शिवाजी का पत्र : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 156

प्रदान करो कवि कहता है कि आप भारत रूपी बगिया के माली एवं स्वामी हो। आप भारत रूपी उद्यान में उसी प्रकार नव–चेतना भरते हैं जिस प्रकार बसन्त–कालीन वायु बासन्ती सौरभ को सारी दिशाओं में भर देती है। आइए! देश की एकता के डोर में बॅधकर एक स्वतन्त्र एवं नव–भारत के विकास में एक कड़ी बन जॉए।

अतीत की स्मृतिः–

कवि निराला के मन में यमुना को देखकर भारतीय संस्कृति से संबधित समस्त अतीत जागृत हो उठता है वे कथाओं का सार लेकर एवं अपने पिछले अनुभवों का सार अपनी कविता 'यमुना के प्रति' के माध्यम से जन–आह्वान करता हुआ कहता है किः–

"मुक्त हृदय के सिंहासन पर।
किस अतीत के ये सम्राट
दीप रहे जिनके मस्तक पर
रवि–शशि–तारे–विश्व–विराट?
निखिल विश्व की जिज्ञासा–सी,
आशा को तू झलक अमन्द।
अन्तःपुर की निज शय्या पर
रच रच मृद छन्दों के बन्द।।"[1]

प्रकृति के माध्यम से कवि रहस्यानुभूति की अभिव्यक्ति करता हुआ कहता है कि तेरे उन्मुक्त हृदय के इस सिंहासन पर किस विगत् युग के सम्राट विराजमान हैं जिनके मस्तक पर ये सूर्य चन्द्र एवं होर विशाल–विश्व–दीपक की

---

1. यमुना के प्रति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ–116

तरह चमकते रहते हैं। यह कवि यमुना के माध्यम से सुदुर अतीत की किन खोई हुई स्मृतियों को जगाने का प्रयत्न कर रहा है। लघु लहरों के मधुर स्वरों में किस अतीत काल की गहरी विशाल–क्रीड़ा की स्मृति में गुनगुना रही है। मानों तुम्हारे हृदय पर मादक ध्वनियाँ मौन पवन में गूँजती रहती है। तुम किस प्रेमी के ध्यान में डूबी हुई नित्य–नवीन संगीत भरे गीतों की रचना करती रहती हो, जिस समय समूचा राष्ट्र सोता है और एक खामोशी का वातारण रहता है उस समय भी तेरी कल–कल ध्वनि का मधुर संगीत गुंजायमान रहता है। यहाँ महाकवि ने जन–मानस को यमुना का मानवीकरण कर निरन्तर आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

युद्धोन्माद का चित्रः–

निराला जी मानव को विलासमय जीवन त्यागने और कुछ कर गुजरने का आह्वान करते हुए कहते हैं कि हे देशवासियों राष्ट्र के विकास में युद्ध–स्तर पर योगदान दो, कवि राष्ट्रीयता की दुन्दुभी बजाते हुए कहता है किः–

"मेरी झररर् झरर, दमामे
घोर नकारों की है चोप,।
कड्–कड्कड् सन्सन् बन्दूकें
अररर अररर अररर तोप।
धूम–धूम है भीम रणस्थल,
शत् शत् ज्वालामुखियाँ घोर।
आग उगलती दहक–दहक दह,
कँपा रही भू नभ के छोर
फटते लगते हैं छाती पर,
घाटी गोले सौ–सौ बार।
उड़ जाते हैं कितने हाथी,

कितने छोड़े और सवार।"

यहाँ कवि युद्ध का एक भयानक चित्र प्रस्तुत करता है और यह भी दर्शाने का प्रयास करता है कि युद्ध से आर्थिक शारीरिक हानि ही नहीं होती है बल्कि युद्ध मानव के लिए एक विनाश का मार्ग प्रशस्त करती है। जिससे न सिर्फ एक राष्ट्र एक मनुष्य का नुकसान होता है वरन् सम्पूर्ण मानवता कलंकित होती है। साथ ही साथ कवि यह भी अपने अतीत के माध्यम से बताना चाहता है कि इसी राष्ट्र के आन–बान और शान की रक्षा के लिए पूर्वजों ने अपने प्राण कैसे हँसते–हँसते न्योछावर कर दिये। प्रवाह–पूर्ण शैली में युद्ध का सजीव चित्रण है। सच तो यह है कि यह वर्णन हमें वीरगाथा काल के युद्ध वर्णनों का स्मरण करा देती है।

मरण का स्वागत:–

'मरना नहीं मर कर अमर होना' यह था निराला के जीवन का आदर्श । यह बात नहीं है कि महाकवि को निराशा और उदासी ने न घेरा हो किन्तु उसके पार भी कुछ देखने का साहस संजोए रहे। कवि कहता है:–

"गिरिपताक उपत्यका पर,
हरित तृण से घिरी तन्वी।
जो खड़ी है वह उसी को,
पुष्पभरण अप्सरा हैं।
जब हुआ बंचित जगत् में,
स्नेह से , आमर्ष के क्षण।
स्पर्श देती है किरण जो,
उसी की कोमलकरा है।।"[1]

1. मरण को जिसने बरा है : अपरा : पृष्ठ – 142

जो मृत्यु से नहीं डरता है उसी को जीवन का आनन्द प्राप्त होता है, अन्यथा व्यक्ति की सारी जिन्दगी मृत्यु में भय में ही व्यतीत हो जाती है। छायावादी कवि की प्रमुख विशेषता प्रकृति में प्रेयसी का दर्शन करना भी है। महाकवि की प्रमुख विशेषता प्रकृति में प्रेयसी का दर्शन करना भी है। महाकवि भी पहाडों पर तथा उपवनों में हरी घास से सजी हुई जिस कोमलांगी नारी के दर्शन होते हैं वह मृत्यु से न डरने वाले व्यक्ति को पुष्पों से भर देने के लिए प्रस्तुत खड़ी अप्सरा है जब मैं संसार में प्रेम से बंचित हुआ और मेरे जीवन में क्रोध के अवसर आए तब मुझे अपने स्पर्श से जो सान्त्वना देती है वह किरण उसी रहस्यमयी सत्ता का एक कोमल हाथ है, यहॉ कवि का दार्शनिक चिन्तन पद्धति भी मुखर है। जितना ही अपने जीवन में मृत्यु की विकरालता का अनुभव कर रहे थे। जितना ही उनका शरीर विष से दग्ध हो रहा है उतना ही स्वर कोमल और शान्त होता था। इसी आवेगपूर्ण एवं ओजस्वी कवि (जो मानव के बिना मृत्यु की वैतरणी पार करने वाले) का नाम है निराला।

भविष्य के प्रति आशाः–

निराला का काव्य भविष्य के प्रति आशा का संदेश भी देता है, तथा पूरे में कवि सकारात्मक सोच की तरफ बढ़ता है, सन् 1942 के 'भारत छोड़ों' आन्दोलन के समय देश ने अपना सब कुछ दाँव पर लगा दिया था। यहॉ कवि निराला भारतीय इतिहास के गौरवपूर्ण अतीत की ओर संकेत करते हैं:–

"यह देश! उधर अदम्य होकर
बढ़ता ही चला राष्ट्र इस्लामी वेग प्रखर।
पृथ्वी सॅभालने में असमर्थ हुई निश्चय,
दुर्दान्त क्षत्रियों में जो था प्राणों में भय।
उन इतर प्रजाओं में छाया उसका तुषार

x x x

अधिकार चाहती ही देना, सुनकर पुकार,
प्राणों की पावन् गूँथ हार।
अपना पहनाने को अदृश्य प्रिय को सुन्दर,
ऊँचा करने का अपर राग से गाया स्वर।"[1]

यहाँ कवि ने भारतीय इतिहास और संस्कृति का ओजस्वी वर्णन लिया है सम–सामयिक वातावरण में देश–भक्ति की प्रेरणा प्राप्त करने के लिए अतीत के गौरव से परिचित होना सर्वथा आवश्यक होता है। कवि को मानों अतीत की घटनाऐं एक–एक करके चित्रपट के समान ऑखों के सामने घूम जाती है। जिस प्रकार निपुण सृष्टि नवीनता चाहती है और दूसरे लोगों को उसके अधिकार गिनकर अथवा बहुत ही सीमित रूप में देना चाहती है। यहॉ कवि देशवासियों को यह बताना चाहता है कि जिस प्रकार इस्लामी राष्ट्र का कार्य–क्षेत्र बढ़ता गया उसी प्रकार अंग्रेजों का भी राज उत्तरोत्र बढ़ता जा रहा है कवि के माथे पर चिन्ता की लकीर साफ झलकती है।

निराला के काव्य में 'उद्दाम प्रेरणा प्रस्तुत आवेग' अपनी अलग पहचान रखता है उदद्राम का शाब्दिक अर्थ है– जिसमें कोई बन्धन नहीं हो यानी बन्घन–रहित। निराला ने अपने काव्य में बन्धन या दबाव को कही कोई स्थान ही नहीं दिया। समूचा काव्य निर्बन्ध है। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि कोई कवि सदा उदात्त एवं ओजपूर्ण कविताएं नही कर सकता है। एक ही रचना में यदि निरन्तर उदात्त–स्वर ही सुनाई दे तो श्रोता विचलित हो उठे। निराला के काव्य की विशेषता है विरोधी तत्वों का सन्तुलन, उदात्त एवं अनुदात्त का समन्वय इसके कथा–वस्तु, चरित्र–चित्रण या छन्द प्रवाह में एक रसता नहीं आने पाती। 'राम की शक्ति–पूजा' में एक ओर राम का पराजित मन

---

1. सहस्राब्दि : अपरा : पृष्ठ – 179

हैं तो दूसरी ओर हनुमान का शक्ति–प्रदर्शन है विभीषण की दीनता और राज्य–लोलुपता है तो दूसरी ओर लक्ष्मण का अमोद्य तेज है।

निराला के आवेग पूर्ण काव्य में विस्तार अधिक है कवि का वस्तु–विधान विषयानुसार छोटा और बड़ा होता रहता है, अर्थात् कभी वे लघुचित्रों की उद्भावना करते हैं और कभी उनका चित्रफलक वस्तु के अनुसार विस्तृत और विषद् होता है कवि ने छनदों के वाचन में उतार–चढ़ाव की कला अद्भूत एवं विलक्षण थी। यहॉ महाकाव्योचित गरिमा को मण्डित करने का सफल प्रयास महाकवि ने किया है।

"समुचित अलंकार–योजना"

लौंजाइनस के अनुसार मात्र चमत्कार प्रदर्शन के लिए अंलकारों का प्रयोग नहीं होना चाहिए, यह अधिक उपयोगी तब होगा जब अर्थ को उत्कर्ष प्रदान करे, और मात्र चमत्कृत न करके पाठक को आनन्द प्रदान करे। अलंकार सर्वाधिक प्रभावशाली तब होता है जब इस बात पर ध्यान ही न जाए कि वह अलंकार है। अलंकार का शाब्दिक अर्थ है सुशोभित करने वाला या वह जिससे सुशोभित हुआ जाता है। इन दोनों अर्थो मे परस्पर थोड़ा अन्तर है, पहला अर्थ जहाँ अलंकार को कर्त्ता या विधायक सूचित करता है वहाँ दूसरे अर्थ में वह साधन मात्र रह जाता है काव्यशास्त्र में अलंकार इन दोनो अर्थो में प्रयुक्त हुआ है। जहाँ वामन, भामह आदि ने अलंकार को व्यापक–अर्थ में ग्रहण करते हुए सौन्दर्य के पर्यायवाची के रूप में ग्रहण किया है वहाँ पर काव्य को सुशोभित करने वाला माना गया है। किन्तु जहॉ तक संकुचित अर्थ में विशिष्ट कथन शैलियों के रूप में प्रयुक्त हुआ है। वहॉ वह काव्य–सौन्दर्य का साधन मात्र रह गया है।

"युवते रिवरूप मक काव्यं, स्वदते शुद्वगुण तदत्यवीत।
विहित प्रणय निस्न्तराभिः, सदलंकार विकल्पनाभि।।"

अर्थात् काव्य–युवती के रूप में समान है, वह शुद्ध गुण युक्त होने पर रूचिकर तो होता ही है तथापि रत्न आभूषणों से सज्जित हो जाने पर रसिक जनो को अन्यन्त आकर्षण प्रतीत होती है। उसी प्रकार गुण–युक्त काव्य भी अलंकारों से युक्त हो जाने पर काव्य मर्मज्ञों के चित्र को अत्यन्त आह्लाद प्रदान करता है। डॉ0 श्याम सुन्दर दास ने अलंकार की परिभाषा करते हुए लिखा है कि भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप–गुण और क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी–कभी सहायक होने वाली युक्ति अलंकार है।

कविवर "सुमित्रानन्दन पन्त' ने अपने ग्रन्थ 'पल्लव की भूमिका' में अलंकार की परिभाषा में दी है जो इस प्रकार है:–

"अलंकार केवल वाणी की सजावट नहीं वे भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार है भाषा की पुष्ठि के लिए राग की परिपूर्णता के लिए आवश्यक उपादान है। वे बागी के आचार व्यवहार और रीति–नीति है, पृथक स्थितियों के पृथक स्वरूप भिन्न अवस्थाओं के भिन्न–चित्र है जैसे वाणी की झंकारें विशेष घटना से टकराकर जैसे फेनाकार ही गयी हो । विशेष भावों के झोंके खाकर बाल लहरियाँ तरूण–तरंगों में फूट गयी हो। कल्पना के विशेष बहाव में पड़ आवर्तो में नृत्य करने लगी हो, वे वाणी के हास, अश्रु, स्पप्नपुलक हाव–भाव है जहॉ भाषा की जाली के बाल अलंकारों के चौखटे में फीट करने के लिए बुनी जाती है। वहॉ भावों की उदारता शब्दों की कृपण–जड़ता में बॅधकर सेनापति के दाता और सूम की तरह इकसार हो जाती है।" हिन्दी में ही संस्कृत के अनुसरण पर कवि 'केशवदास' ने अलंकार शब्द का प्रयोग अपनी 'कविप्रिया' में इसी व्यापक अर्थ में किया है 'संकीर्ण अर्थ में काव्य शरीर अर्थात् भाषा को शब्दार्थ से सुसज्जित तथा सुन्दर बनाने वाले चमत्कार पूर्ण मनोरंजन ढ़ग को अलंकार कहते हैं। काव्य में अलंकार की महत्ता सिद्ध करने वालों में वामन के अतिरिक्त आचार्य भामह, उद्धट, दण्ड़ी और रूद्रट के नाम विशेष प्रख्यात हैं इन आचार्यों के काव्य में रस को प्रधानता न देकर अलंकार को मान्यता दी है।

कहने का तात्पर्य यह है कि काव्य में अलंकार की महत्ता को प्रायः सभी काव्य शास्त्रियों ने चाहे वह पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों हो अथवा भारतीय कमोवेश सभी ने स्वीकार किया है। यहाँ अलंकार को और स्पष्ट करते हुए केशवदास जी कहते है:– अलंकार कल्पना की चारूता है हमारी कल्पना जब अनेक प्रकार के चित्रों का निर्माण करती हैं तो वह निर्मित अलंकार का पर्याय है। अलंकारों की दृष्टि कल्पना से ही होती है यदि कल्पना कवि की अनुभूति व चित्र से परे है

तो वह कल्पना चमत्कार विधायिनी हो जाती है कल्पना चमत्कार विधायिनी न हो वह अनेक अर्थ विम्बों को हमारे सामने उपस्थित कर दें।

अलंकारों के मुख्यतः तीन वर्ग किए गए है:–

(1) शब्दालंकार:– शब्द के दो रूप हैं– ध्वनि और अर्थ। ध्वनि के आधार पर शब्दालंकार की सृष्टि होती है। इस अलंकार में वर्ण–या–शब्दों की लयात्मकता या संगीतात्मकता होती है। अर्थ का चमत्कार नहीं। शब्दालंकार कुछ शब्दगत्, कुछ वर्णगत्, कुछ वाक्यगत् लातानुप्रास होते हैं। अनुप्रास, यमक, आदि अलंकार वर्णगत् और शब्दगत् हैं तो लाटानुप्रास वाक्यगत् प्रमुख शब्दालंकार में हैं। अनुप्रास, यमक, पुनरूक्ति, पुनरूक्त बदाभास, वीप्सा, वक्रोक्ति श्लेष आदि।

(2) अर्थालंकार:– अर्थ को चमत्कृत या अलंकृत करने वाले अलंकार अर्थालंकार है। जिस शब्द से जो अर्थालंकार सधता है उस शब्द के स्थान पर दूसरा पर्याय रख देने पर भी वही अलंकार सधेगा क्योंकि इस जाति के अलंकारों का संबंध शब्द से न होकर अर्थ से होता है।

(3) उभयालंकार:– जो अलंकार शब्द और अर्थ दोनो पर आश्रित रहकर दोनों को चमत्कृत करते हैं वे उभयालंकार कहलाते हैं।

अयत्नज अलंकार काव्य के प्रभाव को बढ़ाते हैं और ये अलंकार एक प्रकार से काव्यात्मक हैं। प्राकृतिक अभिव्यंजना में अलंकारों का महत्वपूर्ण स्थान है। अतः उन्हें कृत्रिम मानना उचित नहीं हैं। इनका प्रयोग प्रासंगिक तथा परिस्थिति एंव उद्देश्य के अनुरूप होना चाहिए यदि ऐसा नहीं है तो भव्य से भव्य अलंकार कविता कामिनी का श्रृंगार न बनकर वे उसके लिए बोझ बन

जाएगें, ये साधन मात्र हैं। अतः इन्हें काव्य का सहज अंग बनकर आना चाहिए, लौंजाइनस ने जिन अनेक अलंकारों को महत्व दिया है, वे सभी निराला के काव्य–संसार में उपलब्ध हो जाते हैं, कवि निराला अलंकारों का प्रयोग भावों का अंग बनाकर करता है वही उनके अलंकारिक प्रयोग का औदात्य होता हैं। यहाँ उनका सोदाहरण नामोल्लेख किया जा रहा है।

<u>(1) अनुप्रासः–</u> वर्णों की आवृत्ति में अनुप्रास का पुट झलकता है आवृत्ति से तात्पर्य उने वर्णों से है जो एक से अधिक बार आते हैं। कवि निराला के काव्य में यह अलंकार पाठक या श्रोता की अर्न्तवेदना को छूने लगती है, सच तो यह है कि सम्पूर्ण काव्य में कवि की वेदना और उसके नव–नव भावोन्मेष का सूचक या बोधक बनकर आया है। कवि निराला 'जूही की कली' के माध्यम से अनुप्रास अलंकार का एक सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है, प्रकृति का आलम्बन रूप मे वर्णन है काव्य में कवि निराला का प्रकुति प्रेम मुखर हैः–

> "विजन–वन–बल्लरी पर,
> सोती थी सुहाग–भरी–स्नेह–स्वप्न–मग्न–
> अमल–कोमल–तनु–तरूणी–'जूही की कली'
> दृग बन्द किए, शिथिल–पत्राड्क में।।"[1]

'विजन–बन–बल्लरी' में जो ध्वनि निर्मित होती है वह वातावरण के सन्नाटेपन को उजागर करती है, कवि ने यहाँ अनुप्रास के लालित्य को लाने का प्रयास नहीं किया है। बल्कि बल्लरी (लता) यानी जिस वन की बल्लरी भी वह वन–विजन था जहाँ पर कवि ने इन शब्दों का प्रयोग किया है उस वातावरण की और गहराई प्रदान करने के लिए या उसका वास्तविक चित्र प्रस्तुत करने के

---

1. 'जूही की कली' : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 41

िलए इस अलकार ने स्वयं जगह बना ली, इस काव्य में एक सुनसान वातावरण या निर्जन वन में स्थित एक लता पर पतिव्रता नायिका अपनी पवन रूपी पति की गोद में आखें बन्द किए मानों आलिगंन बद्ध होकर निर्द्धन्द भाव से सो रही है।

यहाँ कवि निराला भारती–वन्दना के माध्यम से हमारे देश की संस्कृति का अद्भूत चित्र उद्घाटित करने का प्रयास किया है इस गीत के माध्यम से कवि ने राष्ट्रीय जागरण का प्रयास किया है–

"भारति जय विजय करे
कनक शस्य कमल धरे।
लंका पदतल शतदल,
गर्णितोर्मि सागर जल।
धोता शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु अर्थ भरे।"[1]

यहाँ कवि ने अपने देश (भारत माता) की तुलना सरस्वती से की है यह गीत–प्रार्थना–परक है इसमें राष्ट्रीयता का भाव मुखर है भारत माता सरस्वती के समान सुनहरे रंग के पके हुए धान्य–रूपी कमल को धारण किए हुए है यहॉ कनक एवं कमल धरे में कवि ने अनुप्रास अलंकार की झलक दर्शायी है।

कवि ने बड़े ही चातुर्यपूर्ण ढंग से बादल के प्रलयकारी रूप के माध्यम से भारतीय जन–मानस के जमीर को झकझोरते हुए क्रान्ति का आह्वान करता है:–

"तिरती है समीर–सागर पर
अस्थिर सुख पर दुःख की छाया
जग के दग्ध हृदय पर।

---

1. 'भारति–वन्दना' : अपरा : पृष्ठ – 9

निर्दय विप्लव की प्लावित माया,

यह तेरी रण–तरी।

भरी आकांक्षाओं,

घन मेरी से सजग सुप्त अंकुर।।"[1]

आलम्बन रूप में प्रकृति–वर्णन छायावादी कवियों की प्रमुख विशेषता रही है। इस काव्य में निराला ने प्रकृति के कोमल रूप के साथ–साथ उसकी कठोरता का भी वर्णन किया, यहाँ कवि भारतीय संस्कृति की सरलता एवं साथ ही साथ कठोरता का भी उल्लेख किया है। यहाँ कवि ने 'समीर–सागर' यानी हवा रूपी समुद्र एवं 'सजग सुप्त' यानी सोए हुए अविकसित में अनुप्रास अलंकार को बखूबी स्थान कवि ने दिया है। साथ ही साथ कवि की क्रान्तिकारी भावना समुद्र की लहरों की तरह हिलोरे मार रही है।

इसी प्रकार कवि 'निराला' ने अपने 'बादल राग 'कविता के माध्यम से सम्पूर्ण भारतीय–जनता को राष्ट्र के लिए कुछ कर गुजरने का आह्वान करता है:–

"बार–बार गर्जन

वर्षण है मुसलाधार।

हृदय थाम लेता संसार।

सुन–सुन घोर वज्र हुंकार।।"[2]

निराला ने देशवासियों का आह्वान करते हुए कहा है कि क्रान्ति का बिगुल बजा दो, क्योंकि क्रान्ति की आँधी के आगे बड़े–बड़े गर्वीले वृक्ष धराशायी हो जाते हैं। अर्थात् क्रान्ति की लहर जब हिलोरे मारने लगती है तो उससे कितना ही चतुर पतवार हो टिक नहीं पाता। यहाँ बार–बार गर्जन यानी जनता

1. बादल–राय–6 : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 135
2. बादल–राय–6 : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 135

का बार–बार आह्वान करता है क्रांन्ति का। यहॉ 'बार–बार' की आवृत्ति एवं 'सुन–सुन' की आवृत्ति दो बार हुई है, स्वाभाविक रूप से अनुप्रास ने अपनी जगह उपरोक्त काव्य में बनायी है।

निराला जी देशवासियों को आत्म–जागरण की प्रेरणा देते हैं और उनको स्वयं आत्मावलोकन करने की सलाह देते हैं:–

> "सहृदय–समीर जैसे
> पोंछो प्रिय, नयन–नीर
> शयन शिथिल बाँहें,
> भर स्वाप्निल आवेश में,
> आतुर उर वसन–मुक्त कर दो
> सब सुप्ति सुखोन्माद हो;"[1]

कवि कहता है, हे देशवासियों तुम अपनी चेतना पर पड़े हुए निक्रिव्यता के इस भार को दूर करके चैतन्य हो उठो। सहृदय समीर यानी शीतल और मन्द–वायु, शयन शिथिल यानी सोकर उठने से शिथिल पड़ी हुई हैं। सब सुरित सुखोन्माद आदि में अनुप्रास का अभिनव प्रयोग कवि ने किया है।

इसी तरह 'पावन करो नयन' नामक काव्य से प्रकृति से उदात्त भाव प्रेरणा ग्रहण करते हुए कहते हैं कि :–

> "पावन करो नयन!
> रश्मि, नभ–नील–पर
> x x x
> स्पप्न–जागृति सुघर
> दु:ख–निशि करो शयन!"[2]

---

1. जागो फिर एक बार भाग (1) : अपरा : पृष्ठ – 14
2. पावन करो नयन : अपरा : पृष्ठ – 19

उपर्युक्त काव्य में कवि निराला का दार्शनिक अन्दाज झलकता है इस दुःख की रात्रि में तुम स्वप्न जागृति का आनन्द लाभ करो अर्थात सोते हुए भी तुम जागृतिवस्था में स्थिर रहो दुःख की घटा को निकल जाने दो। क्योंकि उजाले के बाद अँधेरा और दुःख के बाद सुख का स्वाभाविक पदार्पण होगा। यहॉ नभ, नील, स्पप्न सुघर में 'न' और 'रा' की आवृत्ति एक से अधिक बार ही हुई है। इस प्रकार काव्य में अनुप्रास को अपना स्थान बनाए रखने में सफलता प्राप्त हुई है।

छायावादी कवियों को प्रकृति ने अपनी ओर भरपूर आकर्षित किया है हलांकि 'सुमित्रानन्दन पन्त' को ही 'प्रकृति का चतुर चितेरा' कहा जाता है लेकिन कवि निराला ने भी अपने सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति का बखूवी दोहन किया है कवि ने इस कविता में भी प्रकृति के माध्यम से एक सुन्दर रमणी का चित्र खींचने का प्रयास किया हैः–

"दिवावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है।
वह सन्ध्या–सुन्दरी परी सी,
धीरे–धीरे–धीरे–।।"[1]

निराला जी ने अपने उपर्युक्त काव्य में धीरे–धीरे–धीरे का प्रयोग तीन बार किया है यहॉ कवि की स्वर्गीय नायिका यानी 'सन्ध्या–सुन्दरी' परी मन्द एवं सूक्ष्म गति से वातावरण को अपने शान्तमयी आगोश में लेने का प्रयास कर रही है। पूरा वातावरण शान्त है और इसी शान्त वातावरण में सन्ध्या सुन्दरी परी नई नवेली दुल्हन की तरह उसी प्रकार धीरे–धीरे कदम बढ़ाते हुए सम्पूर्ण वातावरण को अपने अगोश मे ले लेती है।

---

1. 'सन्ध्या–सुन्दरी' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 77

महाकवि ने अपने काव्यों में आध्यात्मिकता और प्रकृति के चैतन्यारोपण के भाव को कमवार देखते रहते हैं।

"हेर उर पट फेर मुख के बाल,
लख चतुर्दिक चली मन्द मराल।
गेह में प्रिय–स्नेह की जय माल;
वासना की मुक्ति मुक्ता;
त्याग में तागी।"[1]

उपर्युक्त पंक्ति में इस युग के कवि के द्वारा भक्तों की अवतारणा हुई है यहाँ भी निराला का नारी दृष्टिकोण स्वस्थ एवं निर्लिप्त है ऐसे सूक्ष्म एवं दिव्य चित्र निराला के एकाध है। शब्दों का ऐसा चित्र इस युग में विरल है। मन्द मराल त्यागी में म तथा त की आवृत्ति दो–दो बार हुई है स्वयमेव अनुप्रास झलकता है।

कवि निराला ने बसन्त–ऋतु की शीतलता एवं उसी शीतलता को माध्यम बनाकर प्रेम–भावना एवं सौन्दर्यानुभूति की सजीव अभिव्यक्ति की गई है:–

"आवृत सरसी –उर–सरसिज उठे,
केशर के केश कली के छूटे।
स्वर्ण–शस्य–अंचलः
पृथ्वी का लहराया।।"[2]

प्रकृति के प्रत्येक रूप में मानवीय सौन्दर्य का आरोप करके कवि ने एक सजीव–प्रकार और संशलिष्ट चित्र प्रस्तुत कर दिया है, निराला ने यहाँ प्रकृति में नारी के अन्तरंग का दर्शन पाठक को कराया है। चिर–नवयौवना के 'उरोज' यानी उभार को अंचल के पीछे से प्रदर्शित करते हैं, यहाँ कवि केशव के केश

---

1. यामिनी–जागी : अपरा : पृष्ठ–21
2. सषि, बसन्त आया : निराला रचनावली भागी (1) : पृष्ठ – 254

कलि यानी नवयौवन नायिका के बाल का खुलकर विखरना 'क' की आवृत्ति का बार–बार प्रयोग अनुप्रास को स्वयंमेव स्थान देता है।

छायावादी कविता की कोमलकान्त पदावली, वर्णन की सजीवता एवं संगीतात्मकता द्रष्टव्य है, विप्रलम्भ–श्रृंगार के अर्न्तगत नायिका की स्मरण दशा का सुन्दर चित्र निराला जी ने खींचा है।

"सुमन भर लियं
सखि बसन्त गया।
हर्ष–हरण–हृदय:
नहीं निर्दय क्या?"[1]

कवि एक नायिका का दूसरी नायिका से उसकी विह्वल और पश्चाताप का वर्णन कराते हुए कहलवाता है कि वे सखि! बसन्त ऋतु तो बीत गयी पर तुमने फूल एकत्र नहीं किए अर्थात् प्रिय– मिलन के अवसर पर संकोचवश पूर्ण संभोग–सुख प्राप्त नहीं किया। हृदय की प्रसन्नता का हरण करने वाला वह स्मरण बड़ा ही कठोर है। यहाँ कवि हर्ष, हरण, हृदय (हृदय के हर्ष को हरने वाला) में 'ह' की आवृति का कई बार प्रयोग कर कवि ने अनुप्रास को जगह दी है।

छायावादी काव्य की एक और विशेषता है कि वह प्रकृति को सिर्फ एक सुन्दर नायिका के रूप में ही नहीं देखता अपितु उसे उपदेशिका के रूप में ग्रहण करता है। साथ ही साथ भारतीय जन–मानस के कर्म के सद्मार्ग पर चलकर आगे बढ़ने की प्रेरणा भी देता है:–

"बहती इस विमल वायु में;
वह चलने का बल तोलो–

1 'शेष'– निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 155

मुद्रित दृग खोलो।"[1]

यहाँ कवि ने मानव को प्रकृति के माध्यम से कर्मशील जीवन का सन्देश देते हुए कहता है कि मानव को अपने आलस्य तन्द्रा क्लान्ति एवं अवसाद को त्यागकर अपने कर्मपथ में जुट जाना चाहिए। बहती इस विमल वायु में 'व' की आवृत्ति का बार–बार आना, अनुप्रास के समाहित होने का सूचक है।

कवि निराला ने शायद अपने काव्य–जीवन में पहली बार एक शोषित, प्रताड़ित एवं समाज में अपमान का घूट पीकर रहने वाली शोषित नारी के जीवन का इतना करीब से देखा जाँचा और लेखनी के माध्यम से परखा भी है उसी शोषित एवं विवशता से युक्त नारी का चित्र कवि ने काव्य में उतारा है::–

"देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा छिन्नतार;
x x x
जो मार खा रोई नहीं
सजा सहज सितार ।"[2]

महाकवि की यह रचना एक प्रगतिवादी काव्य की अभूतपूर्व रचना है यहाँ निराला सदृश्य विशालकाय एवं स्वस्थ व्यक्ति को देखकर उसने सामने के भवन की ओर देखा उसने अपने फटे कपड़ों में से झाँकते हुए शरीरांगों की ओर दृष्टिपात् किया और यह सब किया एकान्त समझकर। साथ ही साथ वह काँप भी उठी, उसके माथे से पसीने की बूँद नीचे गिर गयी। वह अपने पत्थर तोड़ने के बाद काम में फिर पूर्ववत् लग गयी यहॉ सजा सहज सितार में 'स' आवृत्ति बार बार हुई है अनुप्रास अलंकार का पुट स्पष्ट झलक रहा है।

---

1. प्रभावी : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 196
2. तोड़ती पथ्थरः निराला रचनावली भाग(1):पृष्ठ–342

छायावादी कवियों में राष्ट्र प्रेम कूट–कूटकर भरा हुआ था, उसमें से निराला जी का सारा जीवन कठिन परिस्थितियों में होते हुए भी राष्ट्र के लिए ही समर्पित रहा करता था। यहॉ कवि निराला भारत–माता की बन्दना करते हुए कहते है किः–

"मूर्ति अश्रु जल धौत विमलः

दृग जल से पा बलि–बलि कर दूँ।"[1]

कवि निराला बड़े ही बोझिल मन से कहते हैं हे! भारत–माता दुःख सहन करके मुझको जो शक्ति प्राप्त हो और उसके द्वारा मैं इस जन्म में कुछ कृत–कर्म करके उसके पूजा–फल को मैं तेरे ऊपर न्योछावर कर दूँ। दुःख और त्याग में ही जीवन का प्रकाश निहित है। किसी ने ठीक ही कहा है कि "रंगलाती है हीना, पत्थर पर घिस जाने के बाद।" बल–बलि (न्योछावर करना) में 'ब' की आवृत्ति कई बार हुई है अनुप्रास की झलक स्पष्ट है।

कवि निराला ने भारतीय जनमानस में मानों जनजागरण का कार्य कियाः–

"किरण–दृक्–पात, आरक्त किसलय सकल;

शक्त द्रुम, कमल–कलि –पवन–जल –स्पर्श–चल।"[2]

देश के जो लोग राष्ट्र की धारा में नहीं शामिल हुए थे राष्ट्रीयता का भाव भरने के सफलता पायी। इस प्रकार स्वतन्त्रता की आवृति का कई बार आना अनुप्रास का द्वैतक है।

अस्त होते हुए सूर्य तथा उस समय के वातावरण आसमान में छाई लालिमा आदि के सौन्दर्य का चित्र कवि ने अपने काव्य में उतारा हैः–

"अस्ताचल रवि, जल छल–छल–छवि

---

1. मातृ–बन्दना : अपरा : पृष्ठ – 28
2. जगा दिशा का ज्ञान : अपरा : पृष्ठ – 29

स्तब्ध, विश्वकवि, जीवन उन्मन।।"[1]

कवि ने इस कविता में प्रकृति का वर्णन आलम्बन के रूप में किया है सम्पूर्ण वातावरण शान्त है मानों सम्पूर्ण राष्ट्र चिरनिद्रा में सो रहा है ऐसे में छल–छल–छवि के ध्वन्यात्मकता के कारण प्रकृति बहुत ही ह्दयग्राही बन गयी है। छल–छल–छवि की ध्वनि की आवाज मानों कोई संगीतमय धुन हो, और रात के शान्तिमय वातावरण को मधुर ध्वनि के माध्यम से एक अलग मादकता प्रदान करती हैं। इसमें अनुप्रास अलंकार की उपस्थिति है।

कवि निराला देशवासियों को अंग्रेजियत से दूर होकर, लोगों को राष्ट्र–भाषा एवं भारतीय संस्कृति से जोड़ने का प्रयास करते हैं। कवि यहाँ राष्ट्रभाषा की वन्दना करते हए कहता है किः–

"बन्दूँ पद सुन्दर तव;

छन्द नवल स्वर गौरव।

जननि–जनक–जननि–जननि;

जन्म भूमि–भाषे ।।"[2]

कवि निराला ने हिन्दी साहित्य में पहली बार मुक्त छन्द का प्रयोग कर छन्द एवं संगीत का समन्वय किया था, वह संगीतात्मक लय को काव्य के लिए अनिवार्य मानते थे, कवि का स्पष्ट मत था कि कविता यदि लयवद्ध हो तो पाठक या श्रोता स्वयमेव काव्य की तरफ आकर्षित होते चले आएगें। इस प्रकार कविता का अर्थ पाठक के मस्तिष्क में रच–बस जाएगा। जननि, जनक, जननि–जननि यानि (पिता, माता की माता) में 'ज' की आवृत्ति एक से अधिक बार हुई है अनुप्रास का पुट झलकता है।

---

1. अस्ताचल रवि : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 246
2. 'बन्दूँ पद, सुन्दर तब' : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 247

छायावादी कवियों मे अन्य गुणों के साथ ही साथ एक गुण और परिलक्षित होता है–वह है ज्ञानदयी माँ सरस्वती की वन्दना। हालांकि सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति एवं सुन्दर नायिका का उल्लेख बार–बार प्रस्फुटित हुआ है लेकिन मॉ सरस्वती की उपासना कवि निराला के काव्य का एक महत्वपूर्ण अंग है।

"जागो, जीवन धनिके!

विश्व–पण्य–प्रिय वणिके!

x x x

खोलो उषा–पटल निज कर आयि,

ज्ञान–विपणि–खनिके।"[1]

कवि निराला यहॉ यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि ज्ञान और सम्पत्ति के समन्वय द्वारा ही देश की प्रगति संभव है। और जहाँ देश प्रगति और ज्ञान के विकास की बात हो तो हमारा ध्यान महाज्ञानी, वाक्पटु विवेकानन्द की तरफ जाना स्वाभाविक है निराला जी पर विवेकानन्द का प्रभाव कलकत्ता प्रवास के समय से ही हो गया था, जो उनके काव्य में रह–रहकर स्वयं आ जाया करते हैं। पण्य–प्रिय में 'प' की आवृत्ति आने से अनुप्रास का प्रभाव काव्य पर झलकता है।

कवि निराला के काव्य लिखने का एक अलग अन्दाज था वे जिस तरह सामाजिक जीवन में परम्पराओं, रूढ़ियों का परित्याग कर स्वतन्त्र रूप से जीने के आदि थे उसी प्रकार काव्य में भी वे बन्धन–मुक्त होकर कविता–पाठ करते देखे गये हैं। तभी तो वही पहले कवि हुए जिन्होंने अपने सम्पूर्ण काव्य को छन्दों के बन्धन से मुक्त कर सम्पूर्ण काव्य जगत को एक नई दिशा देने की कोशिश

1. जागो जीवन धनिके! निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ–256

की। कवि निराला अपने सम्पूर्ण जीवन में परम्पराओं रूढ़ियों को बार–बार तोड़ा हालांकि उनके इस कार्य से लोगों ने उन्हें तिरष्कृत एवं बहिष्कृत भी किया लेकिन यह मनमौजी कवि बिना किसी की परवाह किए इन रूढ़िवादी समाज से अकेले लड़ने का वीणा उठाया। हलांकि इस विद्रोह की कीमत भी कवि को बहुत चुकानी पड़ी। इसीलिए इनके काव्य में भी छन्दों से बन्धन–मुक्त होकर रचना की है

"उतरी नभ से निर्मल राका;
पहले जब तुमने हँस ताका,
बहुविध प्राणों को झंकृत कर;
बजे छन्द जो बन्द रहे।"[1]

निराला जी ने यहाँ यह दर्शाने का प्रयास किया है कि नायिका के हास्य–दर्शन प्राप्त करते ही मेरे कण्ठ से कविता फूट पड़ी थी। अर्न्तरात्मा से अनेक भाव भी परिलक्षित होते हैं। और कोई भी काव्य यदि अर्न्तरात्मा की आवाज से निकला हो तो कविता में वेदात्मक भाव स्वयमेव परिलक्षित हो उठेगें। नभ से निर्मल में 'न' की आवृत्ति कई बार हुई अनुप्रास अलंकार स्वयमेय झलकता है।

कवि निराला अपने सम्पूर्ण काव्य में चाहे व प्रकृति रूपी नायिका हो या अध्यात्म से जुड़े राम हों सबका मानवीकरण करते हुए काव्य जगत को एक नया आयाम दिया है। यहाँ कवि सामान्य मानवरूपी 'राम' एवं अन्याय का पर्याय बन चुका रावण के संग्राम की चर्चा को बड़े ही सजीव ढ़ग से चित्रित करने का प्रयास किया है:–

"रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र पर लिखा अमर;
रह गया राम, रावण का अपराजेय समर।

---

1. नुपुर के स्वार मन्द रहे: अपरा: पृष्ठ–39

आज का तीक्ष्ण–शर–विघृत–क्षिप्र–कर वेग–प्रखर;

शत–शेल सम्वरण–शील–नील–नभ– गर्जित–स्वर।"[1]

काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से यह कविता आधुनिक हिन्दी काव्य के प्रगति की सीमा मानी जा सकती है। इसमें राम–रावण के युद्ध का वर्णन है। महाशक्ति रावण को संरक्षण प्रदान करती है, राम के सभी वार (तीर से छोड़े गए) खाली जाते हैं । 'शत–शेल सम्बन्ध शील में अनुप्रास अलंकार है।

कवि निराला विभीषण की शंकाओं को निर्मूल बताते हुए तथा उन्हें सान्त्वना देते हुए राम के उत्तर का वर्णन करते हुए कहते हैः–

"रावण का अधर्मरत भी अपना, मैं हुआ अपर

यह रहा शक्ति का खेल समर शंकर–शंकर।

करता मैं योजित बार–बार शर–निकर निसित;

हो सकती जिनसे यह संस्कृति सम्पूर्ण विजित।।"[2]

बंगाल में दीपावली के समय काली–पूजा का प्रभाव स्पष्ट है निराला के कवि ह्रदय ने सदैव शक्ति की पूजा की है यह सम्पूर्ण काव्य मानो महाशक्ति का खेल हो गया है कवि कहता है, हे शंकर रक्षा करो! मैं शान पर चढ़ाए हुए उन तीक्ष्ण वाणों का बार–बार संधान करता हूँ यहाँ 'शक्ति शंकर–शंकर में अनुप्रास की झलक स्पष्ट है, कवि कहता है कि कोई अदृश्य शक्ति अन्याय का प्रतीक रावण की सहायता कर रही हैं। रावण का अट्टहास एवं गर्जन–युक्त स्वर राम को आहत कर रहा था 'राम' के सारे अस्त्र रावण के ऊपर निष्प्रभावी हो गए थे।

डाली पर पार्वती का आरोप करते हुए कवि निराला कहते हैं :–

रूखी री यह डाल,

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ–239
2. 'राम की शक्ति–पूजा': निराला की रचनावली भाग(1) पृष्ठ–334

बसन बासन्ती लेगी ।

x x x

शैल–सुता अर्पण–अशना ।''[1]

यहॉ कवि शिव को पति के रूप में प्राप्त करने के लिए तपस्या करती हुई पार्वती ने पत्तों तक का आहार करना त्याग दिया था। जिस प्रकार रीति परिपाटी में कवि नारी में प्रकृति का दर्शन पाते थे, उसी प्रकार यहॉ भी नारी में प्रकृति का समावेश परिलक्षित है, कवि निराला के काव्य में नारी की रूप–रेखा को प्रकृति से जोड़कर दिखाने पर अनेक आलोचकों ने निराला के काव्य में रीति कालीन कवियों का प्रभाव में आने की बात कहीं है जबकि यह सही नहीं है। 'ब'और 'अ' की आवृत्ति से अनुप्रास का प्रभाव झलकता है।

छायावादी कवि प्रकृति के बसन्त–रूपी पतझड़ एवं नई कोपलों का ही वर्णन नहीं करते हैं। अपितु ग्रीष्मकालीन प्रकृति–रूपी नायिका का अंतरंग एवं बहिरंग चित्र खींचने का प्रयास किया हैः–

''वर्ष का प्रथम;

पृथ्वी के उठे उरोज मंजु पर्वत निरूपम।

किसलयों बॅधें;

पिक–भ्रमर–गुंज मुखर प्राण रच रहे सधे।''[2]

यहाँ कवि पृथ्वी पर जगह–जगह उठे पर्वत की तुलना नायिका के उरोज से की है। यहाँ कवि ने प्रकृति का वर्णन आलम्बन रूप में किया है। मानवीकरण की सरल पद्धति अपनायी गयी है। यहाँ निराला ग्रीष्म की तपन के माध्यम से ओज की मधुर व्यंजना की है। उपर्युक्त काव्य लय एवं संगीत युक्त है,

---

1. बसन्त बासन्ती लेगी : अपरा : पृष्ठ–58
2. वन–बेला : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 345

'पिक–प्राक' में 'प' की आवृत्ति का बार–बार होना अनुप्रास को परिलक्षित करता है।

कवि निराला ने रीतिकालीन कवियों की तरह नख–सिख वर्णन तो नहीं किया है। लेकिन ये भी रीतिकालीन काव्य लहरियों के हिचकोलों से सरावोर नहीं तो अछूते नहीं थे। इस काव्य में भी कवि ने नेत्रों का अन्य कोणों से काव्यात्मक चित्र खींचने का एक सफल प्रयास किया है–

"प्रेम–पाठ के पृष्ठ उभय ज्यों;
खुले भी न अब तलक खुले हों,
नित्य अनित्य हो रहे हैं, यों
विविध विश्व दर्शन प्रणयन ये।।"[1]

रीतिकालीन शैली का यह शब्द चमत्कार ही है। कवि ने नायिका के सुन्दर नयन को इस प्रकार वर्णन किया है मानो उसके दोनों नयन प्रेम–पाठ के दो पृष्ठ हैं, जो नित्य और अनित्य रूप में मानों संसार के समस्त दार्शनिक सिद्धान्तों को रचने वाले हैं। प्रेम पाठ के पृष्ठ एवं विविध विश्व में 'प' और 'ब' की आवृत्ति का पुट अनुप्रास अलंकार को दर्शाता है।

छायावादी काल की कविताओं में ओजपूर्ण एवं देश भक्ति से युक्त कविताओं का सुन्दर समावेश किया गया है, इसी कम को आगे बढाते हुए निराला जी ने भी महाराज जयसिंह के नाम छत्रपति शिवाजी को पत्र का काव्यमयअंकन किया है। शिवाजी अपने पत्र के माध्यम से जयसिंह को संबोधित करते हुए कहते हैं कि:–

"दुर्गद् ज्यों सिन्धुनद;
और तुम उसके साथ
वर्षा की बाढ ज्यों

1. फुल्ल नयन ये : अपरा : पृष्ठ – 75

भरते हो प्रबल वेग प्लावन का;

बहता है देश निज।।"[1]

निराला के उपर्युक्त काव्य में देश–भक्ति, राष्ट्रप्रेम का स्वर मुखर है, कवि देशवासियों को चेतावनी एवं भविष्य का मार्गदर्शन भरे लहजे में सम्बोधित करते हुए अतीत के कुछ दृष्टातों को उदाहरण स्वरूप दर्शाते हुए कहता है कि हे देशवासियों! आपसी फूट से दुश्मन सदा मजबूत होता है। हमारे देश पर जब जब विदेशी ताकतें हावी हुई है तब तब हम हिन्दुस्तानियों के सहयोग से ही हाबी हुई है। वर्तमान विदेशी ताकत भी उपरोक्त सिद्धान्तों का वखूबी पालन करते हुए हमें गुलामी की दासता रूपी जंजीरों से जकड़ रखे हैं। उनकी यह नीति 'फूट डालो और राज करो' की सफल मत होने दो और राष्ट्र–निर्माण में मिलजुलकर हिस्सा लो, और इन फिरंगियों को देश से बाहर करने में सहयोग दो। प्रबल, प्लावन में 'प' की आवृत्ति से अनुप्रास की झलक स्पष्ट है।

यमुना को देखकर कवि निराला के मन में यमुना से संबंधित समस्त अतीत जागृत हो उठता है, वह अनेक प्रकार की कथाओं का सार लेकर इस कविता की सृष्टि करते हैं कवि अपने सखि! यमुना को संबोधित करते हुए कहता है कि:–

"अलि अलकों के तरल तिमिर में;

किसकी लोल लहर अज्ञात।"[2]

कवि के उपुर्यक्त काव्य में रहस्यवाद की मार्मिक व्यंजना की गयी है कवि काव्य में कल्पनाओं की उड़ान भरता है। यहॉ कवि की रहस्यवादी जिज्ञासा देखते ही बनती है। 'अ' और 'ल' की आवृत्ति बार–बार होने से अनुप्रास दृष्टव्य है।

---

1. महाराज शिवाजी का पत्रः निराला रचनावली (1) पृष्ठ–157
2. यमुना के प्रति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 118

कवि निराला 'स्मृति' के भावों का मानवीकरण करते हुए मन के भावों का सजीव चित्रण करने का प्रयास करते हैं कवि यहाँ अपने पूवजों के अतीत की स्मृति करते हुए कहता है कि:–

"विजन–मन–मुदित सहेलरियाँ
स्नेह उपवन की सुख, श्रृंगार;
आज खुल खुल गिरतीं असहाय,
विटप वक्षः स्थल से निरूपाय।"[1]

कवि निराला यहॉ प्रकृति के माध्यम से पूर्वजों एवं बुर्जुगों की मनोदशा का चित्रण करते हए कहते हैं कि जो लोग अब तक हमारे देश की राष्ट्र की या परिवार की शोभा बढ़ाते थे, मेरे परिवार के आवश्यक अंग थे। वही अब असहाय एवं अनाथ से दिखते हैं। कवि का इशारा साफ है कि भारतीय संस्कृति कभी पूर्वजों एवं बुजुर्गों को अपमान करने की इजाजत नहीं देती है, अपितु हमारी संस्कृति का मूल–मंत्र ही है कि पूर्वजों एवं बुजुर्गो की सेवा तथा उनके द्वारा प्राप्त आर्शीवाद ईश्वर के प्रसाद सदृश्य है। 'म' 'ब' 'स' की आवृत्ति बार–बार होने से अनुप्रास स्पष्ट झलकता है।

कवि निराला ने गरीबी को बहुत करीब से देखा जाँचा और परखा था। आर्थिक विपन्नता से वे अति त्रस्त थे, फिर भी किसी भी कठिन परिस्थिति से उबरने का हुनर अगर किसी कवि में था तो वे महाकवि ही थे कवि विपरीत परिस्थितियों के होते हुए भी जीवन के प्रति आस्था एवं दृढ़ विश्वास दिखाता है। और कह उठता है:–

"द्वार दिखा दूँगा फिर उनको;
है मेरे वे जहाँ अनन्त–

1. स्मृति – निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 140

अभी न होगा मेरा अन्त।"[1]

कवि निराला अपने आर्दश के अनुरूप आचरण करके, समाज के समस्त दुःखों को दूर करके, सुख का वातावरण उत्पन्न करना चाहते हैं वह चाहते हैं कि समाज कष्ट एवं क्लेष से निजात पा ले। 'द' की आवृत्ति अनुप्रास को परिलक्षित करती है।

कवि की अंर्तरात्मा उसे झकझोरते हुए कहती है कि हे! परमात्मा हम असहाय के लिए अपने स्नेहमयी द्वार खोल दे और उसको अपने शरण में ले लो, या यों कहें की कवि निराला आत्मा का परमात्मा से मिलन करवाना चाहते हैं:–

"स्नेह रत्न, मैं बड़े यत्न से आज
कुसुमित कुंज– द्रुमों से सौरभ साज।"[2]

निराला के इस काव्य में रहस्यमयी काव्य–भावना मुखर है। आत्मा परमात्मा में लीन होना चाहती है यानी अहंकार का उन्मूलन ही मानव को परमात्मा से मिलवा सकती है। कवि यहाँ स्पष्ट करना चाहता है कि अगर समाज का, राष्ट्र का, सच्चा प्रेम तुझे चाहिए तो सबसे पहले आप अंहकार का परित्याग करो फिर स्नेहमयी वर्षा से आप स्वयमेव सराबोर हो जाएगें। कुसुमित कुंज में 'क' की आवृत्ति का बार–बार आना अनुप्रास अलंकार की उपस्थिति दर्ज कराता है।

कवि निराला का काव्य अनेक संभानाओं से परिपूर्ण है। कवि जहाँ रहस्मयी भावना से ओत–प्रोत है तो वही अदृश्य शक्ति का आह्वान करते हुए कहता है कि:–

---

1. ध्वनि : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 126
2. अंजलि : अपरा : पृष्ठ–112

"एक बार बस और नाच तू श्यामा!
सामान सभी तैयार,
कितने ही है असुर, चाहिए कितने तुमको हार?
कर–मेखला, मुण्ड–मालाओं से बन मन अभिरामा–
एक बार बस और नाच तू श्यामा!"[1]

कवि यहाँ महाशक्ति से प्रलय अर्थात् जन–कान्ति का आह्वान करता हुआ कहता है कि हे अदृश्य शक्ति एक बार भारतीय जन–मानस को अन्दर तक ऐसा झकझोर दे कि समूचा समाज राष्ट्रीय–भावना से ओत–प्रोत होकर तात्कालिक व्यवस्था के खिलाफ उठ खड़ा हो, कवि का इशरा साफ था कि एक बार अगर समूचा राष्ट्र इन फिरंगियों के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा दे तो ये फिरंगी इग्लैड़ का रास्ता पकड़ लेंगे और हम देश–वासी गुलामी की दासता से मुक्ति प्राप्त कर लेगें बस आवश्यकता है तो एक जन–क्रान्ति की । उपर्युक्त कविता में 'म' की आवृत्ति का बार–बार का आना अनुप्रास की झलक दिखाता है।

छायावादी कवियों में निराला ही ऐसे कवि हैं जो अपनी विफलता को भी काव्य में स्थान देते हैं। अपनी कमियों को स्वयं दर्शाना कोई सामान्य कवि के बस की बात नहीं :–

"प्रेम हाय आशा का वह भी स्वप्न एक था।
विफल हृदय तो आज दुःख ही दुःख देखता।।"[2]

कवि एक विरहिणी को माध्यम बनाते हुए अपनी हृदय की विफलता का चित्र सजीव तरीके से खींचा है। यहाँ कवि के काव्य में अभिव्यक्ति लौकिक होते हुए भी रहस्यात्मक बन गयी है। कवि प्राचीन स्मृतियों को अपने हृदय में समेटे

1. आवाहन : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 85
2. विफल वासना : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 77

हुए कहता है कि मेरा विरह–दग्ध ह्रदय का ताप ही सूर्य की इन प्रवल किरणों में समा गया है जो अपने स्पर्श से ही प्राणियों को झुलसाती है। 'द' की आवृत्ति अनुप्रास की झलक दिखाता है।

निराला जी अपनी प्रेयसी के माध्यम से लौकिक श्रृंगार संबंधी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं, साथ ही साथ एक चिर नव –यौवना नायिका के चित्र को उकेरा है:–

"गर्वित, गरीयसी अपने में आज मैं।
रूप के द्वार पर;
मोह की माधुरी।"[1]

कवि ने अपने सम्पूर्ण कविता मे मनौवैज्ञानिक दृष्टिकोण को उद्घाटिक करता है कवि की नायिका कहती है कि शरीर रूपी वृक्ष के तारूण्य द्वारा घिर जाने पर मैं सुन्दरता से भरी हुई पल्लवित लता के समान हो गयी हूँ नायिका जीवन के तारूण्य के प्रथम पायदान पर पुण्य की तरह खिल गयी है उसी तरह जिस तरह बसन्तागमन के समय वृक्ष फूलों से लद जाते हैं; लेकिन इतना सब के होते हुए भी प्रेम के प्रवाह में निराला की नायिका अपना संयम बनाए रखती है। जब कि पुरूष उस सुन्दरता से वेसुध होकर बह जाते हैं। अर्थात् निराला की नायिका संयमशील, धैर्यशील एवं लज्जाशील है। तो नायक अपनी भावनाओं पर काबू पाने में असमर्थ। उपर्युक्त काव्य में 'ग' और 'म' की आवृत्ति का बार–बार होना अनुप्रास का दर्शन कराता है।

छायावादी कवियों ने काव्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की अपेक्षा मानवीय दृष्टिकोण को अधिक महत्व दिया है कवि निराला स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि हालांकि विज्ञान ने चहुमुँखी विकास किया है। परन्तु मानव–मन का उत्तरोत्तर

1. 'प्रेयसी' निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–328।।

ह्रास हुआ है। निराला जी समाज के तथा कथित –शिक्षित वर्ग की ओर इशारा करते हुए कहते हैं कि:–

"हँसते है जड़वाद ग्रस्त प्रेत ज्यों परस्पर
विकृत–नयन मुख कहते हुए अतीत मयंकर।"

कवि भारतीय शिक्षित समाज पर जो अपने पूर्वजों की जंगली कहने तक का दुस्साहस करते हैं उन्हें कवि सांसारिक भौतिकवाद में फँसी हुई विकृति मानसिकता का प्रतीक बताता है। निराला जी डार्विन के विकासवाद पर तीखा व्यंग करते हुए कहते हैं कि इस चिन्तन के अनुसार मनुष्य बन्दर का बंशज है हमारे पूर्वज सर्वथा जंगली थे और हम क्रमशः अधिकाधिक सभ्य होते जा रहे हैं। निराला जी सम्भवतः यह कहना चाहते हैं कि:–

"We call our forefather's fools,
wise as we grow,
no double our children
will callus so"

'सम्बोधन' :–

सम्बोधन अलंकार अर्न्तमन् को उद्घाटित करता है। इस अलंकार में कभी अमर्ष भाव, कभी आह्लाद, कभी आत्मग्लानि, कभी शंका, कभी लज्जा स्पष्ट होती है।

कवि निराला सरस्वती –स्वरूपा भारत–माता की अपने अंतर्मन् में वन्दना करते हुए कहते है कि:–

भारति जय–विजय करे!
कनक शस्य कमल धरे![1]

---

1. भारती – वन्दना : अपरा : पृष्ठ – 9

महाकवि निराला के यह गीत राष्ट्रीय जन–जागरण के लिए लिखा है। कवि ने माँ सरस्वती के रूप में भारत–माता की कल्पना की है, सच तो यह है कि यह गीत प्रार्थना–परक है परन्तु इसमें राष्ट्रीयता का भाव मुखर है देश का प्रत्येक पदार्थ कवि के लिए प्रंरणापद है, यहाँ भारतीय संस्कृति के चिह्न कमल का वर्णन भारतीय संस्कृति के प्रेम का द्योतक हैं। कवि ने बन्दना करता है कि राष्ट्र अन्न–जल से परिपूर्ण हो। यहाँ कवि ने अपने अंतर्मन् में संबोधन अलंकार को पिरोने का एक सफल प्रयास किया है।

महाकवि निराला देशवासियों का आह्वान करते हुए कहते हैं कि हे राष्ट्र के सपूतों भारत माँ तुम्हें पुकार रही है, आवाज दे रही है कि कम से कम एक बार राष्ट्र–निर्माण मे अपना योगदान दोः–

"जागो फिर एक बार।
प्यारे जगाते हुए सब तारे तुम्हें;
x x x
खड़ी खोलती है द्वार–
जागो फिर एक बार।"[1]

इसमें कवि बताता है कि सकल प्रकृति में जागरण की लहरें तरंगायित हैं। ऐसी स्थिति में भारतवासियों को कर्तव्य से विमुख होकर सोते रहना ठीक नहीं हैं। चूकि यह काव्य 1918 के आसपास का है जब तिलक, और लाला जी जैसे गरमदल के नेताओं का उभार था। यह सम्पूर्ण काव्य राष्ट्र को सम्बोधन है।

कवि निराला निष्क्रिय पड़े भारतीय जन–मानस का आह्वान करते हुए उन्हें राष्ट्र निर्माण में बढ़ चढ़कर हिस्सा लेने का मानों निमंत्रण देता है। कवि

---

1. जागो फिर एक बार (1) : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 148

अपने इस कविता के माध्यम से जागृति एवं कर्मशीलता की प्रेरणा देते हुए आह्वान करता है कि :–

"प्रिय मुद्रित दृग खोलो!
गत स्वप्न–निशा का तिमिर–जाल;
नव किरणों से धो लो–
मुद्रित दृग खोलो!"[1]

कवि प्रकृति में अज्ञात शक्ति का दर्शन कर जीवन की प्रेरणा ग्रहण करता है। निराला राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए आह्वान करते हैं कि हे राष्ट्रवासियों अँधेरा छँट गया है। सूर्योदय हो रहा है उठो और नई ऊर्जा, के साथ नई शक्ति के साथ राष्ट्र निर्माण में तन–मन–धन से लग जाओ और देश विकास के पथ पर ले जाओ। कवि यहॉ भी राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए जन आह्वान कर रहा है।

छायावादी कविओं ने वैसे मातृ–भाषा को महत्पूर्ण स्थान दिया है। लेकिन इसमें निराला जी का मातृ–भाषा प्रेम सर्वविदित है। ऐसा मालूम पडता है कि राष्ट्रीयता एवं मातृ–भाषा प्रेम इस महामानव के रंग में कूट–कूट कर भरी हुई है:–

"दृग–दृग को रंचित कर
अंजन भर दो भर–
दृग–दृग की बँधी सुछवि;
बॉधें सचराचर भाव!"[2]

निराला ने हिन्दी साहित्य में पहली बार मुक्त छन्द का प्रयोग कर छन्द एवं संगीत का समन्वय किया था। वह संगीतात्मक लय को काव्य के लिए

1. प्रभाती : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ–196
2. बन्दूँ पद सुन्दर तव : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 247

अनिवार्य मानते थे यहाँ सम्भवतः उन्होंने इसी अभिनव साधना की ओर संकेत किया है। कवि के सम्पूर्ण काव्य में मातृ–भाषा प्रेम मुखर हुआ है। निराला जी कहते हैं, हे! माता तुम प्रत्येक पाठक को प्रसन्न करके उसको नवीन ज्योति प्रदान कर दो।

कवि कहना चाहता है कि ज्ञान और सम्पत्ति के समन्वय द्वारा ही देश की प्रगति सम्भव है। स्वामी विवेकानन्द के व्यवहारवादी पाश्चात्य जीवन–दर्शन का प्रभाव कवि पर स्पष्ट परिलक्षित होता है क्योंकि महाकवि जीवन को जीना पश्चिम–बंगाल में सीखा था तथा विवेकानन्द को काफी करीब से जाँचा परखा है :–

"जागो, जीवन–धनिके!
विश्व–पण्य–प्रिय वणिके!
x x x
खोलो उषा–पटल निज कर अयि,
छविमयि, दिन–मणिके!"[1]

कवि निराला सरस्वती की वंदना करते हुए कहता है कि, हे माँ तुम अपने ज्ञान–रूपी प्रकाश से सम्पूर्ण राष्ट्र का आलोकित कर दो जिससे अन्धकार रूपी अज्ञान की कालिमा छट जाए। वह आह्वान करते हुए कहता है, हे माँ जागो! भारत दुःख के भार से दब रहा है इसको सहारा दो। यहाँ महाकवि विनयावत होकर माँ सरस्वती को सम्बोधित करते हैं।

महाकवि निराला 'राम की शक्ति पूजा' नामक काव्य में हीनंभावना से ग्रस्त हैं जब कोई भी मानव हीन भावना से ग्रस्त होता है। तो उसे अपने जीवन का अर्थ ही समझ में नहीं आता एवं अन्दर ही अन्दर आत्मग्लानि महसूस करने लगता है और कवि के राम स्वयं अपने आप से कह उठते हैं कि:–

---

1. 'जागो जीवन धनिके': निराला रचनावली भाग एक: पृष्ठ–256।।

"धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध;
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध!
जानकी ! हाय उद्धार प्रिया का न हो सका।
वह एक मन और रहा राम का जो न थका;"[1]

साधना की समाप्ति के समय दुर्गा (महाशक्ति) राम की पूजा का कमल रूपी पुष्प चुरा ले जाती है! जब राम को एक सौ आठवॉ कमल नहीं प्राप्त हुआ तो वे विचलित हो उठे, फिर उन्हें तुरन्त याद आया कि माँ मुझे सदा राजीवनयन कहती थी फिर क्या था राम अपनी आँख चढ़ाकर अनुष्ठान पूरा करना चाहते थे। तब तक महाशक्ति उनका हाथ पकड़ लेती है, और राम को सहयोग का वचन देती है। लेकिन एक सौ आठवाँ कमल गायब हो जाता है तो निराला के राम अपने को धिक्कारते हुए आत्मग्लानि महसूस करते हैं। यहाँ कवि निराला ने आत्मग्लानि एवं संशय का अद्‌भुत समावेश किया है।

छायावादी कवियों द्वारा पूर्वजों एवं बुजुर्गो का सम्मान कोई नयी बात नहीं है। वैसे भी हमारी संस्कृति में बुजुर्गों को अनुभव एवं सलाह के सर्वोत्तम स्थान दिया गया है, कवि निराला ने बुजुर्ग जाम्बवान से राम को सलाह देते हुए रूपायित किया गया है–

"हे पुरुष सिंह! तुम भी यह शक्ति करो धारण;
आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर,
x x x
शक्ति की करो मौलिक कल्पना करो पूजन;
छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो रघुनन्दन।"[2]

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली : भाग (1) : पृष्ठ – 337
2. राम की शक्ति पूजाः निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–335

कवि निराला अपने राम को पुरूषों में सिंह के समान सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि आप भी शक्ति की उपासना करो! वे अपने राम को उलझन से उबारते हुए कहते हैं कि जब अन्याय का प्रतीक रावण अपने तप के बल से महाशक्ति का सहयोग प्राप्त कर सकता है तो आप तो सदैव न्याय के सद्मार्ग पर चलते हैं। स्वाभाविक है कि तामसी शक्ति की अपेक्षा सात्विक शक्तियाँ कही अधिक प्रभावशाली है। यहाँ निराला जी अमर्ष भाव के माध्यम से राष्ट्र को संम्बोधित करते है।

महाकवि निराला अपने काव्य में अतीत का समावेश करते हुए उसे वर्तमान से जोड़ने का सफल प्रयास किया है। इसी प्रकार महाराज जयसिंह के नाम 'शिवाजी का पत्र' का काव्यमय अंकन है। यहाँ छत्रपति शिवाजी महाराज जयसिंह को संबोधित करते हुए कहते हैः–

> 'वीर! सर्दारों के सर्दार ! –महाराज!
> वहु–जाति, क्यारियों के पुण्य–पत्र दल भरे
> x x x
> बंशज हो–चेतन अमल अंश,
> हृदयाधिकारी रवि–कुल–मणि रघुनाथ के।।"[1]

यहाँ महाराजा जयसिंह के व्यक्तित्व को निखरते हुए, अपने कुल के गौरव का वास्ता दिलाते हुए अपने राष्ट्र के विकास और उन्नति साथ ही साथ एकता को सुदृढ़ करने के लिए कवि निराला द्वारा भटके भारतीयों के लिए जन आह्वान भी है।

कवि निराला पूर्व में लोगों द्वारा किए गए अच्छे कार्यों को अपने 'स्मृति' में सजोने एवं आज के जनमानस के मन में एक नयी चेतना का आह्वान करते हुए कहते है किः–

1. 'छत्रपति महाराज शिवाजी का पत्र' : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 156

"वायु–व्याकुल शतदल–सा हाय;

विफल रह जाता है निरूपाय।"[1]

कवि निराल 'स्मृति' का मानवीकरण करके मन के भावों का सजीव चित्रण करते हैं। यहाँ कवि सोये हुए अतीत के गीतों को सुनाकर मेरा ध्यान अपनी ओर खींच लेती हो। अर्थात् तुम्हारे आते ही मुझको सब पुरानी बातें याद आ जाती हैं। कवि उस समय के तेज वायु के द्वारा झकझोरे हुए कमल पुष्पों से भरे हुए तालाब की भाँति असहाय होने के कारण केवल व्याकुल होकर रह जाता है। इस प्रकार कवि के उपरोक्त काव्य में सम्बोधन का भाव स्पष्ट है।

छायावदी कवि अगर अपने काव्य में प्रकृति को अधिक स्थान दिया है तो साथ ही अतीत का उदाहरण देकर वर्तमान में जीने की कला भी बतलाई, यहाँ भी 'खँडहर के प्रति' नामक कविता के माध्यम से भारत के अतीत गौरव का वर्णन करते हैः–

"खँडहर! खड़े हो तुम आज भी?

अद्‌भुद अज्ञान उस पुरातन के मलिन साज!"[2]

किसी ने ठीक ही कहा है कि खँडहर बता रहे हैं कि इमारत अजीम थी। उपरोक्त पंक्ति के माध्यम से कवि भारतवासियों को अतीत की गौरवगाथा सुनाकर भारतीयों में नव–उत्साह भर कर देश की मुख्य–धारा के जुड़ने का आह्वान करता है। कवि की यह कविता खँडहर के प्रति देश–भक्ति की भावना से ओत–प्रोत है। यहाँ कवि अतीत के खँडहर के धूल को माथे पर उसी प्रकार लगाने का आह्वान करता है कि जिस प्रकार किसी पूर्वज के आर्शीवाद को अपने माथे पर लगाकर एक अलग सुकून प्राप्त होता है।

---

1. 'स्मृति' :निराला रचनावली भाग एक पृष्ठ–81
2. खँडहर के प्रतिः निराला रचनावली भाग एक पृष्ठ–81

निराला के काव्य मे कभी–कभी दार्शनिक दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है, कवि यहाँ किसी अलौकिक प्रिया को सम्बोधित करते हुए कहता है कि:–

"कहा जो न, कहो!
x x x
नित्य–नूतन प्राण अपने
बॉधती जाती मुझे कर–कर
व्यथा से दीन!।।"[1]

कवि निराला मृत्यु के संबंध मे दार्शनिक दृष्टिकोण अपनाते हैं। कवि का कहना है कि मृत्यु भी वस्तुतः एक प्रकार की मुक्ति है क्योंकि वह सांसारिकता से छुटकारा देती है। कवि की यहॉ अलौकिक प्रिया एकनिष्ट होकर प्रेम करना चाहती है इसी में इसको सर्वस्व मिल जाएगा। वैसे यह संसार अनन्त है यानी सीमाहीन है। कवि यहॉ जन–मानस को मरने से न डरने की चेतावनी देता है।

पुनरूक्ति प्रकाश

जहॉ पर भावों मे बल देने के लिए एक शब्द की दो या दो से अधिक बार आवृत्ति हो या किसी कथन को रमणीक बनाने या एक शब्द के बलाघात को प्रदर्शित करना पुनरूक्ति अलंकार की श्रेणी में आता है। जैसे:–

कवि निराला ने प्रकृति का वर्णन आलम्बन के रूप में बार–बार किया है, कवि ने प्रकृति के उतार–चढ़ाव, पतझड़ एवं बसन्त बहार का सुन्दर समावेश इस कविता में भी देखने को ये मिलती है।

"तिरती है समीर–सागर पर;
अस्थिर सुख पर दुःख की छाया
ताक रहे है, ऐ विप्लव के बादल!

---

1. मरण – दृश्य : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–359

फिर–फिर!"[1]

उपरोक्त काव्य में प्रकृति का कोमल रूप के साथ–साथ कठोर रूप का भी वर्णन किया गया है यहाँ फिर–फिर का भाव गुड़गुड़कर में पुनरूक्ति प्रकाश झलक रहा है।

निराला जी कहते है कि वे भारतवासियों! युगो की निद्रा त्यागकर अब भी तो जाग जाओ यानी कवि यहाँ जागरण का सन्देश देते हुए कहता है कि:–

"उगे अरूणांचल में रविः

आयी भारती–रति कवि–कण्ठ में,

x x x

ऐसे ही संसार के बीते दिन, पक्ष मास

वर्ष कितने ही हजार–

जागो फिर एक बार!"[2]

कवि का इशारा स्पष्ट है कि यदि सकल प्रकृति में जागरण ही लहरें तरंगायित हैं, ऐसी स्थिति में भारतवासियों को कर्तव्य से विमुख होकर सोते रहना ठीक नहीं हैं इसमें कवि आत्मानुभूति की जागरा का कारण बताता है और वासना के पंथ में लिप्त भारतवासियों को जगाता है। सच तो ये है कि इस काव्य में कवि ने प्रकृति में नित नए परिर्वतन का आभास दिलवाया है। क्षण–क्षण यानी (जल्दी–जल्दी) में पुनरूक्ति प्रकाश दिखाता है।

सन्ध्या–कालीन निस्तब्ध वातावरण का सजीव चित्र कवि ने अपनी कविता में उकेरा है। प्रकृति में नारी का दर्शन छायाकारी काव्य शैली की विशेषता यहॉ दृष्टव्य है। सन्ध्या–सुन्दरी का स्वरूप वर्णन रीतिकाल की

---

1. बादल–राग भाग–6 : निराला रचनावली भाग(1) पृष्ठ–135
2. जागो फिर एक बार भाग ̎1) – निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 77

नख–शिख शैली पर किया गया है। अधरों एवं कुंचित केशों का सुन्दर वर्णन है:–

तिमिरांचल में चंचलता का नही कहीं आभास;

मधुर मधुर है दोनों उसके अधर–

x x x

गुँथा हुआ उन घुंधराले काले बालों से

हृदय–राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक।"[1]

सन्ध्या का समय है चारों ओर अंधकार एवं गंभीरता का साम्राज्य है उस गम्भीर वातवरण में केवल एक तारा ही चमक रहा है प्रत्यक्षतः यह किसी शहर की सन्ध्या नही है यह किसी गॉव की सन्ध्या है जहॉ सूर्यास्त के साथ सब काम काज बन्द हो जाते हैं। मधुर–मधुर और काले–काले में पुनरूक्ति प्रकाश झलकता है।

कवि निराला बादल से विनयावत् हो कर निवेदन करता है कि नव–जीवन निर्माण के लिए राग–रंग का वातावरण हितकर नहीं है इसी कारण कवि मेघ से गर्जन की प्रार्थना करता है वह उसके प्रलयंकारी रूप में नवीन सृष्टि के निर्माण का दर्शन करता हैं :–

"घन,गर्जन से भर दो वनः

तरू–तरू पादप पादप–तन।

x x x

भौरों ने मधु पी–पीकर

माना, स्थिर–मधु ऋतु कानन।।"[2]

---

1. सन्ध्या–सुन्दरी : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 77
2. गर्जन भर दो वनः निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ– 245

कवि निराला बादल से प्रार्थना करते हैं कि ऐसी वर्षा करो की समूचा वातारण हरियाली से परिपूर्ण हो जाए। तरू–तरू, पादप–पादप एवं गुंजन–गुंजन में पुनरूक्ति अलंकार का समावेश है।

कवि राम–रावण के युद्ध का वर्णन करता है राम की सेना युद्ध से बिरत होकर अपने शिविर की ओर गमन कर रही है, एक तरफ अन्याय का प्रतीक रावण के खेमे में उल्लास का वातारण है दूसरी तरफ राम की सेना भारी मन से अपने शिविर की ओर आ रही है :–

"लौटे युग–दल, राक्षस पद–तल पृथ्वी तलमल
विंध महोल्लास से बार–बार आकाश विकल

x x x

उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार
चमकती दूर ताराएँ ज्यों हो कहीं पार ।।"[1]

सन्ध्या के वातावरण की पृष्ठभूमि में राम ने मन का अंतर्द्वंद चित्रित है। यह छायावादी कविता के अमूर्त विधान की विशेषता है। सांकेतिक शैली द्वारा प्रकृति का रूपायन किया गया है । राक्षसों के अट्टास की गर्जना से गुॅंथकर आकाश बार–बार विकल हो रहा है बार–बार में पुर्नरूक्ति अंलकार है।

कवि निराला ग्रीष्मकालीन प्रकृति का चित्र खींचते हुए उसका मानवीकरण करने का सफल प्रयास किया है।

"पुलकित शत शत व्याकुल कर भर
चूमता रसा को बार–बार चुम्बित दिनकर

x x x

सर्वस्व दान;

---

1. राम की शक्ति पूजा निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 329

देकर, लेकर सर्वस्व प्रिया का सुकृत मान।।''[1]

कवि निराला यमुना को देखकर उससे अतीत से संबंधित समस्त भाव जागृत हो उठते हैं। कवि यमुना को सम्बोधित करते हुए कहता है कि

''जागृति के इस नव जीवन मे
किस छाया का माया—मन्त्र
गूॅज—गूँज मृदु खींच रहा है
अति दुर्बल जन का मन—यन्त्र?''[2]

उपर्युक्त काव्य मे प्रकृति के माध्यम से रहस्य भावना की अभिव्यक्ति है गूँज—गूँज में पुर्नरूक्ति प्रकाश झलकता है।

कवि निराला 'स्मृति' का मानवीकरण करके मन के भावों का सजीव चित्रण करते हैं मानव अपने अतीत की बातें याद कर उसकी 'स्मृति' में ऐसा खो जाता हैं मानों सारे वातावरण में एक नदीरूपी झरना कल—कल ध्वनि से बहता हुआ कोई संगीत की धुन निकाल रहा हो और वह उसी में खोया हुआ हों।

''जटिल जीवन—नद में तिर—तिर;
डूब जाती हो तुम चुप चाप।
x x x
सुप्त मेरे अतीत के गान,
सुना, प्रिय हर लेती हो ध्यान!''[3]

कवि निराला ने 'स्मृति' का अर्थ समझाते हुए कहते हैं कि तुम मेरे सोये हुए अतीत के गीतों को सुनकर मेरा ध्यान अपनी ओर खींच लेती हो अर्थात् 'स्मृति' का आगमन होते ही मुझे सब पुरानी बातें याद हो जाती है। यहाँ 'तिर—तिर' व 'फिर—फिर' में पुनरूक्ति अलंकार है।

---

1. वन—वेला—निराला रचावली भाग एकःपृष्ठ—346
2. यमुना के प्रति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ — 115
3. स्मृतिः निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठः140

कवि निराला छायावादी शैली पर अपनी पुत्री के सौन्दर्य का रहस्यात्मक वर्णन किया है, कवि ने पुत्री 'सरोज' के यौवनागम का भाव–पूर्ण चित्र प्रस्तुत किया है:–

"धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण:
बाल्य की केलियों का प्राङ्गण।
x x x
परिचय–परिचय पर खिला सकल–
नभ पृथ्वी, द्रुम कलि, किसलय–दल।।"[1]

. महाकवि 'प्रेयसी' के माध्यम से लौकिक श्रृंगार संबंधी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते है।, तथा साथ ही पूर्वराग का वर्णन करते हैं–

"तब तुम लघुपद–विहार;
अनिल ज्यों बार–बार।
x x x
श्लथ गात तुममें ज्यों;
रही मैं बद्ध हो।"[2]

कवि निराला के प्रेयसी की मनोदशा ऐसी जैसे मानो हवा वीणा के तारों को बार–बार झनझना देती है अपने इस गीत पर सुखद तथा मनोहर दान के उस आकर्षण में हृदय की लहरों से मैं संसार के दुःख तथा क्लेशों को भूल गई और शिथिल गात हो कर मैं तुमसे बँधी सी रह गई। 'बार–बार' पुर्नरूक्ति प्रकाश अलंकार है।

छायावादी कवियों में निराला रहस्यवाद एवं दार्शनिक चीजों में अति विश्वास करते थे, कवि का मानना है कि कोई अदृश्य शक्ति है जो सारे संसार

---

1. सरोज स्मृति : निराला रचनावली भाग(1) : पृष्ठः 319
2. 'प्रेयसी' निराला रचनावली भाग एकः पृष्ठ–327

का संचालन करती है तभी तो निराला जी अदृश्य शक्ति यानी भगवान से वरदान मॉगते हैं कि वह मुझे इस बात की अनुमति दें कि वह उनके चरणों में सर्वस्व समर्पण कर सकें।

> ''दाग दगा की
> आग लगा दी
> तुमने जो जन–जन की, भड़ंकी;
> करूँ आरती मैं जल–जल कर।।''[1]

कवि वियोग्नि के वशीभूत जीव–प्रभु–दर्शन के लिए निरन्तर व्याकुल रहता है, यानी हे प्रभु आपने जो आग की चिंनगारी प्रत्येक जन के ह्रदय में डाली वह अब प्रज्जवलित हो गयी है यानी पूरी तरह धधक रही है। मुझे प्रभु ऐसा वरदान (शक्ति) दो कि मैं उस आग में जल–जलकर आपकी आरती उतारूँ। 'जन–जन' और 'जल–जल' पुनिरूक्ति प्रकाश का पुट दृष्टिगोचर होता है।

'प्रश्नालंकार' :–

कवि निराला के काव्य मं प्रश्न कभी स्वगत् कथन में होता है, कभी सीधा होता है, इस प्रकार के अलंकार में भावोद्धेलन की प्रधानता हैं। जैसें–

महाराज जयसिंह के नाम 'छत्रपति शिवाजी का पत्र' में काव्यमय अंकन है। लेकिन कविता में ऐसा मालूम पड़ता है कि कवि अपने आप से प्रश्न करता है, छत्रपति शिवाजी महाराज जयसिंह को पत्र के माध्यम से सोचने की सलाह देते हैः–

> ''करो तुम विचार;
> तुम देखों वस्त्रों की ओर।

x x x

सौंपता तुम्हें मैं–

स्मृति सी निज प्रेम की।"[2]

यहॉ पर कवि निराला अतीत के माध्यम से भारत–वासियों को यह सोचने को कहते हैं कि अपसी फूट से लाभ हमेशा विदेशियों का हुआ है वह आह्वान करते हैं कि आओं हम एकता की डोर को और मजबूत करें, जयसिंह के माध्यम से कवि उन अंग्रेजी हुक्मरानों के इशारे पर निरीह भारतवासियों को खून बहाने वालों से प्रश्न करता है कि जरा सोचो वह खून किसका बहा है। प्रश्नालंकार स्वयं में स्पष्ट है।

छायावादी शैली की यह एक विशेषता ही कही जाएगी कि वह काव्य को स्वर–लहरी लालसा प्रभृति अमूर्त वस्तुओं और भावनाओं का मानवीकरण देखते ही बनता है। रहस्यवाद की व्यंजना एवं कवि की जिज्ञासा देखते ही बनती है:–

"किस समीर से काँप रही वह

वंशी की स्वर–सरित–हिलोर–?

किस बितान से तनी प्राण तक

छू जाती वह करूण मरोर?"[3]

कवि प्रकृति में किसी अज्ञात सत्ता का दर्शन करता है इस शक्ति का प्रेयसी के रूप दर्शन किया गया यहॉ कवि कहता है यमुने! वह बंशी की स्वर रूपी सरिता की लहर किस वायु का स्पर्श पाकर काँप रही है? प्रश्नालंकार का समुचित समावेश दृष्टव्य है।

---

1 जन–जन के जीवन के सुन्दर : अपरा : पृष्ठ : 161

2. छत्रपति महाराज शिवाजी का पत्र : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 158

3. यमुना के प्रतिः निराला रचनावली भाग एकः पृष्ठ–118

प्रलय एवं क्रान्ति का आह्वान करना छायावादी कवियों की एक प्रमुख प्रवृत्ति रही है। सच तो ये है कि छायावादी कवि तात्कालिक व्यवस्था से ऊब चुके थे। वे चाहते थे कि परिवर्तन–अविलम्ब हो यही आह्वान कवि अपनी इस कविता में करता है:–

"एक बार बस और नाच तू श्यामा!

सामान सभी तैयार,

कितने ही हैं असुर, चाहिए कितने तुमको हार?"[1]

कवि का आह्वान उस अदृश्य शक्ति से है कि हे माँ एक बार तू अपने शक्ति का प्रयोग कर जन–जन में क्रान्ति करने की प्रेरणा भर दो चाहे इसके लिए हमारे राष्ट्र के लोगों का कुछ कुर्बानियाँ ही क्यों न देनी पड़े क्योंकि कोई भी बड़ी क्रान्ति होती है तो जन–धन की हानि होना स्वाभाविक है। कवि स्वयं से प्रश्न करता है कि आखिर कितना अत्याचार और हम सहें ? यहॉ प्रश्नालंकार दृष्टव्य है।

कवि निराला 'स्मृति' का मानवीकरण करके मन के भावों का सजीव चित्रण करते हैं साथ ही साथ अतीत के भूले–बिछड़े पलों को भी चित्रित करने का सफल प्रयास करते है :–

"जगाने में है क्या आनन्द?

श्रृंखलित गाने में क्या छन्द "[2]

कवि निराला 'स्मृति' कविता के माध्यम से प्रश्न करते है कि संसार के व्यक्तियों के हृदय की पिछली कामनाओं को किसी बन्द वाणी में सोती हुई तान को, अतीत काल की किसी मातृ–भाषा को तथा मृत्यु की अटलता के स्मरण को जगाने में तुझे क्या आनन्द मिलता है।? जरा बता कि अस्त व्यस्त या

---

1. आवाहन : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 85
2. स्मृति : लिराला रचनावली भाग एक:पृष्ठ–192

इधर–उधर से जोड़े गए गीत में क्या कोई छन्द होता है यह प्रश्न कवि अपने अतीत की स्मृतियों के माध्यम से वर्तमान से करता है, उपरोक्त काव्य में कवि की आत्माभिव्यक्ति स्वयमेव परिलक्षित होती है। वह तात्कालिक व्यवस्था से ऊबकर 'स्मृति' के माध्यम से वर्तमान को आवाज देता है। प्रश्नालंकार का पुट स्पष्ट है।

छायावादी कविता में शक्ति का आह्वान बार–बार किया गया। कारण था तात्कालिक चरमराती व्यवस्था से उबे कवियों का हार मानकर अदृश्य शक्ति पर अटूट विश्वास। तभी तो निराला ने 'राम की शक्ति–पूजा' के माध्यम से हनुमान की माँ अंजना द्वारा भारतीय जनमानस के बौखलाहट का कारण पूछती है?

"क्या नहीं कर रहे हो तुम अनर्थ?
सोचो मन में;
क्या दी आज्ञा ऐसी कुछ रघुन्नदन ने?
तुम सेवक हो छोड़कर धर्म कर रहे कार्य–
क्या असम्भव यह राघव के लिए धार्य?"[1]

यहाँ कवि हनुमान के अन्तर्द्वन्द का मानवीकरण करते हुए भारतीय जन–मानस के कष्ट का मार्मिक चित्र खींचा है। हलांकि अभी भी भारतीय जनमानस हिंसा का रास्ता न अपनाकर अहिंसक तरीके से ही अपनी बात कहे। कवि यहाँ माँ अन्जना के माध्यम से हनुमान को समझाता है कि क्या भगवान राम ने तुमको यह अनर्थ करने की अनुमति दी है अर्थात् क्या हिंसा का रास्ता अपनाने की इजाजत भारतीय संस्कृति कभी देगी? कदापि नहीं, यहाँ प्रश्नालंकार का समुचित समावेश द्रष्टव्य है।

---

1. राम की शक्ति पूजा : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ : 333

छायावादी कवियों की एक और विशेषता थी कि वे नायिका के अन्तंरग एवं बहिरंग दोनो प्रकार के चित्र खीचें हैं। महाकवि निराला इस काव्य में विप्रलम्भ श्रृंगार के अर्न्तगत् नायिका के स्मरण दशा का वर्णन किया है:–

"सुमन भर न लिए;
सखि! बसन्त गया।
हर्ष–हरण–हृदय;
नहीं निर्दय क्यों?"[1]

कवि निराला ने एक सखि कैसे अपनी सणि से अंतर्मन् की बात करती है उसे दर्शाने का सफल प्रयास किया है, हे सखि! बसन्त ऋतु व्यतित भी हो गयी मैंने फूलों के अपनी झोली में भर कर इकट्टा नहीं किया मन के हर्ष को हरण करने वाली वियोगावस्था निर्दयी है क्या ? प्रश्नांलंकार का पुट स्पष्ट झलक रहा है।

'विरोधाभास' :–

आर्चाय केशव के अनुसार "जहाँ वास्तविकता में विरोध न हो फिर भी वर्णन से विरोध का आभास मिले वहाँ विरोधाभास अलंकार होता है।

छायावादी कवियों ने प्रकृति को अपने काव्य की जीवन–संगिनी की तरह अपनाया है। उसी तरह यहाँ निराला ने भी 'स्मृति' संचारी के रूप में 'जूही की कली' की रति–क्रीड़ा का काल्पनिक चित्र अंकित करते हुए कहता है कि:–

"आयी याद बिछुड़न से मिलन की वह मधुर बात,
आयी याद चाँदनी की धुली हुई आधी रात,
आयी याद कान्ता की कम्पित कमनीय गात
फिर क्या? पवन।"[2]

---

1. शेष : निराला रचनावली भाग (1) पृष्ठ – 155
2. जूही की कली : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 41

यहाँ 'जूही की कली' का चित्रण स्वकीया नायिका की है कवि निराला प्रकृति का आलम्बन रूप में वर्णन करते हैं, नायक के मन में इच्छा हुई कि वह किसी तरह इसी समय अपनी प्रियतमा के पास पहुँच जाए । विछुड़न में भी मिलन का एहसास विरोधाभास का लक्षण है।

यहाँ भी छायावादी कवियों की तरह निराला ने प्रकृति को अपने काव्य में भरपूर दोहन किया है यहॉ कवि सन्ध्या का वर्णन एक सुन्दरी रमणी के रूप में किया है।

"तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास;
मधुर–मधुर हैं दोनों उसके अधर;
किन्तु गम्भीर नहीं है उसके ह्रास –विलास।।"[1]

सच तो यह है कि सन्ध्या को सुन्दरी बताना ही काव्य –परम्परा के प्रति निराला जी के विद्रोह का घोतक है। जैसे सन्ध्या के आगमन के साथ भू–तल पर अन्धकार फैलने लगता है। अन्धकार से भरा हुआ अंचल एक दम शान्त है क्योंकि सायंकाल के समय वातावरण शान्त हो जाता है। उस सुन्दरी की मुख–मुद्रा कुछ गम्भीरता लिए हुए है और उसमें हास–विलास को व्यक्त करने वाली चेष्टाओ का अभाव है। यहाँ मिलन एवं बिछुडन का विरोधाभास मुखर है।

यहॉ कवि एक भक्त के माध्यम से साधना–पथ– की तरफ अग्रसर होते हुए दिखाया गया हैं भक्त देवी की प्रार्थना करते हुए कहता है कि:–

"प्रात तव द्वार पर;
आया, जननि, नैश अन्ध, पथ पार कर
लगे जो उपल पद हुए उत्पल ज्ञात,
x x x

---

1. सन्ध्या–सुन्दरी : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 77

अवसन्न भी हूँ प्रसन्न मैं प्राप्तवर;

प्रात तव द्वार पर।"[1]

यहाँ साधक की साधनावस्था का काव्यमय वर्णन है भगवान के ध्यान में मग्न साधक प्रत्येक बाधा को अपना शिक्षक मानता है और उसको अपना हितैषी समझता है। वैसे ही जैसे विष का प्याला मीरा के लिए अमृत का प्याला बन गया था और सॉप के स्थान पर शालग्राम के दर्शन हुए थे। इसी तरह ईशा और मंसूर के लिए शूली फूलों की सेज बन गयी थी। उसी प्रकार यहॉ भक्त के रास्ते में सारे पत्थर फूल से लगने लगे उनके द्वारा पैरों में ठोकर शीतल सुख का अहसास कराने लगी यहॉ पत्थर का फूल बनना विरोधाभास का प्रतीक है।

महाकवि यहाँ ऐसी नागरी–नायिका के सौन्दर्य का चित्रण करते हैं नायिका जो रात की केलि–कीड़ा के उपरान्त नींद की खुमारी में क्लान्त लेटी हुई है:–

"लाज से सुहाग का

मान से प्रगल्भ प्रिय प्रणय निवेदन का

जागृति में सुप्ति थी–

जागरण क्लान्ति थी!"[2]

यहॉ कवि ने रीतिकालीन शैली से नायिका का वर्णन किया है। प्रलय कालीन वातावरण है और नायिका के रंग–बिरंगे स्वप्न और अपनी प्रिया के निश्चल ओठों में शराब की मादकता का एहसास तथा उस मादकता का दिखाई न पड़ना इस प्रकार नायिका की अनेकानेक विरोधाभासी चेष्टाएँ, ये सब सोचकर ओठों में आए कम्पन विरोधाभास अलंकार का द्वैतक है।

---

1. 'प्रात तव द्वार पर' : अपरा : पृष्ठ – 31
2. 'जागृति में सुप्ति थी' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 144

कवि निराला यहाँ बड़ा ही कारूणिक चित्र प्रस्तुत करते हैं साथ ही अपने राम का मानवीकरण करते हुए अश्रु–पुरित नेत्रों से विभीषण को कहलवाते है कि हे मित्र विभीषण मैं अपने बचन को पूरा करने में असमर्थ हूँ स्वाभाविक रूप से महाशक्ति अन्याय के प्रतीक रावण का साथ दे रही है।

कुछ क्षण तक रहकर मौन सहज निज कोमल स्वर
बोले रघुमणि–मित्रवर विजय होगी न समर

x x x

उतरी पा महाशक्ति रावण से आमंत्रण।
अन्याय जिधर है उधर शक्ति कहते छल छल।"[1]

यहॉ कवि निराला ने पात्रों के मानसिक अर्न्तद्वन्द का बड़ा ही सजीव एवं प्रभावशाली वर्णन किया है, इसमें कवि ने सामान्य मानव के मानसिक दुर्बलता को भी चित्रित किया है साथ ही साथ दिए गए वचन को न निभा पाने की असमर्थता स्पष्ट परिलक्षित होती है। इधर कवि राम के प्रति पाठकों की सहानुभूति बटोरने में सफलता भी प्राप्त की है। अन्याय जिधर है उधर शक्ति में विरोधाभास है।

कवि निराला अपने देश की विधवाओं के अन्तर्मन को छूने और उसके कष्ट को करीब से देखने का सफल प्रयास किया है यहाँ कवि भारतीय समाज द्वारा विधवाओं के लिए बनायी गई बन्दिशों की गहराई में जाकर समीक्षा की है साथ ही साथ हमारे देश की विधवाओं का लेखा–जोखा बड़े ही सजीव तरीके से अपने काव्य में उतारा हैं

"षड्–ऋतुओं का श्रृंगार,
कुसुमित कानन में नीरव–पद –संचार,
व्यथा की भूली कथा है;

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 334

उसका एक स्वप्न अथवा है।"[1]

विधवा को फ्लैश–बैक में ले जाकर ऋतु के माध्यम से प्रिय–मिलन का सुन्दर वर्णन करना कवि निराला की काव्यमयी कला का सुन्दर नमूना है। नीरव पद में संचार में विरोधाभास झलक रहा है।

छायावादी कवियों के मन में उतार–चढ़ाव के अनुरूप ही कविता की व्यक्त शैली में भिन्नता आयी है कवि निराला का अन्दाज भी इसी प्रकार कभी दार्शनिक कभी गम्भीर, कभी विद्रोही तो कभी मनोहारी हो जाता हैं। कवि यहॉ मनोहर वातावरण का चित्र प्रस्तुत कर रहा है :–

"कू–ऊ,कू–ऊ बोली कोमल अन्तिम सुख–स्वर,
पी–कहॉ पपीहा–प्रिया मधुर विष गयी छहर,

x x x

छवि बेला की नभ की ताराएॅ निरूपनिता,
शत–नयन–दृष्टि
विस्मय से भरकर रही विविध–आलोक सृष्टि।।"[2]

निराला के उपर्युक्त कविता में शब्द–विन्यास प्रवाहपूर्ण एवं कोमल–कान्त है यहाँ कवि मिलन एवं बिछुड़न का अद्‌भुद्‌ चित्र प्रस्तुत किया है साथ ही साथ इस बीच में आने वाली बॉधाओं को हटाने का भी प्रयास कवि करता है। यहाँ प्रकृति का वर्णन उद्‌दीपन रूप में हुआ है 'पी कहाँ मधुर विष गई छहर' में विरोधाभास स्पष्ट झलक रहा है।

कवि निराला 'छत्रपति शिवाजी के पत्र' में जयसिंह को संबोधित एक पत्र लिख रहे हैं। साथ ही साथ उस अतीत में वर्तमान ढूँढ रहे हैं। निराला जी भारत के बिछड़े या भटके वीर सपूतों को वापस अपने घर आने का निमंत्रण देते

---

1. 'विधवा' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 72
2 'बनवेला' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 349

हैं। साथ ही साथ यह कहते हैं कि हमें आपकी वीरता, आपकी निष्ठा पर कोई शक नहीं, लेकिन भला बताओ कि क्या तुम उन फिरंगियों के इशारे पर भारत माँ के वीर सपूतों की लाशें बिछाओगे। यदि नहीं तो अब भी कुछ बिगड़ा नहीं तुम घर वापस आ जाओ।

"वीरता की गोद
मोद भरने वाले शूर तुम
x x x
मोगलों को तुम जीव दान।।"[1]

कवि निराला के इस पूरे काव्य में देश–भक्ति मुखर है, कलंक कालिमा का भय दिखाकर जयसिंह को अपने घर वापस लौट आने की प्रेरणा महाकवि की काव्य कुशलता का एक सुन्दर नमूना हैं यहाँ पैरों के प्राण........एवं जीवन दान एक दूसरे के विरोधाभाषी है।

महाकवि निराला के मन में यमुना को देखकर यमुना के समस्त अतीत एवं उसकी गौरव–गाथा जागृत हो उठती है वह कथाओं का सार लेकर इस कविता की सृष्टि करते हैं यहॉ कवि यमुना को सम्बोधित करता है:–

"आप आ गये प्रिय के कर में;
कह किसका वह कर सुकुमार;
x x x
कहाँ आज तक चितवन चेतन;
श्याम –मोह–कज्जल अभियुक्त?"[2]

कवि की नायिका अतीत को याद कर रही है कवि भी नायिका के माध्यम से अतीत पर अपनी मजबूत पकड़ रखने के साथ ही वर्तमान मे नई

---

1. शिवाजी का पत्र : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 157
2. 'यमुना के प्रति' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 329

पीढ़ी को साथ लेकर चलने का एक सुन्दर प्रयास किया है, नायिका अतीत के माध्यम से अथवा वह जीवन माँग रही है एवं पूंछ रही ही कि वह मेरा अलसाया जीवन कहाँ है। जो प्रियतम् की काँटों मे बँधा रहकर भी स्वछन्द बना रहता था यहाँ 'बँधा बाहुओं से भी युक्त में' विरोधाभास का पुट स्पष्ट झलकता है।

<u>रूपक :–</u>

प्रस्तुत का अप्रस्तुत में एक प्रकार का अभेद रूप से आरोप रूपक होता है। या जहॉ उपमान का सारा रूप उपमेय में चित्रित हो और केवल सादृश्य ही का भाव न हो वरन् एक रूपता के साथ ही अभेद का भाव भी हो, वहाँ रूपक होता है।

महाकवि निराला की यह कविता आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रगति की सीमा मानी जा सकती है। 'राम की शक्तिपूजा' काव्य में राम–रावण के युद्व का वर्णन है। महाशक्ति रावण को संरक्षण प्रदान करती हैं। फलस्वरूप राम के समस्त शस्त्र विफल होते हैं – कवि राम–रावण के अनिर्णीत संग्राम का वर्णन करती हैं :–

> "रवि हुआ अस्त ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
> रह गया राम–रावण का अपराजेय समर;
> x x x
> उद्गीरित–वहि्न–भीम–पर्वत–कपि–चतु : प्रहर–
> जानकी–भीरू–उर–आशाभर–रावण–सम्बर।।"[1]

राम–रावण के युद्व का सजीव एवं चित्रात्मक वर्णन है यह वर्णन वीरगाथा काव्य के वीर रसात्मक वर्णनों का स्मरण कराता है भाषा विषयानुकूल है और

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 329

संस्कृत–निष्ठ होने पर भी अर्थ प्रतीति बाधित नहीं होती है। ज्योति के पत्र एवं राजीवनयन में रूपक स्पष्ट परिलक्षित होता है।

कवि निराला ग्रीष्म की तपन के माध्यम से ओज की मधुर व्यंजना की है यहाँ कवि निराला ग्रीष्मकालीन प्रकृति का वर्णन करता हैं :–

"वर्ष का प्रथम,

पृथ्वी के उठे उरोज मंजू पर्वत निरूपम।

x x x

सर्वस्व दान;

देकर लेकर सर्वस्व प्रिया का सुकृत मान।।"[1]

प्रकृति के सौन्दर्य में नारी सौन्दर्य का दर्शन छायावादी कवियों की विशेषता हैं। यहाँ कवि निराला ने अपनी नायिका के अन्तःप्रकृति और बाह्य–प्रकृति का सुन्दर समन्वय किया हैं तपन–यौवन में रूपक का सुन्दर समावेश हैं

इसी प्रकार कवि यमुना को देखकर पिछली बातों की याद करता है, याद करने के साथ वह वेसुध सा हो जाता है कवि यमुना को सम्बोधित करते हुए कहता है किः–

"स्वप्नों–सी उन किन आँखों की;

पल्लव–छाया में अम्लान।

x x x

तेरे दृग कुसुमों की सुषमा;

जाँच रहा है बारम्बार?"[2]

---

1. वन–बेला : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 114
2. यमुना के प्रति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 114

यहाँ कवि अतीत के माध्यम से वर्तमान राष्ट्रप्रेमियों को अपनी सांस्कृतिक विरासत का वास्ता दिलाकर राष्ट्र के नव–निर्माण के लिए एकजुट होकर नई दिशा देने का आह्वान करता है निराला की यह कविता राष्ट्रप्रेम एवं सांस्कृतिक प्रेम का द्योतक है पल्लवछाया दृग–कुसुम में रूपक अलंकार दृष्टव्य है।

कवि निराला यहाँ 'स्मृति' का मानवीकरण करके मन के भावों का सजीव चित्रण करते हैं–

"जटिल जीवन में नद तिर–तिर;
डूब जाती हो तुम चुपचाप!
x x x
सुप्त मेरे अतीत के ज्ञान,
सुना, प्रिय हर लेती हो ध्यान!"[1]

यहाँ कवि 'स्मृति' का आह्वान करते हुए कहता है कि जब तुम मेरे पास आती हो तो हमें सब पुरानी बातें याद हो जाती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हम फ्लैश–बैक में वापस अतीत में चले गए हों और उसको अपनी स्मृतियों के द्वारा लेखनी के माध्यम से सजो रहे हैं। यहाँ कवि जीवन –गद्य में रूपक का प्रयोग हुआ है। कवि निराला यौवन के वेग की अबाध प्रवलता का उल्लेख करता हुआ कहता है कि नव जीवन के प्रवल उमंग के साथ संसार के सीमा को पार करके परमात्मा से मिलने चली आर रही हूँ :–

"बड़े दम्भ से खड़े हुए थे भूधर
समझे थे जिसे बालिका
x x x
एक पर दृष्टि जरा अटकी है

1. स्मृति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 84

देखा एक कली चटकी है।"[1]

यहाँ निराला जी कहते हैं कि मनुष्य को दम्भ एवं अहंकार छोड़कर सरल तथा शीतल शब्द का प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि यह मानवीय गुण है कि अगर जिस व्यक्ति में दम्भ अहंकार हाबी हो गया हो ऐसे लोगों को के मन में अज्ञानता घर कर जाएगी इसीलिए कोई भी सफल व्यक्ति अहंकारी एवं दम्भी नहीं हो सकता। इस काव्य मे पहाड़ अपनी गुरूता के घमण्ड़ में खड़े हुए थे वे नदी को नन्हीं–मुन्नी बच्ची की तरह समझते थे तथा इधर शिलाखण्डों को देख थर–थर काँप रहे है। यहाँ शिलाखण्ड एवं नरमुण्ड् में रूपक अलंकार दृष्टव्य है।

कवि निराला 'प्रेयसी' के माध्यम से लौकिक श्रृंगार संबंधी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते है :–

"घेर अंग–अंग को
लहरी तरंग वह प्रथम तारूण्य की,
x x x
शिशिर ज्यों पत्र पर कनक प्रभात के,
किरण सम्पात से।"[2]

कवि नवयौवना नायिका का वर्णन प्रकृति के उद्दीपन रूप में ग्रहण करता है नायिका का यौवन जल की लहरों की तरह हिचकोले ले रहा है, निराला ने प्रकृति के मानवीकरण के माध्यम से नौयवना नायिका के अंर्तमन् का सरल चित्र खींचा है। यहॉ तरू–तन में रूपक अलंकार झलक रहा है।

इसी प्रकार कवि निराला बसन्त ऋतु में गोमती नदी के तट को प्रातः कालीन छटा का वर्णन कवि निराला करते हैं।

---

1. 'धारा' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 84
2. 'प्रेयसी' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 324

"बसन्ती की गोद में तरूण
सोहता स्वस्थ मुख वाला सा।
x x x
गोमती क्षीण कटि नटि नवल;
नृत्य पर मधुर आवेग चपल।"[1]

यहाँ कवि प्रकृति में नारी का दर्शन एक प्रेयसी के रूप में करता है यहाँ 'किसलयों' के अधर एवं 'सौरभ वासना गोमती नहीं' नवल में रूपक अलंकार का पुट झलकता है। बसन्त ऋतु को नायिका रूपी प्रकृति का बालक कवि निराला ने बताया है। लज्जा शील एवं कोमलांगी युवतियों के कोपक रूपी यौवन के मद से भरे हुए लाल–लाल ओठ सुशोभित थे। यहाँ कवि प्रातः कालीन प्रकृति की शोभा देखते हुए प्रकृति रहस्यपूर्ण नियमों पर विचार करते है। महाकवि निराला सरोज–स्मृति सिर्फ एक शोख–गीत नहीं है यह पुत्री की मृत्यु के बाद एक पिता का दार्शनिक अन्दाज भी है। यहाँ निराला अपनी स्वर्गीय पुत्री सरोज को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि:–

"ऊनविंश पर जो प्रथम चरण;
तेरा वह जीवन–सिन्धु–तरण;
x x x
करती हूँ मैं यह नही मरण,
सरोज का ज्योति; शरण–तरण"[2]

अपनी ही जवान पुत्री की अर्थी को अपने कन्धों पर ले जाकर घाट पर पहुँचाना फिर उसे काव्यमय रूप देना निराला जैसे महाकवि के ही वश की बात हैं। यहाँ महाकवि का अपनी पुत्री से यह कहलवाना कि पिता जी आज मैं पूर्ण

---

1. 'दान' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 307
2. 'सरोज–स्मृति' : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 315

प्रकाश का वरण कर रही हूँ यह मेरा मरण नहीं है, अपितु आज आप की पुत्री ज्योति के शरण में जा रही है। यहाँ कवि निराला सरोज की मृत्यु के प्रति एक दार्शनिक दृष्टिकोण दर्शाते हैं। साथ ही कवि की अन्तरात्मा की वेदना स्वतः परिलक्षित होती है। यहाँ जीवन–सिन्धु तथा मृत्यु तरूणी में रूपक अलंकार दृष्टिगोचर होता है।

कवि निराला जहाँ अधिक या कुछ पेचीले अर्थ रखने का प्रयास किया है वहाॅ पद–योजना उस अर्थ को दूसरों तक पहुॅचाने में प्रायः अशक्त या उदासीन पायी जाती है। 'गीतिका' की यह पंक्ति–

> कौन तम में पार? (रे–कह)
>
> x x x
>
> सार या कि असार (रे–कह)।।"[1]

यहाँ कवि रूप के बाण (यानी सौन्दर्य बाण को निकालना) को निकालने में एक अजीब प्रकार का सुख प्राप्त करता है। साहित्यकार 'रामचन्द्र शुक्ल' के अनुसार तीर के निकलने में सुखानुभूति निराला जैसा कवि ही कर सकता है।

'उपमा' :–

जब दो भिन्न वस्तुओं में एक ही साधारण धर्म का होना बताया जाए अर्थात् सामानता बताई जाए, तब उपमा अलंकार होता है। "उपमेय अरू उपमान जह एक रूप होई जाए"।

कवि निराला का सम्पूर्ण काव्य राष्ट्र–भावना से ओत–प्रोत था उसी कम में उनकी कविता 'छत्रपति शिवाजी महाराज का जयसिंह के नाम पत्र' के माध्यम से भारतीयों के वर्तमान को कुरेदने का सफल प्रयास किया है। कवि

---

1. कौन तम के पार : गीतिका : हिन्दी साहित्य का इतिहास

कहता है कि आपसी फूट ही हमारी सबसे बड़ी कमजोरी और दुश्मन की सबसे बड़ी ताकत है। कवि कहता है :–

"किन्तु हाय! वीर राजपूतो की;
गौरव–प्रलम्ब ग्रीवा;
x x x
अपने सहोदर–मित्र;
निस्सहाय त्रस्त भी उपाय शून्य।।"[1]

कवि निराला अपने देश के भटके हुए भाईयो को उस अतीत की गाथा सुनाकर और उसका परिणाम बताकर, साथ ही साथ कुल गौरव की मान–मर्यादा और पुरूषत्व को जगाकर भटके हुए भाईयों को एक प्लेटफार्म पर लाने का सफल प्रयास किया था। कवि एकता का विगुल अपने काव्य के माध्यम से फूँकने का प्रयास करता है और कहता है कि हमारी एकता फिरंगियों को वापसी की बुनियाद रखेगी। यहाँ 'धूप सी' और 'सिन्धु ज्यों' में उपमा अलंकार झलकता है। कवि निराला विभिन्न कथाओं का सार लेकर यमुना को माध्यम बनाकर, अतीत का गुणगान–कर, जन–मानस में नव–चेतना का संचार करते हैं :–

"अलि–अलकों के तरल तिमिर में;
किसकी लोल लहर अज्ञात।
x x x
बजते हैं अब उन चरणों में;
अब अधीर नूपुर–मंजीर?"[2]

---

1. छत्रपति शिवाजी का पत्र : निराला रचनावली भाग (1) –पृष्ठ – 157
2. यमुना के प्रति : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 118

कवि निराला 'यमुना के प्रति पूरे कविता में रहस्यवाद' की मार्मिक व्यंजना की है। साथ ही साथ दार्शनिक दृष्टिकोण को माध्यम बनाया गया, सोए जन–मानस को जगाने के लिए। शशि–सा, मुख, ज्योत्सना सी गात में उपमा अलंकार का अद्भुत समावेश है।

'प्रेयसी' काव्य के माध्यम से कवि निराला लौकिक श्रृंगार संबंधी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। नायिका का यौवन उभार पर है, शारीरिक परिवर्तन से खुद नायिका के मन में कौतुहल व्याप्त है, वह अदृश्य संसार मे गोते लगाना चाहती है:–

"घेर अंग अंग को;
लहरी तरंग वह प्रथम तारूण्य की ।
x x x
शिशिर ज्यों पत्र पर कनक प्रभात के;
किरण–सम्पात से।"[1]

कवि की नायिका युवावस्था के आगमन के साथ ही चंचलता ने मेरे अंग–प्रत्यंग को घेर लिया है। प्रकृति को उद्दीपन के रूप में ग्रहण किया गया है। प्रकृति में नवयौवन नायिका को चित्रांकित किया गया है। यहाँ 'लता–सी' एवं 'शिविर ज्यों' में उपमा अलंकार परिलक्षित होता है।

छायावादी कवियों की एक प्रमुख विशेषता रही है कि वे काव्य लिखते समय रिश्ते नाते या सगे संबंधो को बीच में आने ही नहीं देते थे। तभी तो महाकवि निराला अपनी ही पुत्री 'सरोज' के यौवनावस्था का भावपूर्ण चित्रण किया है :–

"धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण;
बाल्य की केलियों का प्राङ्गण;

1. 'प्रेयसी' : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 324

x x x

परिचय–परिचय पर खिला सकल–;

नभ, पुथ्वी, द्रम, कलि , किसलय –दल।।"[1]

महाकवि निराला जैसा व्यक्तित्व ही अपनी पुत्री की यौनोचित चंचलता का चित्र खींच सकता है। सच्चाई ये है कि यहॉ कवि पिता कम कवि ज्यादा ही दिखाई देता है। स्वाभाविक रूप से कोई कवि कविता लिखते समय अगर रिश्ते–नाते को महत्व देता है। तो वह कविता कविता हो ही नहीं सकती क्योंकि कोई कविता, कविता तभी बन सकती है जब वह अंर्तरात्मा की आवाज से निकलती हैं। कवि जब कविता लिखने बैठता है तो उसका सारा ध्यान उस कविता पर होता है, रिश्ते गौड़ हो जाते हैं। यहाँ कवि 'ज्यों मालकौश!' 'नैश स्वप्न ज्यों' में उपमा का प्रयोग किया है।

महाकवि निराला 'जूही की कली' कविता के माध्यम से रति–कीड़ा का काल्पनिक चित्र प्रस्तुत करते समय नायिका के भावनाओं के अंर्तमन् को उद्घाटित करता है, नायिका रूपी कली को पवन पहुँच कर चूमता है। मगर वह जगती नहीं है। कवि यहॉ प्रकृति का मानवीकरण कर एक दूसरे को आलिंगन रूप में प्रदर्शित करने का सफल प्रयास किया है।

"सोती थी;

जाने कहो कैसे प्रिय–आगमन वह?

किवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिये;

कौन कहे?"[2]

---

1. 'सरोज–स्मृति' : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 319
2. जूही की कली : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 41

यहाँ कवि जूही की कली का वर्णन प्रेम–गर्विता–स्वकीया मध्य नायिका के रूप में किया गया है। वह आगत–पतिका नायिका है। यहॉ हिड़ोल में उपमालंकार का सुन्दर समावेश है।

महाकवि निराला भारतवासियों को जागरण का संदेश देते हुए राष्ट्र के लिए कुछ कर गुजरने का संदेश देते हैं। साथ ही साथ अपने जीवन की उपयोगिता को सिद्ध करने का सन्देश देते हैं :–

"आँखें आलियों सी
किस मधु की गलियों में फँसी;
x x x
या सोयी कमल–कोरकों में–;
बन्द हो रहा गुंजार।।"[1]

यहाँ महाकवि निराला का यह कथन कि जिस प्रकार भौंरा मधुपान में मग्न होकर अथवा कमल–कली में बन्द होकर अपनी गुंजार को भूल जाता है। उसी प्रकार तुम भी स्वार्थमय होकर राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य को भूल जाते हो 'अलियों' की उपमा 'भौंरो' से दी गयी है।

महाकवि निराला सन्ध्या सुन्दरी का वर्णन एक सुन्दरी रमणी के रूप में चित्रित करते हुए कहा है कि–

"दिवावसान का समय;
मेघमय आसमान से उतर रही है।
x x x
वह सन्ध्या सुन्दरी परी–सी;
धीरे–धीरे–धीरे।"[2]

---

1. जागो फिर एक बार (1) : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–148
2. सन्ध्या–सुन्दरी : : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–77

यहाँ कवि निराला का प्रकृति–प्रेम मुखर है, यहॉ सन्ध्या–सुन्दरी एक नई नवेली दुल्हन की तरह सज धज कर आसमान से मानों धीरे–धीरे उतर रही हो। यानी कवि की नायिका नई नवेली दुल्हन की तरह धीरे–धीरे कदम आग बढा रही है। यहाँ 'सन्ध्या सुन्दरी' की 'परी–सी' उपमा द्रष्टव्य है।

इसी प्रकार कवि ने इलाहाबाद प्रवास के दौरान पत्थर तोडती एक मजदूर महिला के मर्म को नजदीक से जाँचा–परखा। तो यह है कि कवि उस महिला के अर्न्तमन् को वाणी प्रदान की है–

"चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन।
x x x
प्रायः हुई दुपहर;–
वह तोड़ती पत्थर।"[1]

यहाँ कवि का एक मजदूरनी नारी का पत्थर तोड़कर गिट्टी बनाना वह भी चिलचिलाती दोपहरी में। यहाँ गरीब भारतीय नारी के बेवसी का चित्रण स्पष्ट झलकता है। 'रूई ज्यों' में उपमालंकार का समावेश है।

महाकवि निराला राम के मनोवैज्ञानिक स्थिति का सहज चित्र खींचते है, सीता की कुमारिका छवि की झाँकी पाते ही राम को अपने पराक्रम का स्मरण हो आता है। स्वाभाविक है कि ऐसे में राम के मन में उठे अर्न्तद्वन्द का चित्र कवि ने खींचा हैं–

"सिहरा तन क्षण–भर भूला मन, लहरा समस्त;,
हर धर्नुभग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त,।
x x x
फिर सुना–हॅस रहा अट्टाहास रावण खल–खल

1. वह तोड़ती पत्थर : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–343

भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्ता–छल ।"[1]

यहाँ कवि निराला द्वारा शक्तिशाली राम को सामान्य मानव की तरह मनोवैज्ञानिक उलझन में फँसाना, फिर पत्नी सीता से अपनी बेबसी का इजहार करना, मानवीकरण का सुन्दर चित्र कवि ने खींचा है। उड़े ज्यों देवदूत, ज्यों पतंक में उपमालंकार है।

'मानवीकरण' :–

जहाँ किसी उपमा या प्रकृति एव रूपक का सहारा लेकर अप्रत्यक्ष रूप से मानव–समाज की तरफ इंगित की जाए वही मानवीकरण है।

महाकवि निराला प्रकृति के कोमल रूप के साथ–साथ उसकी कठोरता को उदघाटित किया है।

"तिरती है समीर–सागर पर;
अस्थिर सुख पर दुःख की छाया।
x x x
ताक रहे हैं ऐ विप्लव के बादल!
फिर–फिर।"[2]

यहाँ कवि बादल के प्रलयकारी रूप का वर्णन करता है कवि यहाँ प्रलयकारी बादल से जन–जागरण का आह्वान करता है सच तो यह है कि उपरोक्त पूरे छन्द में महाकवि ने प्रकृति का मानवीकरण कर दिया है।

महाकवि निराला ने 'जूही की कली' नामक कविता में सिर्फ नायिका के ही अन्तर्मन व बहिर्मन का चित्र नहीं खींचा है, अपितु वह नायक के मनः स्थिति को भाँपने में भी सफलता पायी है तभी तो निराला का नायक बिना समय का

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–331
2. बादल–राग भाग –6 : निराला रचनावली भाग एक – पृष्ठ – 77

या लोक–लज्जा का ख़्याल किए सारे बंधनों को तोड़कर अपने प्रियतमा के पास पहुॅचना चाहता है :–

"आयी याद विछुड़न से मिलन की वह मधुर बात
· आयी याद चॉदनी की धुली हुई आधी रात
x x x
पहुॅचा जहॉ उसनसे की केलि।
कली–खिली साथ।।"[1]

जब कवि नायक–नायिका के पास पहुँचता है तो नायिका को अतीत की सारी बातें याद आ जाती हैं वह पवन के संयोग सुख से कम्पायमान सुन्दर देह–लता की याद आ गयी। इसी का सुन्दर तरीके से कवि ने मानवीकरण करते हुए नायिका अपने मिलन की प्रथम रात को सोच–सोच कर रोमांचित हो उठती हैं। तथा एक अजीब तरह का कौतूहल जो मादकतायुक्त है उसके मन में जागृत हो उठा है। यहॉ मिलन की याद का मानवीकरण सुन्दर तरीके से किया गया है।

कवि यहाँ सन्ध्या–सुन्दरी कविता को माध्यम बनाते हुए सन्ध्या कालीन वातावरण को उकेरा है। तथा साथ ही साथ प्रकृति का उस समय का सुन्दर नजारा मन में उभारने में सफलता पायी है।

"दिवावसान का समय;
मेघमन आसमान से उतर रही ।
x x x
वह सन्ध्या सुन्दरी परी सी;
धीरे–धीरे–धीरे ।।"[2]

---

1. जूही की कली : निराला रचनावली भाग एक – पृष्ठ – 41
2. सन्ध्या–सुन्दरी : : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–77

यहाँ 'सन्ध्या–सुन्दरी' रूपी नायिका दुल्हन की तरफ अपना कदम धीरे–धीरे आगे बढ़ा रही है, यहॉ सन्ध्या–सुन्दरी का मानवीकरण किया है ।

कवि–निराला भगवान राम के अनन्य भक्त हुनमान को अपने आराध्य को कष्ट में देखकर चीत्कार उठने तथा साथ ही साथ अपने आराध्य राम के प्रति सर्वस्व न्योंछावर करने का सफल काव्यमय चित्रण 'राम की शक्ति–पूजा' नामक कविता में देखने को मिलती है :–

"ये अश्रु राम के आते ही मन में विचार;
उद्वेल हो उठा शक्ति–खेल–सागर–अपार।

x x x

वज्रांग तेजधन वना पवन को महाकाश;
पहुँचा एकादश रूद्र क्षुब्ध कर अट्टहास।।"[1]

कवि निराला द्वारा यहॉ प्रकृति के भयंकरता का सुन्दर तरीके से वर्णन किया है। हनुमान और कुद्ध सागर के प्रयलंकर रूप का संशलिष्ट चित्र अंकित किया गया है। जलराशि का मानवीकरण स्पष्ट है।

महाकवि निराला भारतीय जन–मानस का विधवा नारी के प्रति बनी मानसिकता से काफी आहत महसूस करते थे तभी तो महाकवि ने भारतीय विधवा नारी के अन्तःमनोदश का चित्र काव्य में उतारा है :–

"दूर हुआ वह वहा रहा है;
उस अनन्त पथ से करूणा की धारा।।"[2]

एक विधवा नारी दुनिया वालों की बुरी नजरों से अपने को सफेद ऑचल में सजोए हुए अपने स्वत्व ही रक्षा करती है, भारतीय विधवा की अंर्तवेदना उसके जमीर को बार–बार झकझोरती है कभी–कभी वह अंर्तवेदना विद्रोह करने की

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–332
2. 'विधवा' : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–73

हद तक जाने का प्रयास करती है लेकिन समाज की व्यवस्था समाज का तिरस्कार उसको अन्दर से झकझोरता है। भारतीय समाज यदि किसी विधवा के प्रति संवेदना भी व्यक्त करता है तो मात्र उसे बेचारी कहकर अपनी जिम्मेदारियों से मुक्ति पाना चाहता है। सम्पूर्ण छन्द का कवि ने मानवीकरण किया है।

महाकवि निराला प्रकृति को माध्यम बनाकर अपने भाव, अपनी वेदना को जनता तक पहुँचाने का माध्यम बनाते थे। यहाँ कवि प्रकृति में अपने भावों की प्रतिच्छाया देखते हुए सान्ध्य कालीन वातावरण का वर्णन करते हैं –

"तप तप मस्तक
हो गया सान्ध्य नभ का रक्ताभ दिगन्त–फलक;
x x x
सिक्त–तन–केश शत लहरों पर
काँपती विश्व के चकित–दृश्य के दर्शनशर।।"[1]

यहाँ प्रकृति के माध्यम से कवि ने अपनी भावों की अभिव्यक्ति की है उपवन–बेला का मानवीकरण किया गया है। अन्यथा सम्पूर्ण प्रकृति वर्णन उद्दीपन विभवान्तरगत् है। हँसती उपवन बेला में मानवीकरण का पुट झलकता है।

इन अलंकारों के अतिरिक्त शब्द विचारों के कम में उलटफेर, छिन्न, वाक्य, वचन, कारक, पुरुष, एवं लिंग परिवर्तन आदि के द्वारा भी निराला ने अपने काव्य में अभिनय उत्कर्ष लाने की सर्जनात्मक कोशिश की है, भावयित्री और कारयित्री प्रतिभा से आद्य कुशल शिल्पी ने अपने रचना संसार में समुचित अलंकार योजना का विधान करके औदात्य सृजन में पूर्ण सफलता पायी है। ऐसा अप्रतिम शब्द–विधान देखकर कोई भी सहृदय पाठक चमत्कृत हुए बिना नहीं रह पाता है।

---

1. वन–बेला : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ–348

"उत्कृष्ट– भाषा का प्रयोग" :–

इसके अन्तर्गत वर्ण्य–विन्यास, शब्द–चयन तथा रूपकादि का प्रयोग आता है। लौंजाइस ने विचार एवं पद–विन्यास को इस प्रकार अन्योन्याश्रित माना है। जैसे– आत्मा एवं शरीर। उदात्त–विचारो की सर्जना में साधारण शब्द अनुपयोगी हो जाते हैं, अतः गरिमामयी भाषा आवश्यक हो जाती है। शब्दों के सौन्दर्य से ही शैली गरिमामयी बनती है। सुन्दर शब्द ही विचारों को अभिनव आलोक प्रदान करते है, इसी प्रकार साधारण भावों की अभिव्यक्ति के लिए गरिमामयी भाषा अनुचित लगने लगती हैं अनुकूल ध्वन्यात्मक शब्दों के प्रयोग तथा शब्दयोजना में संगीतात्मकता का कमिक नियोजन भी भाषिक–गरिमा में वृद्धि करता है और लौंजाइनस के अनुसार भाषा का वैशिण्टय एवं चरमोत्कर्ष ही उदात्त है। यही एक मात्र स्रोत है जिससे महान कवियों एवं इतिहासकारों को जीवन में प्रतिष्ठा और अमर यश मिलता है। निराला जी का कथन है कि प्रकृति की स्वाभाविक चाल से भाषा जिस तरफ भी जाए शक्ति सामर्थ्य और मुक्ति की तरफ या सुखानुशयता, मृदुलता और छन्द लालित्य की तरफ, यदि उसके साथ जातीय ज़ीवन का भी संबध है तो यह निश्चित रूप से कहा जाएगा कि प्राण–शक्ति उस भाषा में है।[1] वास्तव में जातीय जीवन का यह उन्मेष निराला की भाषा को प्राणवान बनाता है।

उत्कृष्ट भाषा प्रयोग के अन्तर्गत् शब्द–चयन बिम्ब–विधान तथा शैलीगत् परिष्कार अर्न्तभूत हैं। यह स्पष्ट है कि उपयुक्त एवं प्रभावोत्पादक शब्दावली श्रोता को आकर्षित करती हुई उसे भावाविभूत कर लेती है। ऐसी शब्दावली जिसमें भव्यता–सौन्दर्य ओज आदि श्रेष्ठ गुणों की अभिव्यक्ति हो प्रत्येक वक्ता या लेखक के लिए स्पृहणीय है। सुन्दर शब्द ही वास्तव में विचारों को विशेष

---

1. निराला संस्करण : इन्द्रनाथ मदान : पृष्ठ–127

प्रकार का आलोक प्रदान करते हैं। उत्कृष्ट भाषा की विभिन्न विशेषताओं के अन्तर्गत् सुन्दर शब्दावली के अतिरिक्त ओज प्रवाह– पूर्णता, रूपकों का सीमित प्रयोग, उपमानों एवं अति–युक्तियों का उचित प्रयोग आदि को स्थान दिया गया हैं। वस्तुतः भाषा के विभिन्न गुणों की उपयोगिता औदात्य की सृष्टि में है यदि उसके ये गुण इस लक्ष्य की पूर्ति करते हैं तो स्वीकार्य है अन्यथा नहीं।

निराला ने जीवन–साहित्य एवं समाज की ही भाँति कला के क्षेत्र में भी रूढ़ियों एवं परम्पराओं को स्वीकार नहीं किया, उन्होंने भाषा छन्द शैली प्रत्येक क्षेत्र में मौलिकता, नवीनता का समावेश करने का प्रयत्न किया है। चाहे वह भावपक्ष हो या कला पक्ष दोनों ही क्षेत्रों में हिन्दी साहित्य को छायावाद ने महत्वपूर्ण योगदान किया हैं कला–पक्ष के क्षेत्र में निराला ने नवीन भाषा शक्ति, मौलिक छन्द–विधान एवं नवीन अलंकार शैली को जन्म दिया, यह कहा जा सकता है कि निराला साधनावस्था के कवि हैं। निराला की प्रकृति शक्ति–सामर्थ्य और मुक्ति के अनुकूल हैं, ''प्रकृति के अनुसार भाषा–भिन्न होगी लेकिन उसे प्रत्येक दशा में जातीय–जीवन से सम्बद्ध होना जरूरी है। जातीय जीवन का अर्थ अतीतोत्मुखता नहीं है बल्कि इसके जीवन के अन्तर्गत् विकासोन्मुख राष्ट्र की वे समस्त आकांक्षाऐं समाहित है जो उसकी संस्कृति को अलग रूप देती हैं जातीय जीवन से अनुप्राणित भाषा के अनेकानिक संबंधों को व्यक्त करने में अधिक अर्थ–पूर्ण हो जाती है।''[1] 'राम की शक्ति पूजा' 'सरोज–स्मृति', 'तुलसीदास', 'जागो फिर एक बार', आदि की तो बात ही और है, कहीं से कोई कविता उठा लीजिए उसकी शब्दावली जातीय जीवन का समग्र बोधं कराती है।

---

1. कान्तिकारी कवि निराला : डॉ0 बच्चन सिंह : पृष्ठ – 145

निराला काव्य में ओज की प्रवाह–पूर्णताः –

निराला की भाषा का प्रवाह उसका आवेग– आवेश, चाहे वह लेखन का हो या वाचन का, वह एक अनुभव की वस्तु है। एक जगह 'रघुवीर सहाय' ने लिखा है–" मेरे मन में पानी के कई संस्मरण हैं निराला के काव्य को अजस्र निर्भर मानकर मैं भी कह समता हूँ कि मेरे मन में पानी के कई संस्मरण हैं– अजस्र बहते पानी के, फिर वह बहना चाहे मुसलाधार वृष्टि का हो, चाहे धुँआधार जलप्रपात का, चाहे पहाड़ी नदी का, क्योंकि जब निराला कविता पढ़ते थे तब ऐसी ही वेगवती धारा सी बहती थी, किसी रोक की कल्पना भी तब नहीं की जा सकती थी– सरोवर सा ठहराव भी उनके वाचन में अकल्पनीय था।"[1]

'राम की शक्ति–पूजा' में ओज की प्रवाह–पूर्णता देखते ही बनती है:–

"रवि हुआ अस्त : ज्योति के पत्र पर लिखा अमर;
रह गया राम–रावण का अपराजेय समार।

x x x

उद्गीरित–बहिन–भी–पर्वत–कपि–चतु : प्रहर
जानकी–भीरू– उर–आशाभर–, रावण–सम्बर।।"[2]

निराला ने यहॉ राम–रावण के अनिर्णीत युद्ध का वर्णन किया है। यहाँ शब्दों का प्रयोग इतनी कुशलता के साथ किया गया है कि इनको पढ़ने पर ऐसा लगता है जैसे पाठक के सामने ही कोई युद्ध छिड़ा हुआ हो और व्यूह–समूह–प्रत्युयं–हूह आदि ध्वनि–प्रधान शब्दों से मानों युद्ध की भयावहता प्रत्यक्ष हो रही है। यहॉ युद्ध के वातावरण को सजीव बनाने के लिए 'ट' वर्ग के अक्षरों, महाप्राण ध्वनियों, सत्यानुप्रासों का सुन्दर प्रयोग किया गया है भाषा में ओज–गुण की दीप्ति दृष्टव्य है ।

---

1. नाम–पथ : निराला जन्मशताब्दी अंक 1996 : पृष्ठ – 152
2 राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 1329

महाकवि निराला की 'यमुना के प्रति कविता' भाषा प्रवाहता का उदाहरण प्रस्तुत करती है।:-

"यमुने तेरी इन लहरो में;
किन अधरों की आकुल तान,
पथिक- प्रिया -सी जगा रही है;
उस अतीत के नीरव-गान?
बता कहाँ अब वह बंशीवट?
कहॉ गये नटनागर श्याम?
चल चरणों का व्याकुल पनघट;
कहाँ आज वह वृन्दाधाम?।।"[1]

यमुना का देखकर कवि के मन में उससे संबंधित समस्त अतीत जागृत हो उठता है, यहॉ अतीत के प्रेम कवि के राष्ट्र-प्रेम एवं सांस्कृतिक प्रेम का द्वैतक हैं। कवि को यमुना की लहरों में पथिक प्रिया की भाँति कवि के अतीत की स्मृतियों का मादक कौन रूप द्रष्टव्य है। साथ ही साथ निराला की भाषा का प्रवाह देखते ही बनता है।

निराला की तुलसीदास कविता नारी के विद्रोहात्मक रूप के उदात्त-स्वरूप का तथा भाषा-प्रवाह और वाक्य विन्यास की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कविता है:-

"बिखरी छूटी शफरी-अलकें;
निण्यात नयन-नयन नीरज पलकें।
भावातुर पृथु उर की छलकें उपशमिता;
निः सम्बल केवल ध्यान मग्न।

---

1. 'यमुना के प्रति' : निराला रचनावली भाग (1) - पृष्ठ - 115

जागी योगिनी अरूप लग्न;

वह खडी शीर्ण प्रिय–भाव–मग्न निरूपमिता।।"[1]

यहॉ कवि निराला ने कामाविभूति तुलसीदास के आगमन से क्रुद्ध एवं दुषित रत्नावली की रोषपूर्ण मूर्ति का चित्रण करते हैं। यहाँ उनके विचारों एवं पद–विन्यास में अद्भुद सामंजस्य दिखायी देता है। साथ ही भाषा प्रवाह एंव कथन की भंगिमा को एक उदात्त–स्वरूप भी प्रदान करता है।

निराला काव्य में रूपक–योजना :–

भारतीय साहित्य में रूपकों का प्रयोग यद्यपि नया नहीं है, किन्तु निराला के यहाँ इनका प्रयोग बिल्कुल नए सन्दर्भ के साथ प्रस्तुत हुए हैं। प्रायः सभी कवियों ने रूपकों के माध्यम से अपनी कल्पना को सर्जनात्मक आयाम दिया है भारतीय साहित्य में प्रकृति और रूपक का गहरा संबंध रहा है। अप्रस्तुत कल्पना और बिम्ब प्रकृति के माध्यम से सर्जनात्मक अभिव्यक्ति पाते रहते है; उदाहरण के लिए निराला की 'यामिनी जागी' शीर्षक कविता को ले सकते हैं :–

(प्रिय) 'यामिनी जागी।

असल पंकज–दृग अरूण–मुख;

तरूण–अनुरागी।

खुले केश अशेष शोभा भर रहे,

पृष्ठ –ग्रीवा– बाहु–उर पर तर रहे,

बादलों में घिर अपर दिनकर रहे,

---

1. 'तुलसीदास' : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 302

ज्योति की तन्वी, तड़ित–
द्युति से क्षमा माँगी।
हेर उर–पट, फेर मुख के बाल
लख चतुर्दिक चाली मन्द–मराल
गेह में प्रिय–स्नेह की जयमाल
वासना की मुक्ति–मुक्ता
त्याग में तागी।"[1]

यहाँ हम अप्रस्तुत कल्पना और बिम्ब का एक असाधारण मिलन पाते हैं। 'अलस पंकज दृग–अरूण–मुख तरूण अनुरागी' एक रूपक है। इसी प्रकार 'बादलों' में फिर अपर दिनकर रहें' भी अप्रस्तुत योजना है। परन्तु शेष सारी कविता बिम्बात्मक है। केवल अंतिम दो पंक्तियाँ 'वासना की मुक्ति', 'मुक्ता त्याग में तागी' बिम्ब की सीमा के बाहर है। इस प्रकार वर्ण्य वस्तु बिम्ब के रूप में प्रस्तुत हुई है, उस बिम्ब को अलंकृत करने के लिए अप्रस्तुत का प्रयोग हुआ है। निराला की 'भिक्षुक', 'विधवा', 'सन्ध्या–सुन्दरी' जैसी रचनाओं में वर्ण्य–वस्तु बिम्ब के रूप में प्रस्तुत की गयी है। चित्रण प्रधान कवि होने के कारण निराला में बिम्बों के निर्माण की सशक्त प्रवृत्ति देखी जाती है। निराला की 'भिक्षुक' कविता में कवि ने एक भिखारी का सहानुभूतिपूर्ण चित्र खींचा है:–

"पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक;
चल रहा है लकुटिया टेक,
मुट्टी भर दाने को–भूख मिटाने को
मुँह फटी–पुरानी झोली को फेलाता–
दो टुक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।"[2]

---

1. (प्रिय) यामिनी जागी : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 253
2. 'भिक्षुक' : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 76

कवि निराला ने गरीबी को नजदीक से देख था। कवि ने यहॉ पर एक भूखे प्यासे भिक्षुक का मार्मिक चित्र खींचा है। कवि निराला का 'भिक्षुक' मुट्ठी–भर अनाज की प्राप्ति के लिए किस प्रकार की दर–दर की ठोकरें खाता है एवं जन–मानस का अपमान सहता है, साथ ही साथ वह अपने पूर्वजन्म को कोसता भी है। यहॉ भिक्षुक रूपक के रूप में प्रस्तुत हुआ है वह एक पात्र ही नहीं बल्कि पूरे आर्थिक–परिवेश से उपजा हुआ चरित्र भी है। जो कि समस्त सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था पर चोट करता है।

निराला की 'विधवा' कविता भी कुछ इसतरह सामाजिक व्यवस्था पर चोट करती हुई दिखाई देती है। भारतीय विधवा का यह रूप अन्यत्र शायद ही दिखाई दे:–

> ''वह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा–सी
> व दीप–शिखा सी शान्त भाव में लीन
> वह क्रूर–काल ताण्डव की स्मृति–रेखा–सी
> वह टूटे तरू की छटी लता सी दीन–
> दलित भारत की ही विधवा है।''[1]

निराला जी ने भारतीय विधवा को 'पूजा–सी' 'दीप–शिखा सी', 'स्मृति रेखा–सी' कहकर रूपक का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है।

भारतीय विधवा अपने आराध्यदेव पति के नाम पर इस प्रकार अपनापन छोड़े हुए पड़ी है जैसे मन्दिर में देवता के सम्मुख पूजा की सामग्री पड़ी रहती है।

'सरोज–स्मृति' निराला के अप्रस्तुत की उदात्तता का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

> ''धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण;

---

1. विधवा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 72

बाल्य की केलियों का प्राङ्गण।

कर–पार कुजं–तारूण्य सुघर;

आयी, लावण्य भार थर–थर

काँपा कोमलता पर सस्वर;

ज्यों मालकौश नव वीणा पर।"[1]

यहाँ ज्यों मालकौश नव–वीणा पर यौवन के प्रथमागमन का बिम्ब है, नव–वीणा स्वयं युवती है जो स्पर्श भाव से झंकृत हो सकती है। मालकौश की तरह यौवन अनुभूतियात्मक है।

'नूपुर के सूर मन्द रहे' शीर्षक कविता मानवीकरण और पद–मैत्री का सुन्दर उदाहरण है।

"नूपुर के सुर मन्द रहे

जब न चरण स्वछन्द रहे।

x x x

नयनों के ही साथ फिरे वे;

मेरे घेरे नहीं घिरे वे,

तुमसे चल तुममें ही पहुँचे;

जितने रस आनन्द रहे।"[2]

यहाँ नूपुर की स्वछन्दता से छन्द की स्वछन्दता को बाँधा गया है, यहाँ नूपुर का मानवीकरण है नूपुर–सुर, छन्द बन्द में पद–मैत्री है। जिस प्रकार पैरों के न चलने पर पैजनी की ध्वनि बन्द हो जाती है उसी प्रकार छन्दों से कविता को बँध जाने पर कविता की स्वाभाविकता समाप्त हो जाती है। यहा नायिका की नायक के प्रति प्रथम हँसी को पूर्णमासी के निर्मल रात्रि के बिम्ब से बाँधा

1. सरोज–स्मृति : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 319
2. नूपुर के सुर मन्द रहे : निराला रचनावली भाग दो : पृष्ठ – 67

गया है। इस कविता में भाषा प्रवाह देखते ही बनता है।

'वनबेला' निराला जी की एक बहुत ही महत्वपूर्ण कविता है जिसमें मानवीकरण तथा उपमा का उत्कृष्ट उदाहरण है:—

"वर्ष का प्रथम
पृथ्वी के उठ उरोज मंजू पर्वत निरूपम
x x x
क्षोभ से, लोभ से, ममता से;
उत्कंठा से प्रणय के नयन की समता से
सर्वस्व दान
देकर, लेकर सर्वस्व प्रिया का सुकृत मान।"[1]

यहाँ प्रकृति का मानवीकरण किया गया तपन—यौवन—क्षोभ लोभ—ममता—समता में पद—मैत्री है, तपन—यौवन में रूपक भी है, प्रकृति का आलम्बन रूप में वर्णन है ग्रीष्म की तपन के माध्यम से निराला ने ओज की मधुर व्यंजना की है, कोमलकान्त पदावली में निहित संगीतात्मकता दृष्टव्य है।

'धारा' शीर्षक कविता में कवि निराला यौवन के वेग की अबाध प्रवलता की चर्चा करते हैं;—

"सुना, रोकने उसे कभी कुंजर आया था,
दशा हुई फिर क्या उसकी ?
फल क्या पाया था?
तिनका जैसा—मारा—मारा
फिरा तरंगों में बेचारा
गर्व गँवाया—हारा;
अगर हठ—वश आओगे

---

1. बनवेला : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ — 345

दुर्दशा करवाओगे–वह जाओगे।"[1]

यहाँ 'तिनका–सा' में उपमा है, यहाँ कवि ने यह बताया है कि प्रबल धारा को रोकने का हठ करोगे तो तुम भी बह जाओगे। कहने का तात्पर्य यह है कि कविता के प्रवाह को छन्दों में नहीं बाँधा जा सकता अर्थात् कविता स्वछन्द ही रहनी चाहिए। क्योंकि वह अर्न्तरात्मा की अर्न्तवेदना से निकलती है।

उपमाओं एवं अति–युक्तियों का उचित–प्रयोगः–

निराला काव्य में उपमा अपना विशिष्ठ महत्व रखता है 'जागो फिर एक बार' (भाग दो) शीर्षक कविता उपमा को दर्शाने का एक सशक्त उदाहरण हैः

"सत् श्री अकाल
भाल–अनल धक–धक कर जला
भस्म हो गया था काल
भेद कर सप्तावरण–मरण–लोक,
शोकहारी! पहॅुचे थे वहॉ
जहॉ आसन है सहसार–।"[2]

यहॉ कवि मातृ–भूमि के हित में बलिदान होने वाले सिख वीरों के बलिदान का प्रशस्ति करता है। व्योमकेश के समान में उपमा है। यहाँ योग–शास्त्र और काव्य–शास्त्र का सफल सामंजस्य है। अतीत के गौरव–गान द्वारा देश प्रेम का स्वर व्यंजित है। सप्तावरण–चेतना के सातस्वर इन्हें विभिन्न प्रकार से अभिहित किया जाता है। हठयोग में इन्हे सात–चक्र, राज–योग में सात शरीर कहते हैं। ये सप्तावरण मूल प्रवृत्ति या पदार्थ के सात स्वरों के

1. धारा : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 84
2 जागो फिर एक बार भाग (2) : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 153

समकक्ष माने गये हैं। ठोस, द्रव, गैस, ईथर, सुपर ईथर निम्न आणविक और आणविक।

'दान' शीर्षक कविता ने न केवल उपमा बल्कि मानवीकरण पद–मैत्री रूपक आदि का सशक्त उदाहरण है:–

"बासन्ती की गोद में तरूण
सोहता स्वस्थ–मुख बालारूण;
चुम्बित, सस्मित, कुंचित, कोमल
तरूणियों सदृश किरणें चंचल"

x x x

सौरभ वसना समीर बहती
कानों में प्राणों की कहती;
गोमती क्षीण–कटि नटी नवल;
नृत्यपर मधुर–आवेश चपल।।"[1]

यहाँ बसन्त–ऋतु सूर्य, पवन, मल्लिका, पलास गोमती आदि समस्त वर्ण–पदार्थों का मानवीकरण किया, भाव तरूणियों सदृश्य में उपमा है। चुम्बित, सस्मित, कुंचित, बन बन उपवन आदि में पद–मैत्री है। यहाँ प्रकृति का वर्णन मानवीकरण की पद्धति पर है शैली में लाक्षणिकता है।

काव्य–भाषा का आदर्श स्वरूप वही है जो कवि के वक्तव्य को उत्कृष्ट रूप में अभिव्यक्त कर सके। यह सामान्य भाषा से अधिक व्यापक व्यंजक, विशिष्ठ और परिष्कृत होती है और सदैव विषय एवं भाषा का अनुसरण करती है। विषय यदि महान और असाधारण है तो उसे व्यक्ति करने के लिए भाषा भी उदात्त और असाधारण होगी, निराला का काव्य भाषा की दृष्टि से नये प्रयोगों नये विस्तार और नमोन्मेष का प्रतिनिधि है। उनका भाषा आदर्श संस्कृति के

---

1. दान : निराला रचनावली भाग एक : पृष्ठ – 307

कवि जगदेव, तुलसीदास और रवीन्द्रनाथ टैगोर से पूर्णतः प्रेरित और प्रभावित है। छन्दानुरूप भाषा –विन्यास उनमें प्रायः सर्वत्र दिखायी देता है। किन्तु निराला की कविताओं में विशेषकर दीर्घ–छन्दों के प्रयोग से उनकी भाषा महाकाव्योचित औदात्य का स्पर्श करती है। नई चेतना भूमियों की अभिव्यक्ति के लिए जिस गंभीरता से उन्होंने भाषा निर्माण का प्रयत्न किया वह सराहनीय है। उनकी समास–बहुला, पदावली भावानुकूल शब्द–योजना, अनेकानेक छन्द–प्रयोग नाद–वैशिष्ट्य उनके अपने हैं, निराले हैं। इतना अधिक विस्तार और गहराई अपने सांस्कृतिक परम्पराओं को इतने नवीन, पर काव्योचित ढ़ग से प्रस्तुत करने की अप्रतिम क्षमता किसी अन्य कवि में नही पायी जाती ।[1]

गरिमामय रचना–विधान :–

यदि किसी कृति में शब्द, विचार, घटना, कार्य सौन्दर्य एवं राग आदि के विविध रूपों का सामंजस्य दिखायी दे तो उसका औदात्य अक्षुण बना रहता है। जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अंगो की सुडौलता समानुपात एवं सन्तुलन में समाहित रहता है, उसी प्रकार काव्य के विविध अंगो में औचित्य निर्वाह से वह हृदय मनोहर बन जाता है। अन्यथा उसमें शैलीगत् दोष आ जाता है। कवि को चाहिए वह स्थान रीति अवसर आदि के प्रति पूर्ण सतर्क हो। गरिमा के सम्पूर्ण तत्वों की संयुति से ही कृति महनीय उदात्त बनती है। लौंजाइनस ने बिम्बों के निर्मात्री शक्ति के रूप में कल्पना तत्व की चर्चा की है। अनुभूति के क्षणों में कल्पना के सहयोग से कवि के मानस पटल पर जिस प्रकार के बिम्बों या चित्रों का निर्माण होता है। लौंजाइनस इसे 'ईपैथी' (सह–अनुभूति) कहता है, और उसे काव्य का एक आवश्यक गुण मानता है। किसी कवि की शक्तिमत्ता उसके अर्थ–गर्भ मार्मिक बिम्बों के सृजन में निहित होती है, निराला ऐसे ही प्रतिभा

1. निराला – संस्करण : इन्द्रनाथ मदान : पृष्ठ–182, 170

सम्पन्न कलाकार है जिसमें ऐसे सूक्ष्म अर्थ–व्यंजक बिम्बों की कमी नहीं है जो अपनी सहजता में अनुपम है।

निराला का बिम्बगत् वैशिष्ट्य:–

तुलसी कविता में रत्नावली का भाई जब उसे लिवाने आता है तब वह अपनी ओर से पितृ–गृह के सभी जनों का सन्देश कहता है। पिता और भाभी का संदेश यों है :–

> "बोले बापू योगी रमता मैं अब तो;
> कुछ ही दिन को हूँ कूलद्रूम।
> छूँ लो पद फिर, कह देना तुम;
> बोली भाभी लाना, कुंकुम शोभा को।"[1]

इन पंक्तियों में कुलद्रुम से वृद्धावस्था का वह जर्जर रूप सामने आ जाता है जो नदी तट के वृक्ष समान चाहे जब काल की धारा का ग्रास हो सकता है तो 'कुंकुम शोभा' में रत्नावली की चारित्रिक निष्कलंकता और नारी सुलभ गरिमा की व्यंजना होती है।[2]

निराला की छन्दगत् मौलिकता :–

निराला छन्दों के गुरू थे। उन्होंने छन्दों के जो बहुविध प्रयोग अपने काव्य में किए हैं, वे उन्हें शत–प्रतिशत मौलिक सिद्ध करते हैं। गीतों में काव्य और संगीत का समन्वय करके उन्होंने एक अभिनव परम्परा का सूत्रपात किया तो प्रगीतों में उन्होंने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया और स्वछन्द छन्द का आविष्कार किया। 'तुलसीदास' में चौपाई छन्द को आधार बनाकर एक नये छन्द

---

1. तुलसीदास : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 284
2. उपरिवत् ।

का निर्माण किया गया है, जिसके प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ एवं पंचम् चरणों में 16–16 मात्राएँ हैं और तृतीय एवं षष्ठ चरणों में 22–22 मात्राएँ, अन्त्यानुप्रास का क्रम यह है कि वह और द्वितीय चतुर्थ और पंचम् तथा तृतीय और षण्ठ को मिलता है ।[1]

> "चल गन्द चरण आये बाहर
> उर में परिचित वह मूर्ति सुघर
> जागी विश्वाश्रय महिमाधर, फिर देखा
> संकुचित, खोलती श्वेत पटल
> बदली, कमला तिरती सुख–जल,
> प्राची –दिगन्त–उर में पुष्कल रविरेखा।।"[2]

महाकवि निराला का व्यक्तित्व उदारता, सरलता, स्पष्टवादिता, निष्कपटता और सदाशयता की प्रतिमूर्ति था। वे भीतर से जितना ही निष्कपट और सरल थे बाहर से उतना ही मृदुल। उनके यहाँ कृत्रिमता का कोई स्थान नहीं था स्वभाव से वे विनोदप्रिय थे। संक्षेप मे कहा जा सकता है कि नाम के अनुरूप ही उनका व्यक्तित्व भी निराला था। कहने का तात्पर्य यह है कि निराला का पूरा का पूरा सर्जनात्मक व्यक्तित्व उनके खुद के व्यक्तित्व से काफी कुछ मिलता–जुलता हैं। 'राम की शक्ति–पूजा' की निम्नलिखित पंक्तियॉ उनके शब्द–योजना को उद्धृत करती है–

> "बिच्छुरित वह्नि–राजीव–नयन–हत–लक्ष्य–वाण,
> लोहित–लोचन–रावण–मदमोचन–महीयान;
> राघव–लाघव–रावण वारण गत युग्म प्रहर

1. निराला संस्करणःइन्द्रनाथ मदानःपृष्ठ–170
2. तुलसीदासः निराला रचनावली भागएक : पृष्ठ–307

उद्धृत–लंकापति–मूर्च्छित–कपिदल–छल–बल–बिस्तर।''[1]

'राम की शक्ति–पूजा' की इन पंक्तियों में राम की क्रोधित आँखों की लालिमा के लिए बिच्छुरित–बह्नि शब्द का प्रयोग किया गया है। जब की वहीं रावण की कोधित आँखों की लालिमा को लोहित शब्द का प्रयोग किया गया है। आगे इसी कविता में राम के मन में सीता की कोमल स्मृतियाँ जागृत होती हैं, उसको कवि ने कुछ इस तरह दिखाया है :–

''देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का,–प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन।
नयनों का नयनों से गोपन–प्रिय संभाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान पतन
काँपते हुए किसलय झरते पराग समुदय –
गाते खग नव–जीवन परिचय, तरू–मलय–बलय
जानकी नयन कमनीय प्रथम कम्पनतुरीय।।''[2]

'राम की शक्ति–पूजा' की पंक्तियों में भावानुरूप शब्द–योजना द्रष्टव्य हैं। विदेह–बाटिका में सीता के प्रथम दर्शन, नयनों का नयनों से गोपन प्रिय संभाषण', याद आते ही उस समय के विराट् अनुभूत्यात्मक प्रतिकिया भी स्मृति–पटल पर उभर आती है। पलकों का प्रथमोत्थान पतन, क्या हुआ कि किसलय काँप उठे, चतुर्दिक पराग प्रसवित होने लगा, तरूदल, मलय, बयलित हो उठे। मानों प्रातः कालीन स्वर्गीय ज्योतिः प्रपात चारों ओर झर रहा हो। निराला की यह विशेषता रही है, जिसे समीक्षकों ने विरोधों का सामंजस्य कहा है। एक तरफ युद्ध की भयावहता दूसरी तरफ प्रिया से मिलन की पहली

---

1. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 329
2. राम की शक्ति–पूजा : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 331

कोमलानुभूति दोनो अनुभूतियाँ निराला काव्य को औदात्य की ऊँचाई पर पहुँचाते हैं।

'सरोज–स्मृति' हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ शोक–गीत है। यद्यपि इसका कथानक पुत्री के निधन के प्रसंग को लेकर हैं। किन्तु बीच–बीच में आयी हुई अनेक स्मृतियाँ इस शोक को और बढ़ा देती हैं। निराला को 'सरोज' और उसके भाई की मार–पीट का चुभता हुआ दृश्य याद आ जाता है :–

"खाई भाई की मार, विकल
रोई, उत्पल–दल–दृग–छलछल;
चुमकारा फिर उसने निहार;
फिर गंगा तट–सैकत विहार।
करने को लेकर साथ चला;
तू गहकर चली हाथ चपला।"[1]

'सरोज–स्मृति' की इन पंक्तियों में सरोज के बाल्यकाल की स्मृति निराला को गहरे शोक में डूबो देती हैं। शोक के अनुरूप ही भाषा प्रयोग कुछ इस तरह हुआ है मानो छोटी सी बच्ची के रूप में सरोज पाठक के सामने उपस्थित हो जाती है। आगे इसी कविता में विनोद–व्यंग्य का पुट विवाह पद्धति को लेकर है:–

"ये कान्य–कुब्ज कुल कुलांगर
खाकर पत्तल मे करें छेद
इनके कर कन्या, अर्थ खेद
इस विषय बेलि में विष ही फल
है दग्ध मरूस्थल नहीं सुजल।"[2]

---

1. सरोज–स्मृति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 317
2. सरोज–स्मृति : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 321

यहाँ कन्नौजियों की संकीर्ण विवाह पद्धति पर गहरा व्यंग्य करके उनकी कुरीति दहेज की दूषित प्रथा, कुल के छोटे बड़े होने के छिद्रान्वेषण आदि की खूब खिल्ली उड़ायी गयी है, व्यंग के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया गया है। 'खाकर पत्तल में करें छेद जैसे मुहावरों के द्वारा व्यंग्य की धार को तीव्र किया गया है। विषम् बेलि में विष ही फल; जैसे व्यंगात्मक मुहावरों का प्रयोग दृष्टव्य हैं।

कवि निराला की 'तोड़ती पत्थर' कलात्मक सौन्दर्य एवं कथ्य की दृष्टि से अप्रतिम रचना है, इस कविता का दूसरा बन्ध है :–

> ''कोई न छायादार
> पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार
> श्याम तन, भर बँधा यौवन,
> नत नयन, प्रिय–कर्म–रत् मन,
> गुरू हथौड़ा हाथ,
> करती बार–बार प्रहार–
> सामने तरू–मलिका, अट्टालिका प्राकार।।''[1]

इस कविता का एक–एक शब्द और वाक्य इस्पात की तरह ढ़ला हुआ है। इलाहाबाद के पथ पर पूरी रचना सगुम्फित है। इसके अभाव में 'तरू–मलिका अट्टालिका' की व्यंजना अधूरी रह जाएगी, कोई ने छायादार कहने से छाया–हीनता का बोध स्वतः हो जाता है। विरूद्धों का यह सामंजस्य कवि की अर्थवत्ता को सघन बना देता है। 'करती बार –बार प्रहार', की चोट सिर्फ पत्थर पर ही नहीं पड़ती अपितु तरू–मलिका अट्टालिका पर भी पड़ती है। जो शोषण की सम्पूर्ण व्यवस्था पर धक्का तो है ही, साथ ही उस धक्का को

---

1. तोड़ती पत्थर : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 342

मारने के लिए जिस आत्मबल की जरूरत होती है या यों कहें कि धक्के देने के लिए जिस मजबूज हाथ की जरूरत होती है वह 'गुरू हथौडा' के रूप में उसके पास है।

'कुकुरमुत्ता' निराला का एक अभिनव प्रयोग है इसमें एक ओर भाषागत् अभिजात्य है तो दूसरी ओर उसका विरोधी स्वर भी है। कहीं कहीं दोनों का मिला जुला रूप भी है। 'अभिप्रेत' अर्थवत्ता के लिए वे किसी भी प्रकार की भाषा का प्रयोग कर सकते थे :–

"अबे! सुन बे! गुलाब;
भूल मत पायी खूशबू रंगोआब।
खून चूस खाद का तूने अशिष्ठ;
डाल पर इतरा रहा है कैपटिलिस।
कितनो को तूने बनाया है गुलाम
मालिक कर रखा सहाया जाड़ा घाम
हाथ जिसके तू लगा
पैर सर पर रख कर वह पीछे को भगा
जानिब औरत की मैदाने जंग छोड़
तबेले को टटट् जैसे तंग तोड़
x x x
रोज पड़ता रहा पानी;
तू हरामी खानदानी"।"[1]

इन पंक्तियों में जो तेवर दिखायी पड़ता है, उसके लिए खाद, अशिष्ठ, जानिब और तबेले का टट्टू आदि शब्द और मुहावरे अर्थ की भंगिमा के लिए जरूरी थे, तू हरामी खानदानी उसके परम्परागत् हरामीपन को पीढ़ी–दर–पीढ़ी

1. कुकुरमुत्ता : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 50

के हरामीपन को संवेदनात्मक स्तर पर उजागर करता है। भाषा का ऐसा अभिजात्य प्रयोग स्वयं निराला के यहाँ ही विरल है।

प्रकृति में नारी का आरोपण :–

प्रकृति पर अपनी भावनाओं का आरोपण प्रायः सभी कवियों ने किया है। मनुष्य के लिए मनोवैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि नारी सुन्दरतम् पदार्थ है। प्रकृति के ऊपर नारीत्व की भावना का आरोप करके उसकी कोमलता और सुष्टता का परिचय प्रायः सभी कवियों ने दिया है। निराला ने तो मानो शब्द–चित्र ही लिख दिया है। 'सन्ध्या–सुन्दरी' इस खण्ड की सर्वश्रेष्ठ चित्र है–भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से :–

"दिवावसान का समयः
मेघमय आसमान से उतर रही है।
वह सन्ध्या सुन्दरी परी –सी;
धीरे–धीरे–धीरे।
x x x
अलसता की सी लता;
किन्तु कोमलता की वह कली।
सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बाँह;
छाँह–सी अन्दर पथ से चली।"[1]

कवि निराला ने 'सन्ध्या–सुन्दरी' की इन पंक्तियों में सन्ध्या अपनी मंथरता, गंभीरता, नीरवता अलसता में निराले ढ़ग से चित्रित हो उठी है फिर उसकी यह निरवता धीरे – धीरे, जगती तल में अमल कमलिनी दल में,

---

1. सन्ध्या–सुन्दरी : निराला रचनावली भाग (1) – पृष्ठ – 77

सौन्दर्यगर्विता सरिता के वक्ष स्थल में, हिमगिरि अटल–अचल मे, क्षिति में, जल में, नभ में, अनिल, अनल में फैल जाती है। सारा छन्द उसकी नीरवता, आदि गुणों को अपनी लय में इस तरह बाँध लेता है कि सम्पूर्ण अंकन अभूतपूर्व बन जाता है।

निराला की कविताओं में सौन्दर्य एवं राग का अद्‌भुद सामंजस्य दिखायी देता है। उनके अधिकांश प्रगीतों में राग तो है ही साथ ही साथ सौन्दर्य भी है:–

"(प्रिय) यामिनी जागी
असल पंकज–दृग अरूण–मुख
तश्रण अनुरागी।
खुल केश अशेष शोभा भर रहे
पृष्ठ–ग्रीवा–वाहु–उर पर तर रहे
बादलों में घिर अपर दिनकर रहे
ज्योति की तन्वी तड़ित–
द्युति ने क्षमा मॉगी।।"[1]

'यामिनी जागी' शीर्षक कविता की पंक्तियों में राग और सौन्दर्य का अद्‌भुत सामंजस्य है, सौन्दर्य–वर्णन रीति–कालीन काव्य शैली पर है। संस्कृतनिष्ठ कोमलकान्त पदावली के समास पद्धति का सुन्दर प्रयोग है। पूरे छन्द में मानवीकरण का आरोप है, मानवीकृत प्रकृति पर नारी का यह आरोप एक अतिन्द्रियता का आभास होता है।

---

1. (प्रिय) यामिनी जागी : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 253

प्रकृति का मानवीकरण :–

'बसन्त आया' शीर्षक कविता मे कवि निराला ने बसन्त ऋतु का मानवीकरण किया है जिसके कारण राग और सौन्दर्य का अदभुद सामंजस्य पैदा हो गया है:–

> "किसलय–बसना नव–वय–ललिता
> मिली मधुर प्रिय–उर तरू पतिका
> मधुप–वृन्द बन्दी
> पिक–स्वर नभ सरसाया।"[1]

इन पंक्तियों में कवि का प्रकृति–प्रेम अभिव्यक्त है। प्रकृति पर चैतन्यारोपण करके प्रकृति का आलम्बन रूप में सजीव–वर्णन है। प्रकृति में नारी का दर्शन करके संयोग श्रृगांर की व्यंजना की गयी है कोमलकान्त पदावली का माधूर्य द्रष्टव्य है।

निराला का मन कभी–कभी समाजवादी विचार धारा में रमा है 'बेला' और 'नये पत्ते' की कविताओं में इनकी ध्वनि बराबर निकलती रही है। कवि निराला ने व्यक्तिगत् सम्पत्ति का निषेध करते हुए उस पर देश के नियंत्रण का निवेदन किया है :–

> "सारी सम्पत्ति देश की हो,
> सारी आपत्ति देश की बने
> जनता जातीय वेश की हो
> x x x
> भेद कुल खुल जाय वह
> सूरत हमारे दिल में है

1. (प्रिय) यामिनी जागी : निराला रचनावली भाग (1) : पृष्ठ – 253

देश को मिल जाय जो
पूँजी हमारी मिल में है।।"

समाजवाद की अर्थ–पद्धति में विश्वास करते हुए कवि निराला का मानना है कि पूँजी केवल देश की होनी चाहिए, व्यक्ति की नहीं, 'देश को मिल जाय जो पूँजी तुम्हारे मिल में है' को कहने का तात्पर्य यह है कि पूँजीवादी व्यवस्था देश के लिए हानिकारक है। इससे गरीबी और अमीरी के बीच की खाँई बढ़ती है पूँजीपतियों द्वारा गरीबों का शोषण न हो इसके लिए कवि ने अपनी सर्जनात्मक अभिव्यक्ति दी है।

अतीत का वर्तमान से सामन्जस्य :–

निराला ने भारत की प्राचीन सांस्कृतिक पक्ष का उद्घाटन 'अनामिका' की कुछ कविताओं में बड़े ही सुन्दर ढ़ग से किया है। 'यमुना के प्रति', 'दिल्ली' खण्डहर के प्रति और 'यही' में कवि ने अपने अतीत के वैभव को देखा है कवि खण्डहर से पूछता है कि अपने अतीत के वैभव को देखा है कवि खॅडहर से पूछता है कि तुम्हारा उद्देश्य क्या है? :–

"आर्त भारत! जनक हूँ मैं;
जैमिनि–पतंजलि–व्यास–ऋषियों का।
मेरी ही गोद पर शैशव–विनोद कर;
तेरा है बढ़ाया मान।
राम–कृष्ण–भीमार्जुन–भीष्म नर देवों ने;
x x x
भूले वे मुक्त प्रान, साम–गान–सुधापान।"

कवि निराला ने खण्डहर के माध्यम से भारत के अतीत गौरव का वर्णन किया है। यहाँ खण्डहर उस ध्वस्त गौरव का प्रतीक है जो किसी समय अद्‌भुत था किन्तु जिसको हम लोग भूल गए। इस कविता के माध्यम से कवि की देश–भक्ति मुखर हुई है। कविता के अन्त में कवि भारत के उज्जवल भविष्य की मंगल कामना भी करता है।

निराला अपने कवि–कर्म के प्रति पूर्ण सजग एवं चैतन्य है। भाषा गरिमा–वैचारिक–भव्यता और आवेग जैसे कवि के नैसर्गिक गुण इसमें दिखाई देते हैं। बिम्ब, प्रतीक, अलंकार एवं शब्द–विन्यास आदि की निपुणता निराला के सर्जनात्मक वैशिष्ट्य् को प्रमाणित करती है। इसके प्रकृति चित्रण का कहना ही क्या? उस पर मुग्ध होकर विश्वम्भर मानव लिखते हैं प्रकृति का जैसा उद्‌घोष निराला जी ने यहॉ किया है वैसा कम कवि कर पाते हैं। प्रारम्भ से ही इनकी प्रकृति संकेतमयी रही है। उसी के माध्यम से कवि ने दो संस्कृतियों के वैषम्य की कथा समझायी है, उसी के आधार पर तुलसी के अर्न्तद्धन्द को चित्रित किया गया है और वही उन्हें मोह के परदे को सरकाकर सत्य के दर्शन कराती है। इस रचना में प्रकृति के कई विराट चित्र अंकित हुए है। उसकी जड़ता और चेतना दोनों को ठीक से पहचानकर कवि ने उसके माया–मय माध्यम और चिन्मय दोनों स्परूपों को अच्छा उद्‌घाटित किया है।

एटकिन्सन ने लौंजाइनस के सर्जनात्मक वैभव की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि– "There are, things in its that can, be never grow old, while its freshness and light will contine to charm all ages."

उनके इन विचारों को हम निःसन्देह निराला की इस दिव्य सर्जना के सन्र्दभ में अक्षरशः सत्य मान सकते हैं। निराला की इस अनूँठी रचना को पढ़कर भाषा–मर्मी एवं शब्द–शिल्पी अज्ञेय जी को उसके सन्दर्भ में नये ढ़ग से सोचने को बाध्य होना पड़ा था। वे लिखते हैं कि इसके बाद की जिस भेंट का उल्लेख

करना चाहता हूँ, उससे पहले निराला जी के काव्य के विषय में मेरा मन पूरी तरह बदल चुका था। वह परिवर्तन कुछ नाटकीय ढग से ही हुआ शायद कुछ पाठकों के लिए आश्चर्य की बात होगी कि वह उनकी 'जूही की कली' व 'राम की शक्ति–पूजा' पढकर नहीं हुआ उनका 'तुलसीदास पढ़कर हुआ। अब भी उस अनुभव को याद करता हूँ तो मानों एक गहराई में खो जाता हूँ। अब भी 'राम की शक्ति–पूजा' अथवा निराला के अनेक गीत बार–बार पढ़ता हूँ, लेकिन निराला के काव्य जब–जब पढ़ने बैठ़ता हूँ तो इतना ही नहीं कि एक नया संसार मेरे सामने खुलता है उससे भी विलक्षण बात यह है कि वह संसार मानों एक ऐतिहासिक अनुक्रम में घटित होता हुआ दिखता है। मैं मानो संसार का एक स्थिर चित्र नहीं बल्कि एक जीवित चल–चित्र देख रहा होता हूँ। ऐसी रचनाएं तो कई होती है जिनमें एक रसिक हृदय बोलता है। बिरली ही रचना ऐसी होती है जिनमें एक सांस्कृतिक चेतना सर्जनात्मक रूप में अवतरित हुई हो। कवि निराला के काव्य में ऐसी कई रचना है जो एक बार पढ़ने के बाद बार–बार पढ़ने की इच्छा जागृत होती है। मेरी बात में जो विरोधाभास है वह बात को स्पष्ट ही करता है, 'राम की शक्ति पूजा' हो, या 'यमुना के प्रति' हो, 'सरोज–स्मृति' हो या 'तुलसीदास' इन सबके साथ ही साथ उनकी अन्य कविताएं अपनी ओर आकर्षित करती हैं। स्पष्टतः वह उदात्त रचना का ही प्रभाव हो सकता है जिस भी पाठक को ऐसी गंभीर साहित्यिक संस्कार और सोच समझ होगी उसके लिए यह बोधगम्य बनेगी।

निराला की काव्य–भाषा की प्रमुख विशेषताएं रही हैं– कोमलता, शब्दों की मधरु–योजना, भाषा का लाक्षणिक प्रयोग, संगीतात्मकता, चित्रात्मकता, प्रकृतिगत् प्रतीकों की प्रचुरता तथा रूढ़ियों का विरोध। भाषा को कोमलता प्रदान करने के लिए निराला ने अंग्रेजी और बांग्ला की पद्धति को अपनाया है। स्वर्णमय, स्वप्निल, छल–छल, कल–कल, छलना, कुहकिनी, आदिक शब्दों की

मधुर–योजना की है तो वहीं दूसरी ओर भाषा में लाक्षणिक प्रयोग भी खूब किया है। निराला की कविता लय, संगीत–मय भाषा का अप्रतिम उदाहरण है। निराला ने कहीं–कहीं शब्दों के बल पर ऐसा भाव चित्र प्रस्तुत किया है कि वर्णनात्मक वस्तु मानों उपस्थित हो गयी हो। कुल मिलाकर हम कह सकते है कि भाषा पर निराला का पूर्ण अधिकार था। चाहे वह सामासिक प्रधान 'राम की शक्ति–पूजा' हो 'तुलसीदास' हो या 'बुद्ध के प्रति' आदि पर लिख रहे हों या सरल व्यवहारिक भाषा में 'वह तोड़ती पत्थर', 'भिक्षुक' इत्यादि कविताएं लिख रहे हों या अलंकृत भाषा के रूप में 'यमुना के प्रति', 'प्रेयसी' जैसी कविताओं को उद्धृत कर रहे हों। भाषा एवं शब्दों की प्रवाहपूर्णता में कहीं कोई अवरोध नहीं दिखता, कहीं–कहीं तो मानो भाषा इनकी चेरी सदृश्य दिखती है।
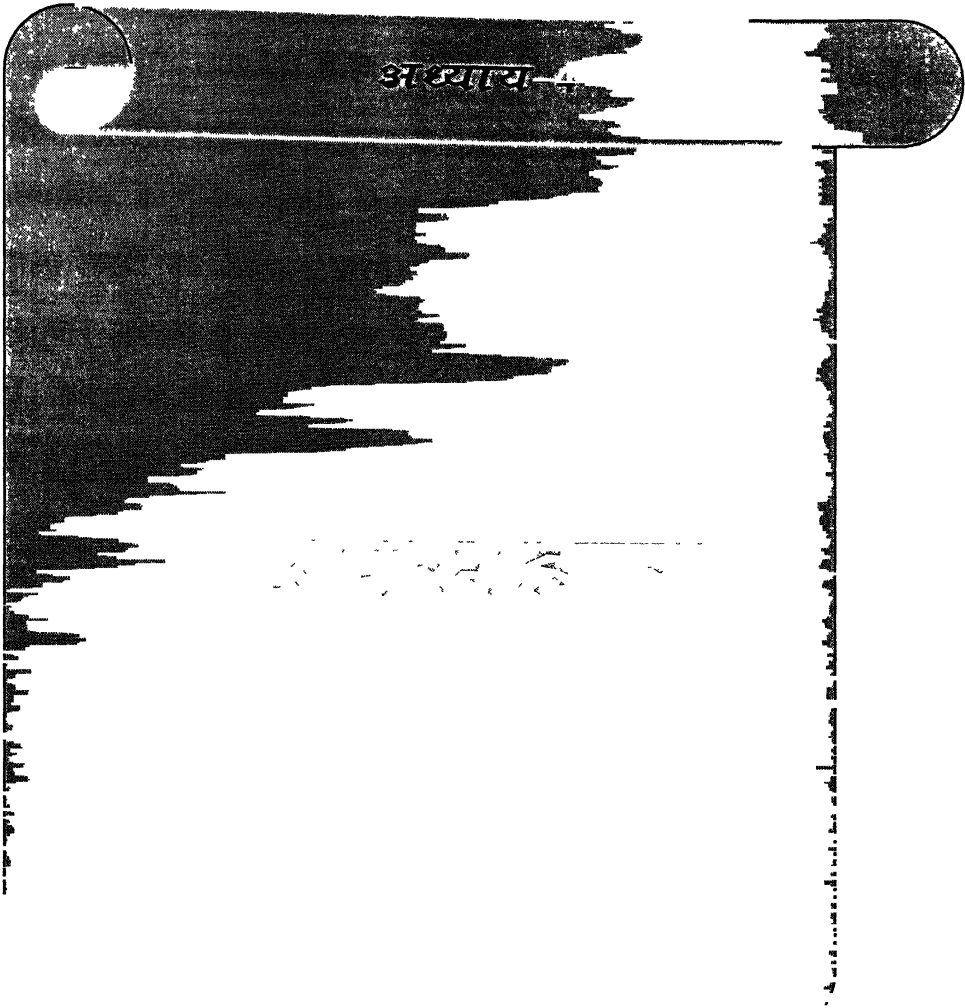
प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में निराला के काव्य में उदात्त– तत्व की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति, विशेषकर लौंजाइनस के उदात्त–तत्व सिद्धान्त के आधार पर, को व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है। यह विश्वास है कि इस दृष्टि से निराला काव्य का अध्ययन करने का यह प्रथम प्रयास है। इस शोध–प्रबन्ध में कुल चार अध्याय हैं, प्रथम अध्याय में उदात्त–प्रकृति और पाश्चात्य विद्वानों के मतों, विशेषकर लौंजाइनस के उदात्त–सिद्धान्त का आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। दूसरे अध्याय में निराला की काव्य–विकास की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति को कमवार प्रस्तुत किया गया है। तीसरे अध्याय में निराला काव्य में उदात्त–तत्व को लौंजाइनस के उदात्त–सिद्धान्त के पॉचों प्रतिमानों पर कमवार साधने का प्रयास किया गया है, और इस चौथे अध्याय में पिछले तीनों अध्यायों का समाहार प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रथम अध्याय में उदात्त–शब्द की व्युत्ति उसका स्वरूप और कोश ग्रन्थों के आधार पर 'उदात्त' शब्द का सामान्य अर्थ तथा उसके अंग्रेजी पर्याय 'सब्लाइम' के अर्थ की विस्तृत विवेचना की गयी है। लौंजाइनस के नाम से जो ग्रन्थ सम्बद्ध है उसका नाम है 'पेरिहुप्सुस' जो 1954 में प्रकाशित हुआ था। यह मूल रूप से यूनानी में लिखी गयी है, उसका अंग्रेजी अनुवाद 'सब्लाइम' के नाम से जाना जाता है तथा जिसका शाब्दिक अर्थ है–'उदात्त'। लौंजाइनस के पहले जिन लोगों ने उदात्त का निरूपण किया था उनमें एक नाम 'केकिलियुस' था किन्तु उनमें लौजाइनस को अनेक त्रुटियॉ परिलक्षित हुई। किन्तु यह भी सच है कि 'पेरिहुप्सुस' की रचना में केकिलियुस का बहुत बड़ा योगदान है 'पेरिहुप्सुस' लगभग साठ पृष्ठों की लघुकृति है जिसमें कुल छोटे–बड़े 44 अध्याय हैं।

लौंजाइनस से पूर्व कवि का मुख्य–कर्म पाठक या श्रोता को आनन्द तथा शिक्षा प्रदान करना तथा गद्य लेखक या वक्ता का मुख्य–कर्म अनुनयन समझा

जाता था। यदि 'होमर' काव्य की सफलता श्रोताओं को मुग्ध करने में मानता था तो एरिस्थोफेनीस कवि का कर्तव्य पाठकों को सुधारना मानता था। इसी प्रकार वक्ता या RHATONICIAN का गुण समझ जाता था– संतुलित भाषा सुव्यवस्थित तर्क द्वारा श्रोता के मस्तिष्क पर इस तरह छा जाना कि वह वक्ता की बात मान ले। इस प्रकार लौंजाइनस से पूर्व साहित्यकार का कर्तव्य–कर्म समझा जाता था शिक्षा देना आह्लाद प्रदान करना और प्रत्यय उत्पन्न करना। लौंजाइनस ने अनुभव किया कि इस सूत्र में कुछ कमी है। क्योंकि काव्य में इन तीनों बातों के अलावा भी कुछ होता है। लौंजाइनस काव्य के लिए भावोत्कर्ष को मूल तत्व, अति आवश्यक तत्व मानता था। उसने निर्णायक रूप से यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि काव्य या साहित्य का परम उद्देश्य चरमोंल्लास प्रदान करना है। पाठक या श्रोता को वेदान्तर–शून्य बनाना है।

यद्यपि लौंजाइनस ने उदात्त की कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी थी लेकिन उसका मानना था कि 'उदात्तता' साहित्य के हर गुण मे महान है उसके अनुसार यही वह गुण है जो अन्य छोटी–छोटी त्रुटियों के बावजूद साहित्य को सच्चे अर्थों में प्रवाहपूर्ण बना देता है। उसने व्यवहारिक और मनौवैज्ञानिक दोनों दृष्टियों से 'उदात्तता' को जॉचा परखा। उसने एक ओर जहॉ उदात्त के बहिरंग तत्व की चर्चा की वहीं दूसरी ओर उसके अन्तरंग तत्वों की ओर भी संकेत किया। उदात्ता के इस विवेचन में उसने पॉच तत्वों को आवश्यक बताया, (1) महान धारणाओं या विचारों की क्षमता (2) भावावेग की तीव्रता (3) समुचित अलंकार योजना (4) उत्कृष्ट भाषा (5) गरिमामय रचना–विधान।

महान धारणाओं या विचारों की क्षमता के संबंध में लौंजाइनस ने कहा कि उस कवि की कृति महान नहीं हो सकती जिसमें धारणाओं की क्षमता नहीं है, उदात्त गुण महान आत्माओं में आश्रय पाता है क्षुद्र विचार वालों में नहीं। धीर–गुरू गंभीर प्रतिभावान व्यक्ति की वाणी से भव्यता का स्फुरण हो सकता है

कवि को महान बनने के लिए अपनी आत्मा में उदात्त विचारों का पोषण करना चाहिए। क्योंकि उदात्त महान आत्माओं की सच्ची प्रतिध्वनि है। जो आजीवन संकीर्ण–विचारों एवं उद्देश्यों से घिरा रहता है, वह स्तुत्य एवं अमर रचना नहीं कर सकता गंभीर विचार वालों के शब्द भी महान होते हैं। विषय के महत्व तथा अनुक्रम की श्रेष्ठता से काव्य में आनन्दातिरेक का तत्व आता है। जिसका तत्काल स्थायी प्रभाव होता है। महान कवियों की कृतियों के परायण से जो संस्कार प्राप्त होते हैं वे निश्चय ही श्रेष्ठ रचना के प्रणयन में सहायक होते हैं।

भावावेग की तीव्रता के संबंध में लौंजाइनस का मत है कि आवेग–उन्माद, उत्साह के उद्दाम वेग से फूट पड़ता है और एक प्रकार से वक्ता के शब्दों को विस्मय से भर देता है उसके यथास्थान व्यक्त होने से स्वर्ण जैसा औदात्य आता है वह अत्यन्त दुर्लभ है। भव्य आवेग के परिणामस्वरूप हमारी आत्मा स्वतः उठकर मानों गर्व से उच्च अकाश में विचरण करने लगती है तथा हर्ष और उल्लास से भर जाती है। वज्रपात का पलक झपकाये बिना सामना संभव है, पर भावावेग के प्रभाव से अविचल–अछूता बना रह पाना सम्भव नहीं। हमारा स्वभाव है कि हम छोटी–छोटी धाराओं की अपेक्षा महासागर से अधिक प्रभावित होते हैं। औदात्य मनुष्य को ईश्वर के ऐश्वर्य के समीप तक ले आता है। उल्लास–आनंद देश–काल–निरपेक्ष होता है जो सदा सबको आनन्दित करता है वही औदात्य आवेग है। विस्मय–विमुग्ध करने वाला चमत्कारी भाव–परिवेश मानव में गरिमा को जन्म देता है। उदात्त उत्कृष्ट वही है, जो पाठक या श्रोता की चेतना को विमुग्ध या अभिभूत करे। आवेग दो प्रकार का बताया गया है– भव्य और निम्न। एक से आत्मा का उत्कर्ष होता है तो दूसरे से अपकर्ष। निम्न आवेग में दया, शोक, भय आदि के भाव आते हैं। उदात्त सृजन में वस्तुतः भव्य आवेग सहायक होता है।

समुचित अंलकार योजना में लौंजाइनस ने मात्र चमत्कार प्रर्दशन के लिए अलंकारों के प्रयोग को सही नहीं माना। उसके अनुसार यह अधिक उपयोगी तब होगा जब अर्थ को उत्कर्ष प्रदान करे और मात्र चमत्कृत न करके पाठक को आनन्द प्रदान करे। अलंकार सर्वाधिक प्रभावशाली तब होता है जब इस बात पर ध्यान ही न जाय कि वह अलंकार है। अयत्नज अलंकार काव्य के प्रभाव को बढाते हैं और ये अलंकार एक प्रकार से काव्यात्मा हैं। प्राकृतिक अभिव्यंजना में अलंकारों का महत्वपूर्ण स्थान है, अतः उन्हें कृत्रिम मानना उचित नहीं है। इनका प्रयोग प्रासंगिक तथा परिस्थिति एवं उद्देश्य के अनुरूप होना चाहिए यदि ऐसा नहीं है तो भव्य से भव्य अलंकार भी कविता–कामिनी का श्रृंगार न बनकर वे उसके लिए बोझ बन जाएगें।

उत्कृष्ट भाषा–प्रयोग के अन्तर्गत् लौंजाइनस ने वर्ण विन्यास–शब्द चयन तथा रूपक आदि के प्रयोग पर बल दिया है उसके अनुसार उदात्त–विचारों की सर्जना में साधारण शब्द–अनुपयोगी हो जाते हैं अतः गरिमामयी भाषा आवश्यक हो जाती है। शब्दों के सौन्दर्य से ही शैली गरिमामयी बनती है। सुन्दर शब्द ही विचारों को अभिनव आलोक प्रदान करती है लौंजानइस के अनुसार भाषा का वैशिष्ट्य और चरमोत्कर्ष ही उदात्त है यही एक मात्र स्रोत है जिससे महान कवियों और इतिहासकारों को जीवन में यश और प्रतिष्ठा मिलती है।

गरिमामयी रचना–विधान में लौंजाइनस ने शब्द–विचार, घटना, कार्य, सौन्दर्य एवं राग आदि के विविध रूपों के सामंजस्य पर बल दिया और उसके अनुसार जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अंगों की सुडौलता समानुपात एवं संतुलन में सौन्दर्य समाहित रहता है उसी प्रकार काव्य के विभिन्न अंगो के औचित्य निर्वाह से वह हृदय मनोरम बन पाता है। कवि को चाहिए कि वह स्थान, रीति, अवसर, एवं उदेश्य के प्रति पूर्ण स्वतन्त्र रहे। गरिमा के सम्पूर्ण तत्वों की संयुति से ही कृति महनीय उदात्त बनती है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के दूसरे अध्याय में निराला के काव्य विकास की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति को उनके प्रकाशन वर्ष के क्रम में रखते हुए उनकी मूल संवेदना पर प्रकाश डाला गया है। निराला की सर्जना का प्रथम सोपान 'अनामिका' से शुरू होता है यद्यपि यह कवि का प्रथम काव्य संकलन था फिर भी अपने समकालीन कवियों की आरम्भिक कविताओं के कच्चेपन की तुलना में 'अनामिका' के कवि की भाषिक सर्जनात्मकता स्पृहणीय है। 'परिमल' कवि की सर्जना का दूसरा सोपान है, जिसमें 'यमुना के प्रति' जैसी लक्षण प्रधान आलंकारकि कविता के साथ–साथ स्वर–विस्तार एवं नाद योजना से युक्त कविताएँ भी हैं। इसी संग्रह में मुक्त–छन्द का उद्घोष करने वाली 'जूही की कली' जैसी कविताऐं भी हैं। कवि का अगला काव्य–संग्रह 'गीतिका' जो 1936 में प्रकाशित हुआ था जिसे हम कविता के औदात्य और संगीत की माधुरी का समन्वय कह सकते हैं। यहां कविता को संगीत से जोड़ने का सफल प्रयास निराला जी ने किया है। संगीत और माधुरी तथा कविता का औदात्य मिलकर यहॉ एक अपूर्व रागात्मकता का सृजन करती हैं, कवि ने 'गीतिका' के गीतों में गंभीर चिन्तन, सांस्कृतिक सन्दर्भों, विविध प्रणय–स्थितियों को अनुस्यूत करने की सफल चेष्टा की है। संगीतात्मकता को केन्द्र में रखकर रचे गए इन गीतों में कविता के अनुभव को और कविता के रचना–प्रकिया को आश्रत रखने की सजगता है।

अनामिका के द्वितीय संस्करण में कवि के परिवर्तित मनः स्थिति का पता चलता है इस संकलन में तत्सम् शब्दावली पर आधारित भाषिक सर्जनात्मकता के प्रति कवि का झुकाव और आत्म–विश्वास अधिक मुखारित हुआ है। 'प्रेयसी' और 'रेखा' जैसी लम्बी प्रणय कविताओं के साथ–साथ 'राम की शक्ति पूजा' और 'सरोज–स्मृति' जैसी क्लैसिकल और यथार्थ–परक शिल्प की दोहरे रचना–विधान की भाषिक संरचना से युक्त कविता भी है। 'राम की शक्ति–पूजा'

न केवल छायावादी रचनाओं में बल्कि पूरे हिन्दी साहित्य में एक मील का पत्थर साबित हुई। 'राम की शक्ति पूजा' जिसका लम्बा सुगठित रचना–विधान खड़ी बोली पर आधारित काव्य भाषा की अभूतपूर्ण–व्यंजना क्षमता का उद्घाटन करती है, यह शुद्ध सामासिक शैली में लिखी गयी है। इसी संकलन में 'ठूॅठ' जैसी कविता भी है जो अपने रचना विधान में बेजोड़ है। कवि ने 'ठूँठ' जैसी मामूली वस्तु को प्रतीक के रूप में ग्रहण करके उसके माध्यम से जीवन की उदासी और श्रीहीनता की गहरी व्यंजना विकासित की है। इसके बाद 'तुलसीदास' और 'कुकुरमुत्ता' जैसी दो प्रबन्धात्मक कृतियाँ प्रकाश में आयीं। एक में कवि ने छन्द की मौलिक प्रकृति और दूसरे में मुक्तक का प्रयोग किया है। 'तुलसीदास' में निराला ने भाषागत् अभिजात्य का प्रयोग किया है। यहॉ कवि ने संस्कृति के कोशवाची शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से कवि ने एकदम साधारण ग्रामीण और कठोर शब्दों का भरा–पूरा आत्म–विश्वासी व्यक्तित्व सिरजा है और इस परम्परित धारणा को निर्मूल कर दिया है कि कविता की रचना के लिए संस्कारशील शब्द ही उपयुक्त होते हैं। यहाँ कवि ने उर्दू शब्दों और एकदम ग्रामीण शब्दों की ठेंठ मुहावरेदानी की सर्वथा नवीन क्षमता मुखरित की है। इन दोनों प्रबन्धात्मक कृतियों के बाद कवि का जो नया काव्य संग्रह प्रकाश में आया वह 'अणिमा' था। इसके बाद 'बेला', 'नये पत्ते', 'अर्चना', 'आराधना', 'गीत–गुंज' और 'सान्ध्यकाकली' जैसे काव्य–संग्रह प्रकाश में आए। 'नये–पत्ते' को सपाट–बयानी के नाते, और 'बेला' को कवि के भाषिक प्रयोग के नाते विशिष्ट प्रसिद्धि मिली। 'बेला' में कवि ने उर्दू गजलों से प्रभावित होकर उन्हे हिन्दी गीतों में ढ़ालने की साहसिक कोशिश की है ।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि निराला के काव्य में क्या नहीं है। साहित्य और संगीत का पूर्ण–संगम, भाषा की ओजस्विता, वीरत्व की भावना मानवीयकरण, मानव मूल्यों का उदात्तीकरण अर्थात् सब कुछ तो है। निराला

जैसा महान कवि युग–युगान्तर में ही पैदा होता है। जो धरती के दुःख दर्द को पहचानता है और अपने को स्थूल से सूक्ष्म बना लेता है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में निराला के काव्य का लौंजाइनस के उदात्त–सिद्धान्त के आधार पर आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। लौंजाइनस के औदात्य सिद्धान्त के पॉचों प्रतिमानों को निराला काव्य में ढूँढ़ने का सफल प्रयास किया गया है। यद्यपि इस शोध–प्रबन्ध में निराला काव्य के केवल एक पक्ष अर्थात् निराला काव्य के औदात्य तत्व पर ही विचार किया गया है। किन्तु औदात्य की प्रकृति और निराला के काव्य विकास को भी इस शोध–प्रबन्ध में निरूपित किया गया है। ताकि पूरे शोध प्रबन्ध का एक कम बना रहे और निराला का पूरा का पूरा काव्य औदात्य की दृष्टि से सामने आ जाय।
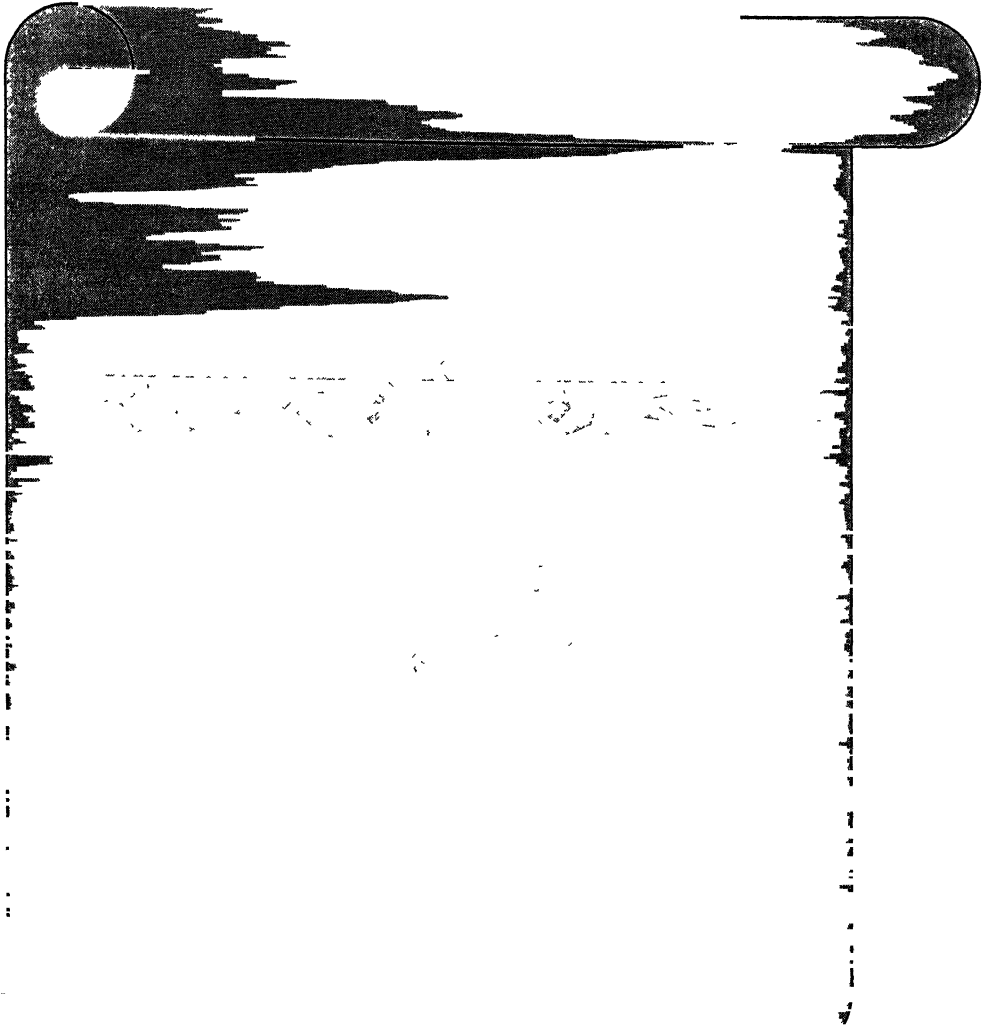
1. पाश्चात्य काव्य–शास्त्रः देवेन्द्र नाथ शर्मा–मयूर पेपर वैक्स, नोयडा, छँठा संस्करण–2000
2. पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धान्तः डॉ0 शान्ति स्वरूप गुप्त– अशोक प्रकाशन दिल्ली–1994।
3. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य–सिद्धान्तः डॉ0 गणपति चन्द गुप्त– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1989।
4. भारतीय काव्य शास्त्रः डॉ0 निशा अग्रवाल– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद 1996।
5. काव्य शास्त्रः डॉ0 भगीरथ मिश्र– विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी–1975
6. रस अलंकार और छन्दः– डॉ0 जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, प्रो0 हरेन्द्र प्रताप सिन्हा– कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद।
7. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्रः–डॉ0 कृण्ण देव शर्मा– विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1990।
8. साधारणी करण और सौन्दर्यानुभूतिः डॉ0 प्रेम कान्त टण्डन– लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
9. काव्य मे उदात्त–तत्वः डॉ0 नगेन्द्र
10. काव्य में सौन्दर्य और उदात्त तत्वः शिव बालक राय
11. उदात्त भावना एक विशलेषणः डॉ0 प्रेम–सागर
12. पाश्चात्य काव्य–शास्त्र की परम्पराः डॉ0 नगेन्द्र
13. हिन्दी काव्य–शास्त्र का इतिहासः डॉ0 भगीरथ मिश्र
14. नाम–पथः निराला जन्म शताव्दी अंक 1996।
15. हिन्दी साहित्य का इतिहासः आर्चाय रामचन्द्र शुक्ल–नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सम्वत् 2049।

16. निराला परिसंवादः सं0 प्रो0 मीरा श्रीवास्तव–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद।
17. कवि निरालाः आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद– 1997।
18. निरालाः सं डॉ विश्वनाथ तिवारी– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद।
19. निराला आत्महन्ता आस्थाः दूधनाथ सिंह– लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
20. निराला की कविताएँ और काव्य भाषाः रेखा खरे– लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
21. निराला का गीत काव्यः डॉ0 सन्ध्या सिंह– लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
22. काव्य का देवताः निरालाः विश्वम्भर 'मानव' –लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
23. प्रसाद–निराला–अज्ञेयः प्रो0 रामस्वरूप चतुर्वेदी–लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
24. निराला (मूल्यांकन): डॉ0 इन्द्र नाथ मदान– लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
25. क्रान्तिकारी कवि निरालाः डॉ0 बच्चन सिंह–विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी–1992
26. सम्मेलन पत्रिका (निराला जन्मशताब्दी अंक): हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग–भाग–82, शक् 1919
27. राम की शक्ति–पूजाः(निराला की कालजयी कृति):– डॉ0, नगेन्द्र–नेशनल पब्लिसिंग हाऊस नई–दिल्ली 1999
28. निराला रचनावली (भाग–एक) नन्द किशोर नवल

29. निराला रचनावली (भाग–दो) नन्द किशोर नवल

30. निरालाः डॉ0 रामविलास शर्मा–राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली 1996

31. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकासः प्रो0 रामस्वरूप चतुर्वेदी लोकभारती प्रकाशन–1993

32. निराला और अपराः डॉ0 राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, विनोद, पुस्तक मन्दिर, आगरा सम्बत्– 2028

33. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहासः डॉ0 बच्चन सिंह लोकभारती प्रकाशन–1999, इलाहाबाद।

34. अनामिका (प्रथम): सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

35. परिमलः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

36. गीतिकाः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

37. अनामिका (द्वितीय): सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

38. तुलसीदासः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

39. कुकुरमुत्ताः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

40. अणिमा : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

41. बेलाः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

42. नये–पत्ते:: सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

43. अर्चनाः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

44. आराधनाः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

45. गीत–कुंजः सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

46. सान्ध्य काकली 'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला'